THE BOOK WAS DRENCHED

DAMAGE BOOK

UNIVERSAL LIBRARY
OU_180847
UNIVERSAL LIBRARY

संक्षिप्त पद्मावत

अर्थात्

मलिक मुहम्मद जायसीकृत पदमावत
काव्य का संक्षिप्त संस्करण

संकलनकर्ता और संपादक

श्यामसुंदरदास, बी० ए०

और

सत्यजीवन वर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९५०

सर्वोदय साहित्य मंदिर,
...करण] कोठी, (बसस्टेण्ड,) हैदराबाद द. [मूल्य २॥)

प्रकाशक
के. मित्रा
इंडियन प्रेस, लिमिटेड,
इलाहाबाद ।

मुद्रक
श्री अमलकुमार
इंडियन प्रेस, लि
बनारस ब्रांच ।

आख्यानों की रचना बहुत पहले ही आरंभ हो चुकी थी जैसा कि अन्य देशों में देखा जाता है। आख्यान पहले-पहल प्रचलित दंत-कथाओं के आधार पर खड़ा होता है। ये दंत-कथाएँ कुछ अंशों में ऐतिहासिक और कुछ अंशों में कल्पित होती हैं। पीछे साहित्य की परिपक्वता के साथ साथ उत्साही कविगण उनके आधार पर सुंदर आख्यानों की रचना कर डालते हैं। हिंदी-साहित्य का जन्म ऐसी परिस्थितियों में हुआ जिनमें वीर-गाथाओं को छोड़ आख्यान आदि विषयों की ओर उसे झुकने का अवसर कम मिला, फिर भी यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि विक्रमीय १४वीं शताब्दी में कुछ छोटे-मोटे आख्यानों का प्रचार अवश्य था। १५वीं शताब्दी के साहित्य को हम ऐसी प्रौढ़ावस्था में पाते हैं जिससे इस अनुमान की पुष्टि होती है कि इसके बहुत पूर्व ही साहित्य में अच्छे अच्छे आख्यानों की रचना होने लगी थी पर दुर्भाग्यवश उनका लोप हो गया है। अभी तक जो कुछ पता चला है उससे आख्यानक काव्यों की शृङ्खला वि० १५ वीं शताब्दी से २० वीं शताब्दी तक निरंतर चली जाती है।

आख्यान लिखनेवाले कवि हिन्दू और मुसलमान दोनों थे पर इन दोनों के ग्रंथों में शैली, उद्देश आदि सभी बातों में अंतर है। इसके अधार पर हिंदी-साहित्य के आख्यान-लेखकों को दो संप्रदायों में विभक्त कर सकते हैं—हिंदू और मुसलमान संप्रदाय। हिंदू और मुसलमान आख्यान-लेखकों में सबसे भारी

अंतर तो यह है कि एक का उद्देश काव्यों द्वारा केवल मनोरंजन था, दूसरे का अपने मत तथा धार्मिक विचारों का प्रचार करना। मुसलमान लेखक प्राय: सूफी मत के अनुयायी थे जिनका उद्देश था मनोरंजक प्रेमगाथाओं द्वारा अपने उदार आध्यात्मिक भावों को हिंदू जनता के कानों तक पहुँचाना। उनकी कहानियाँ सब प्रकार से हिंदू थीं पर यदि अंतर था तो उनकी प्रेमभावना में जो उनके धर्म की विशेषता थी।

हिंदू और मुसलमान लेखकों में समानता केवल भाषा की थी। दोनों हिंदी भाषा का प्रयोग करते थे पर एक साहित्यिक भाषा अपने काव्य में लिखता था, दूसरा प्रचलित अपरिमार्जित भाषा को लेकर अपने उद्देश को पूर्ण करता था। हिंदू लेखक बहुछंदप्रिय थे। उन्हें छंद:शास्त्र का पूर्ण ज्ञान था। मुसलमान लेखक, अपनी विवशता के कारण, केवल दोहे चौपाई का प्रयोग करते थे। उनका उद्देश था जनता के कानों में अपने भावों को भली भाँति पहुँचाना। अत: उन्होंने जनता में प्रचलित भाषा और सरल छंदों का उपयोग किया। एक का उद्देश था काव्यकला दिखाते हुए मनोरंजन करना, दूसरे का उद्देश था मनोरंजन करते हुए अपने भावों को पाठकों के हृदय में बैठाना। एक ऊपरी तड़क-भड़क में रह गया, दूसरा अपने उद्देश में सफल हुआ या नहीं पर उसने अपने नि:स्वार्थ, सरल प्रयत्न से जनता में प्रसिद्ध पाई और वह साहित्य में अमर हो गया।

आख्यानों की रचना बहुत पहले ही आरंभ हो चुकी थी जैसा कि अन्य देशों में देखा जाता है। आख्यान पहले-पहल प्रचलित दंत-कथाओं के आधार पर खड़ा होता है। ये दंत-कथाएँ कुछ अंशों में ऐतिहासिक और कुछ अंशों में कल्पित होती हैं। पीछे साहित्य की परिपक्वता के साथ साथ उत्साही कविगण उनके आधार पर सुंदर आख्यानों की रचना कर डालते हैं। हिंदी-साहित्य का जन्म ऐसी परिस्थितियों में हुआ जिनमें वीर-गाथाओं को छोड़ आख्यान आदि विषयों की ओर उसे झुकने का अवसर कम मिला, फिर भी यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि विक्रमीय १४वीं शताब्दी में कुछ छोटे-मोटे आख्यानों का प्रचार अवश्य था। १५वीं शताब्दी के साहित्य को हम ऐसी प्रौढ़ावस्था में पाते हैं जिससे इस अनुमान की पुष्टि होती है कि इसके बहुत पूर्व ही साहित्य में अच्छे अच्छे आख्यानों की रचना होने लगी थी पर दुर्भाग्यवश उनका लोप हो गया है। अभी तक जो कुछ पता चला है उससे आख्यानक काव्यों की शृङ्खला वि० १५ वीं शताब्दी से २० वीं शताब्दी तक निरंतर चली जाती है।

आख्यान लिखनेवाले कवि हिन्दू और मुसलमान दोनों थे पर इन दोनों के ग्रंथों में शैली, उद्देश आदि सभी बातों में अंतर हैं। इसके अधार पर हिंदी-साहित्य के आख्यान-लेखकों को दो संप्रदायों में विभक्त कर सकते हैं—हिंदू और मुसलमान संप्रदाय। हिंदू और मुसलमान आख्यान-लेखकों में सबसे भारी

अंतर तो यह है कि एक का उद्देश काव्यों द्वारा केवल मनोरंजन था, दूसरे का अपने मत तथा धार्मिक विचारों का प्रचार करना। मुसलमान लेखक प्रायः सूफी मत के अनुयायी थे जिनका उद्देश था मनोरंजक प्रेमगाथाओं द्वारा अपने उदार आध्यात्मिक भावों को हिंदू जनता के कानों तक पहुँचाना। उनकी कहानियाँ सब प्रकार से हिंदू थीं पर यदि अंतर था तो उनकी प्रेमभावना में जो उनके धर्म की विशेषता थी।

हिंदू और मुसलमान लेखकों में समानता केवल भाषा की थी। दोनों हिंदी भाषा का प्रयोग करते थे पर एक साहित्यिक भाषा अपने काव्य में लिखता था, दूसरा प्रचलित अपरिमार्जित भाषा को लेकर अपने उद्देश को पूर्ण करता था। हिंदू लेखक बहुछंदप्रिय थे। उन्हें छंदःशास्त्र का पूर्ण ज्ञान था। मुसलमान लेखक, अपनी विवशता के कारण, केवल दोहे चौपाई का प्रयोग करते थे। उनका उद्देश था जनता के कानों में अपने भावों को भली भाँति पहुँचाना। अतः उन्होंने जनता में प्रचलित भाषा और सरल छंदों का उपयोग किया। एक का उद्देश था काव्यकला दिखाते हुए मनोरंजन करना, दूसरे का उद्देश था मनोरंजन करते हुए अपने भावों को पाठकों के हृदय में बैठाना। एक ऊपरी तड़क-भड़क में रह गया, दूसरा अपने उद्देश में सफल हुआ या नहीं पर उसने अपने निःस्वार्थ, सरल प्रयत्न से जनता में प्रसिद्ध पाई और वह साहित्य में अमर हो गया।

उन्होंने यदि कुछ लिखा तो वह अपने धार्मिक भावों को प्रबल करने या उसकी संरक्षा करने के लिये। ऐसे समय में कुछ काव्य ऐसे लिखे गए जिन्हें महाकाव्य कह सकते हैं। उनके नायक हमारे 'राम' हैं। इसके पीछे विलासिता ने आ घेरा—कविगण समस्या-पूर्ति, नायिकाभेद और शृंगार की ओर झुके। वे करते ही क्या! जनता की रुचि-ही ऐसी हो गई। उनके अभिभावकों को इसकी आवश्यकता थी। इस 'वाह' 'वाह' की शायरी के जमाने में भला कोई महाकाव्य रचने की धीरता रख सकता था! हाँ, अब परिस्थितियाँ अनुकूल हैं। संभव है, कविगण महा काव्य लिखने की ओर प्रवृत्त हों।

इसमें संदेह नहीं कि मुसलमान लेखकों ने हिंदी-साहित्य में आख्यान-काव्यों के लिखने में सफलता पाई; उनमें कवि मलिक मुहम्मद सर्वश्रेष्ठ माने जा सकते हैं। जायसी के पूर्व के दो कवियों के ग्रंथों का पता चला है स्वयं जायसी के लिखने से ज्ञात होता है कि उनसे पूर्व आख्यानों का प्रचार था। जायसी अपनी पदमावत में लिखते हैं—

बिक्रम धँसा प्रेम के बारा। सपनावति कहँ गयउ पतारा।
मधूपाछ मुगुधावति लागी। गगनपूर होइगा बैरागी।
राजकुँवर कंचनपुर गयउ। मिरगावति कहँ जोगी भयउ।
साधा कुँवर मनोहर जोगू। मधुमालति कहँ कीन्ह बियोगू।
प्रेमावति कहँ सुरसरि साधा। ऊषा लगि अनिरुध बर बाँधा!

इससे स्पष्ट है कि जायसी के पूर्व स्वप्नावति, मुगधावति, मिरगा-वति, मधुमालति और प्रेमावति इन पाँच आख्यानों का प्रचार

हिंदी-साहित्य में था। इन उल्लिखित आख्यानों में मृगावती और मधुमालती तो काव्य-रूप में हस्तगत हुई हैं; शेष का अब तक पता नहीं चला। संभव है, आगे चलकर इनका भी पता चल जाय। जायसी के पश्चात् आलम, उसमान, शेख नबी, कासिम, नूरमोहम्मद, फाजिल शाह आदि अनेक कवि हुए हैं जिनके आख्यान-ग्रंथ पद्मावत ही के ढंग के हैं। उसमान-कृत 'चित्रावली' तथा नूरमोहम्मद-कृत 'इंद्रावती' काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं।

जायसी

पद्मावत के लेखक मलिक मुहम्मद जायसी अवध के रहने-वाले थे। उनके जन्म आदि के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं। कवि के कथन से पता चलता है कि ये जायस में आकर बस गये थे।

जायस नगर धरम-अस्थानू। तहाँ आइ कबि कीन्ह बखानू।

एक जनश्रुति से पता चलता है कि ये गाजीपुर के किसी दरिद्र मुसलमान के पुत्र थे। बचपन में इन्हें चेचक निकली जिससे इनके बचने की आशा नहीं रही। इनकी माताने मकनपुर के मदार-शाह की मनौती मानी। कहते हैं, जायसी की जान तो बच गई पर इनकी एक आँख जाती रही। ये कुरूप भी हो गए। मनौती होने के पूर्व ही इनकी माता चल बसीं। पिता पहले ही मर चुके थे। ये अनाथ होकर साधुओं के साथ रहने लगे। कवि ने अपनी आँख फूटने का उल्लेख पद्मावत में किया है—"एक नयन कवि मुहमद गुनी।" इनकी बाईं आँख फूटी

थी। आप लिखते हैं—"मुहमद बाईं दिसि तजा एक सरवन, एक आँख।" इससे तो यह भी पता चलता है कि इनका एक कान भी बहरा हो गया था। कवि मलिक मुहम्मद निजामुद्दीन औलिया की शिष्य-परंपरा में थे। आपने अपनी गुरु-परंपरा का वर्णन पदमावत में यों किया है—

सैयद अशरफ
|
शेख हाजी
|
शेख मुबारक

शेख कमाल
|
सैयद राजी (सैयद राजे)
|
शेख दानियाल
|
सैयद मोहम्मद
|
शेख अलहदाद
|
शेख बुरहान
|
शेख मोहिदी (मुहीउद्दीन)
|
मलिक मोहम्मद जायसी

मुसलमानों में प्रचलित गुरु-परंपरा के अनुसार जायसी की दी हुई परंपरा में अंतर पड़ता है। उनके अनुसार सैयद राजे, शेख कुतुब आलम और शेख हशामुद्दीन के पश्चात् हुए हैं। शेख आलम और सैयद अशरफ शेख अलाउल हक के चेले थे।

कहते हैं कि जायसी सिद्ध फकीर थे। इनकी प्रशंसा सुनकर अमेठी के राजा ने इन्हें अपने यहाँ बुलाया और रखा। इन्हीं के आशीर्वाद से अमेठी के राजा के पुत्र भी हुआ। तभी से राजा इनका अनन्य भक्त हो गया। मरने पर इनकी कब्र उसी राजा के कोट के सामने बनी जो अभी तक वर्तमान है। कहते हैं कि एक बार किसी राजा ने इन्हें न पहचानकर इनकी कुरूपता की हँसी उड़ाई थी, तब इन्होंने उत्तर दिया था "मोहि कहँ हँससि कि कोहरहि" अर्थात् मुझे हंसता है कि कुम्हार या बनानेवाले ईश्वर को? इस पर वह बड़ा लज्जित हुआ और उसने इनसे क्षमा माँगी।

जायसी ने अपने ग्रन्थ में अपने चार मित्रों का उल्लेख किया है—यूसुफ मलिक, सलार कादिम, सलोने मियाँ और बड़े शेख। यूसुफ मलिक और सलोने मियाँ गाजीपुर और भोजपुर के शासक महाराज जगतदेव (सं० १५८४) के आश्रित थे।

जायसी की जानकारी

डाक्टर ग्रियर्सन का कथन है कि जायसी ने जायस में आकर स्थानीय पंडितों से संस्कृत-काव्य रीति का अध्ययन किया था। यह सर्वथा अमाननीय है। जायसी की भाषा से यह बात कभी नहीं झलकती कि ये संस्कृत अच्छी तरह जानते थे। प्रायः इनकी भाषा में तत्सम शब्दों का व्यवहार ही नहीं है। इन्होंने चंद्र को स्त्री माना है जो संस्कृत जाननेवाला पंडित

कभी न करेगा। जायसी का शब्द-भांडार भी परिमित है, संस्कृत जाननेवाले कवि को कभी शब्दों की कमी न होगी। जायसी को यद्यपि संस्कृत रीति-ग्रंथों तथा काव्यों का पूर्ण ज्ञान न था पर वे खूब घूमे फिरे थे। सत्संग से उन्होंने अपना ज्ञानभांडार भली भाँति बढ़ा लिया था। वे बहुश्रुत भी थे। भाषा-काव्य-परंपरा का ज्ञान उन्होंने अवश्य किसी भाषा-कवि से प्राप्त किया था, पर उनकी जानकारी परिपक्व नहीं कही जा सकती। छंदः-शास्त्र, नख-शिख आदि का इन्हें परंपरागत साधारण ज्ञान था। छंदःशास्त्र का ज्ञान तो इसी से स्पष्ट है कि इन्होंने दोहे-चौपाई जैसे सरल छंदों का व्यवहार पदमावत में किया है। हो सकता है कि इसका कारण मसनवी (छंद विशेष) की परंपरा भी हो। इसमें संदेह नहीं कि अवधी भाषा में ये दोनों छंद मँजे हुए हैं और इन्हीं में वह अच्छी भी लगती है, पर ऐसे सरल छंदों को रचने में भी जायसी ने अनेक स्थलों पर भूलें की हैं। दोहे और चौपाइयों में हमें अनेक स्थानों पर मात्रा की न्यूनाधिकता दिखाई पड़ती है।

जायसी मुसलमान थे तो भी इन्होंने अपने काव्य में स्थान स्थान पर हिंदू पौराणिक कथाओं का परिचय दिया है। इससे पता चलता है कि हिंदू पौराणिक वृत्तों का इन्होंने सत्संग से अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था पर यह ज्ञान पक्का न था। इन्होंने अनेक स्थानों पर भूलें की हैं यथा—'कैलास' शब्द का प्रयोग इन्होंने स्वर्ग के अर्थ में किया है। इंद्र का

स्थान स्वर्ग है, कैलास नहीं। मानसरोवर हिंदुओं के अनुसार उत्तर में है। पर इन्होंने उसे सिंघल द्वीप के निकट माना है। सात समुद्रों के नाम भी इन्हें भली भाँति ज्ञात न थे, क्योंकि इनके गिनाए हुए नामों में किलकिला और मानसर पुराणों के अनुसार नहीं हैं। ये रामायण और महाभारत के पात्रों के गुण, शील और कृतियों से भली भाँति परिचित थे। यह समय का प्रभाव था, क्योंकि माध्यमिक काल से उत्तरीय भारत में राम-कृष्ण की कथा तीव्र गति से फैल रही थी। लोग महाभारत और रामायण का अध्ययन धर्म-ग्रन्थों की भाँति करते थे। इन्होंने अवश्य अनेक बार उनकी कथा सुनी होगी।

जायसी को भारतवर्ष के भिन्न भिन्न स्थानों का अच्छा ज्ञान था। पद्मावत में कई स्थलों पर इसका परिचय मिलता है। उदाहरणार्थ रतनसेन की सिंघल-यात्रा के वर्णन में जायसी का वर्णन भौगोलिक दृष्टि से ठीक जान पड़ता है। ज्योतिष का ज्ञान भी जायसी को अच्छा था। मुसलमान तो आप थे ही। मुसलमानी धर्मग्रंथ कुरान का इन्हें पूर्ण ज्ञान रहा होगा। पद्मावत में स्थल स्थल पर हमें ऐसे भाव मिलते हैं जिन्हें हम कुरान की आयतों से मिला सकते हैं। मुसलमानी धर्म की अनेक बातों का भी समावेश पद्मावत में कहीं कहीं हुआ है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि कवि मलिक मोहम्मद जायसी यद्यपि बहुत पढ़े-लिखे न थे पर उनकी जानकारी

अनेक विषयों में अच्छी थी। जायसी भावुक थे, बहुश्रुत थे और सच्चे कवि थे। इन्हे 'पेम की पीर' ने पदमावत जैसे सुंदर ग्रंथ को रचने के लिए प्रेरित किया था।

पदमावत का निर्माणकाल

पदमावत के निर्माणकाल में अभी वड़ा झगड़ा है। मिश्र-बंधुओं ने पदमावत का निर्माणकाल हिजरी सन् ९२७ माना है। इस हिसाव से जायसी ने संवत् १५७५ में ग्रंथ आरंभ किया। अनेक पोथियों में निर्माणकाल हिजरी ९२७ ही मिलता है। पर नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण में जायसी ने निर्माणकाल यों दिया है—

सन नव सै सैंतालिस अहा। कथा आरंभ बैन कवि कहा॥

इससे जायसी ने पदमावत का आरंभ हि० सन् ९४७ में किया अर्थात् संवत् १५९७ में। यह काल युक्तिसंगत भी जान पड़ता है क्योंकि जायसी ने पदमावत में शेरशाह सूर की प्रशंसा की है जो उस समय दिल्ली का सुलतान था। मुसलमान आख्यान-लेखक तत्कालीन शासक की प्रशंसा करते थे। अतः यदि शेरशाह सूर को तत्कालीन शासक मानें तो हिजरी सन् ९२७ को पदमावत का निर्माणकाल नहीं मान सकते। उस समय दिल्ली के तख्त पर इब्राहीम लोदी वर्तमान था।

'पदमावत' अपने समय में बहुत प्रचलित और लोकप्रिय ग्रंथ हुआ। इसका अनुवाद बँगला में भी हुआ। अराकान

राज्य के वजीर मगन ठाकुर को पदमावत बहुत प्रिय थी। इन्होंने अपने आश्रित एक 'आलोउजालो' नामक कवि से पदमावत का अनुवाद बँगला में कराया। अनुवाद बहुत ही उत्तम हुआ है। इस अनुवाद की हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं जिनमें पदमावत का निर्माणकाल यों मिलता है—

"शेख महम्मद जति, जखन रचित ग्रंथि
संख्या सप्तत्रिंश नव शत।"

इसका अर्थ होगा कि शेख मोहम्मद ने जब ग्रंथ की रचना की उस समय सन् था "नौ सै सत्ताईस"। यह अनुवाद संवत् १७०० के लगभग हुआ था। अब यह विचारणीय है कि जायसी ने पदमावत की रचना कब की। इसके समाधान में दो बातें कही जा सकती हैं—

(१) या तो कवि ने—जैसा कि मिश्रबन्धु कहते हैं—ग्रंथ (पदमावत) का आरंभ हिजरी सन् ९२७ में किया जिस समय इब्राहीम लोदी शासन करता था पर शेरशाह सूर के सुलतान होने पर उन्होंने वंदना बनाई।

(२) पदमावत की प्रतियाँ अधिकतर उर्दू लिपि में मिलती है। संभव है, और अधिक संभव है, कि जायसी ने स्वयं उसे उर्दू लिपि में लिखा हो। उर्दू में 'सत्ताईस' और 'सैंतालीस' लिखने पर उनमें अधिक अंतर नहीं होता। थोड़े से भ्रम में सैंतालीस का सत्ताईस पढ़ा जा सकता है। उर्दू लिपि की यह कठिनाई जगत्प्रसिद्ध है। कितनी वार लोगों ने

कुछ का कुछ पढ़ लिया है। लायलपुर (पंजाब) के पते से भेजी हुई एक रजिस्टरी के मिर्जापुर में डेलिवर हो जाने का उल्लेख स्वर्गीय बाबू जगन्मोहन वर्म्मा ने चित्रावली की भूमिका में भी किया है। अतः यह नितांत अमाननीय नहीं कि जायसी ने पदमावत में निर्माणकाल ९४७ ही लिखा हो पर उर्दू लिपि में लिखने के कारण कुछ लोगों ने उसे ९२७ पढ़ा हो और कुछ लोगों ने ९४७।

पदमावत की कथा

सिंघल अति सुंदर द्वीप है। अन्य द्वीपों से उसकी सुंदरता बढ़-चढ़कर है। यहाँ का राजा गंधर्वसेन है। उसका प्रताप चारों ओर फैला है। उसके पास असंख्य सेना है। उसकी रानी चम्पावती को पदमावती नाम की अपूर्व सुंदरी कन्या उत्पन्न हुई। उसने एक हीरामन नामक सूआ पाल रखा था। हीरामन बड़ा बुद्धिमान् था। युवावस्था प्राप्त होने पर भी पदमावती का पिता उसके विवाह की कोई परवा नहीं करता था। एक दिन पदमावती ने अपने प्रिय शुक से अपनी मनोव्यथा कही। उसने कहा—"प्रिय शुक, मुझे दिन पर दिन मदन सता रहा है, पर मेरे पिता मेरे विवाह का कोई आयोजन नहीं करते।" शुक ने उत्तर दिया—"जो भाग्य में लिखा है वही होगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं जाकर देश-विदेश में आपके लिये कोई वर खोजूँ।" उन दोनों की बातचीत कोई सुन रहा था। उसने जाकर राजा से चुगली खाई। इस पर

राजा ने क्रुद्ध होकर शुक को मार डालने की आज्ञा दी पद-मावती ने बड़ी विनती और युक्ति से उसकी जान बचाई। एक दिन वह अपनी सखियों के साथ मानसरोवर में नहाने गई। इसी बीच शुक के पिंजरे को बिल्ली ने आ घेरा। वह अवसर पाकर अपनी जान बचाकर वन की ओर उड़ गया। वहाँ वह एक चिड़ीमार के जाल में पड़ गया। वह उसे लेकर चला। पद्मावती को जब शुक के उड़ जाने का समाचार मिला तब वह अत्यंत दुखी हुई। उसने बड़ा शोक मनाया। शुक को लेकर बहेलिया सिंघल द्वीप की हाट में बेचने चला। वहाँ चित्तौरगढ़ का एक ब्राह्मण भी कुछ व्यापार करने की अभिलाषा से आया था। उसने उस शुक को मोल लिया और वह घर की ओर लौट पड़ा। जब वह चित्तौर पहुँचा तब शुक के गुणों की चर्चा चारों ओर फैलने लगी, फैलते-फैलते राजा के कानों तक जा पहुँची।

चित्तौरगढ़ का राजा रतनसेन था। उसने जब शुक के गुणों का वर्णन सुना तब उसने ब्राह्मण को बुलाया और शुक को मुँह माँगे मूल्य पर मोल लिया। वह उसे बड़े प्रेम से अपने यहाँ रखने लगा। उसकी रानी नागमती बड़ी सुंदरी थी। एक दिन नागमती राजा की अनुपस्थिति में शृंगार करके शुक के समीप आई और पूछने लगी—"क्यों शुक, मेरे जैसा रूप तुमने कहीं देखा है?" हीरामन शुक पद्मावती का ध्यान करके हँस पड़ा और कहने लगा—"सिंघल की नारियों

की क्या बात पूछती हो? उनकी बराबरी संसार में कोई नहीं कर सकता।" यह सुनकर नागमती बड़ी रुष्ट हुई। उसने शुक को मार डालने की आज्ञा दी। धाय ने शुक को छिपाकर रानी से कहा कि वह मार डाला गया।

राजा रतनसेन जब आखेट से लौटा तो उसने शुक की खोज की। उसने नागमती से कहा—"या तो शुक को ला या स्वयं अपनी जान दे।" नागमती बड़े संकट में पड़ी। अन्त में धाय ने शुक ला दिया तब राजा प्रसन्न हुआ। शुक के मिलने पर राजा ने उससे सच्ची बात पूछी। उसने पद्मावती के रूप-गुण की चर्चा की। वह उस पर मुग्ध हो गया। लोगों के लाख समझाने पर भी उसने निश्चय किया कि पद्मावती को अवश्य अपनाऊँगा। वह योगी होकर, अपने साथियों को ले, शुक को आगे कर, सिंघल द्वीप की ओर चल पड़ा। मार्ग में अनेक कष्टों को झेलकर वह समुद्र-तट पर पहुँचा और 'गजपति' की सहायता से उसने बोहित लेकर समुद्र पार करने का निश्चय किया। क्षार, खीर, दधि, उदधि, सुरा किलकिला और मानसरोवर आदि सात समुद्रों को पार करता हुआ वह सिंघल द्वीप में पहुँचा। वहाँ पर महादेव का एक मन्दिर था, जहाँ रतनसेन अपने साथियों के साथ बैठकर तप करने लगा। शुक को उसने पद्मावती के पास भेज दिया। शुक ने जाते समय राजा से कहा कि वसंत पंचमी को पद्मावती यहाँ पूजा करने आवेगी तब आपसे भेंट होगी।

शुक को बहुत दिनों के बाद देखकर पदमावती बड़ी प्रसन्न हुई। हीरामन ने अपना सारा हाल कह सुनाया और रतनसेन के पहुँचने का समाचार भी दिया। पदमावती उस पर मुग्ध हो गई। उसने प्रतिज्ञा की कि राजा के गले में जयमाल डालूँगी। इसके पश्चात् शुक राजा के पास लौट आया। पदमावती वसंत पंचमी के दिन उस महादेव के मंडप में पहुँची और उससे राजा का साक्षात् हुआ पर राजा उसे देखते ही मूर्च्छित हो गया। उसके मूर्च्छित होने पर पदमावती ने उसके वक्षःस्थल पर चंदन से लिख दिया—"जोगी, अभी तू भिक्षा प्राप्त करने योग्य नहीं है; तू ठीक समय पर सो जाता है।" यह लिखकर वह चली गई।

पदमावती के चले जाने पर राजा को चेत हुआ। वह बहुत पछताने लगा। उसने प्राण देने का निश्चय किया। यह समाचार सुनकर सब देवता घबरा उठे। महादेव और पार्वती ने वेश बदलकर उसकी परीक्षा करने का निश्चय किया। पार्वती ने अप्सरा का रूप धारण किया और राजा से कहने लगी कि मैं ही पदमावती हूँ। राजा को सच्चा प्रेम था। उसने उत्तर दिया कि तू पदमावती नहीं है। पार्वती को विश्वास हो गया कि उसे सच्चा प्रेम है। उसने महादेव से कहा कि इसकी रक्षा करनी चाहिए। राजा ने महादेव और पार्वती का यथार्थ रूप पहिचान लिया और वह उनकी स्तुति करने लगा। महादेव ने प्रसन्न होकर सिद्धिगुटिका उसे दी और सिंघलगढ़ में उसे घुसने की आज्ञा दी।

योगियों ने गढ़ जा घेरा। राजा के दूत आए और उनका अभिप्राय पूछने लगे। उन्होंने उत्तर दिया कि हमें 'पद्मावती' चाहिए। इस पर दूत क्रुद्ध होकर चले गए। उन्होंने राजा से सब समाचार जा सुनाया। वह बड़ा क्रुद्ध हुआ। योगियों ने गढ़ के भीतर प्रवेश किया। वे राजा की आज्ञा से पकड़ लिए गए। रतनसेन को सूली देने की आज्ञा हुई। वह इस पर बड़ा प्रसन्न हुआ। उपस्थित लोगों ने कहा कि अवश्य यह कोई राजकुमार है। महादेव और पार्वती रतनसेन की सहायता को आ पहुँचे। महादेव ने (जो भाँट के वेश में थे) राजा को बहुत समझाया कि यह योगी नहीं राजा है, यह पद्मावती के योग्य वर है, इससे अपनी कन्या का विवाह करो। राजा ने न माना। इस पर लड़ाई की तैयारी हुई। योगियों की ओर से देवता भी थे। देवताओं की शंखध्वनि सुनकर राजा घबरा गया और उसने महादेव का वास्तविक रूप पहचानकर उनसे क्षमा माँगी और कहने लगा कि "कन्या आपकी है, चाहे जिससे उसका विवाह कीजिए।"

इसी बीच हीरामन शुक ने आकर राजा को चित्तौर का सारा समाचार कह सुनाया। गंधर्वसेन रतनसेन के साथ पद्मावती का विवाह करने पर सहमत हुआ। विवाह शुभ अवसर शुभ घड़ी में हुआ। रतनसेन अपने साथियों के साथ सिंघल में रहकर सुख लूटने लगा। उसकी अनुपस्थिति में उसकी रानी नागमती बहुत दुखी हो रही थी—उसके विरह-

विलाप से पशु-पक्षी तक दुखी होते थे। एक दिन, रात को, एक पक्षी ने उसका रोदन सुना। उसके दुख पर तरस खाकर उसने प्रतिज्ञा की कि मैं तुम्हारा संदेश रतनसेन के पास पहुँचाऊँगा। संदेश लेकर वह सिंघल पहुँचा और एक वृक्ष पर बैठकर सुस्ताने लगा। संयोग से रतनसेन आखेट से थककर उसी वृक्ष के नीचे बैठ गया।

पक्षी उस वृक्ष पर बैठकर एक दूसरे पक्षी से बात-चीत कर रहा था। उसने नागमती का कष्ट कह सुनाया। राजा ने उन दोनों की बात सुनी। वह व्याकुल हो उठा और उसने अपने राज्य को लौटने की ठानी। रतनसेन अपने राज्य को लौटने की तैयारी करने लगा। उसने पद्मावती को साथ लिया। गंधर्वसेन ने उसे असंख्य धन दिया। सब ले-देकर वह जहाज पर सवार हुआ। समुद्र-तट पर उसे समुद्र भिक्षुक के रूप में मिला। उसने राजा से दान माँगा। राजा ने लोभ-वश उसे कुछ न दिया। जहाज पर चढ़कर राजा जब आधे समुद्र में आया तब प्रचंड वायुवेग में उसका जहाज लंका की ओर बह चला। वहाँ विभीषण का एक केवट मछली मार रहा था। उसने राजा को भरमाना चाहा। राजा को अपनी बातों में लाकर वह जहाज को एक भयंकर समुद्र में ले चला। वहाँ पहुँचकर जहाज डूबने लगा। राजा बहुत घबराया। इसी बीच में एक पक्षी आकर उस राक्षस को ले उड़ा। राजा का जहाज फट गया।

वह एक पटरे पर एक ओर बह चला और रानी पद्मावती दूसरी ओर।

पद्मावती बहते बहते एक तट पर लगी। पास ही में समुद्र की कन्या लक्ष्मी खेल रही थी। उसने उसे बचाया। वह उसे अपने घर ले गई और आदर से अपने यहाँ रखा। इधर राजा बहते बहते एक दूसरे निर्जन तट पर जा लगा। वहाँ पहुँचकर वह बहुत विलाप करने लगा। अन्त में दुखी होकर वह अपनी हत्या करने पर तैयार हुआ। उसको ऐसा करने के लिए उद्यत होते देख समुद्र, ब्राह्मण का रूप धरकर, उसे रोकने को उपस्थित हुआ और उसे लेकर पद्मावती के पास पंहुँचा।

राजा जिस समय पद्मावती के पास पहुँचा उस समय लक्ष्मी उसकी परीक्षा लेने को मार्ग में मिली। उसने चाहा कि राजा को भरमावें पर वह सच्चा प्रेमी था। अंत में प्रसन्न होकर लक्ष्मी ने उसे पद्मावती से मिला दिया। समुद्र की कृपा से राजा को उसके अन्य साथी भी मिले और वह सब को लेकर घर चला। चलते समय समुद्र ने उसे अमृत, हंस राजलक्ष्मी, शार्दूल और पारस पत्थर उपहार में दिए। सब कुछ लेकर रतनसेन चित्तौर पहुँचा और पद्मावती तथा नागमती के साथ सुख से रहने लगा। नागमती से नागसेन और पद्मावती से कमलसेन नामक पुत्र हुए।

रतनसेन की सभा में राघव चेतन नामक एक पंडित था जिसने यक्षिणी को सिद्ध किया था। एक दिन रतनसेन ने पूछा

'दूज कब है ?' राघव के मुँह से निकल पड़ा—'आज।' अन्य लोगों ने कहा—'आज नहीं हो सकती, कल है।' राघव अपनी बात पर अड़ गया। उसने यक्षिणी के प्रभाव से उस दिन दूज दिखा दी। अंत में दूसरे दिन बात खुली तो राघव देश से निकाल दिया गया। उसका निकाला जाना सुनकर पदमावती बड़ी चिंतित हुई। उसने उसे बुलवा भेजा और दान देकर प्रसन्न करना चाहा। रानी ने अपने हाथ का एक कंकण उसे दान दिया। इसे लेकर राघव दिल्ली पहुँचा। वहाँ उसने सुलतान अलाउद्दीन से सारा हाल कहकर पदमावती की सुंदरता का वर्णन किया। अलाउद्दीन पदमावती की सुंदरता का समाचार सुनकर उस पर मुग्ध हो गया। उसने चित्तौर पर चढ़ाई करने की ठानी। उसने सरजा नामक दूत को चित्तौर भेजा। राजा यह सुनकर बड़ा क्रुद्ध हुआ। उसने कहा—'जीते जी यह हो नहीं सकता।' सुल्तान ने अंत में चित्तौर पर चढ़ाई कर दी। आठ वर्ष तक मुसलमान चित्तौर घेरे रहे पर कुछ न हुआ। अंत में सुल्तान ने एक चाल चली। उसने प्रकट में राजा से मित्रता की और चित्तौर दावत खाने गया। रतनसेन के यहाँ गोरा-बादल*

---

* श्री ओझाजी को उदयपुर राज्य के छोटी सादड़ी गाँव के निकट एक पहाड़ी पर भमरमाता के मन्दिर में एक शिलालेख मिला है, जिसके आधार पर आपका कथन है—"गोरा बादल दो पुरुष नहीं, किंतु एक ही पुरुष का नाम होना संभव है, जैसा कि राठौर दुर्गादास।

दो वीर थे। वे इस कपट को समझ गए। उन्होंने राजा को सावधान किया पर राजा ने एक न मानी।

चित्तौर में कई दिन तक सुल्तान की आवभगत होती रही। एक दिन सुल्तान राजा के साथ शतरंज खेलने लगा। संयोग से पद्मावती ऊपर झरोखे पर बैठकर देख रही थी। बादशाह ने उसका प्रतिबिंब दीवार पर लगे हुए दर्पण में देखा। उसे देखकर वह मुग्ध हो गया—उसे मूर्च्छा आ गई। राघव ने समझाया कि वही पद्मावती थी। अंत में बादशाह ने बिदा माँगी। राजा उसे पहुँचाने चला। अपने गढ़ से बाहर होते ही राजा सुल्तान के सिपाहियों द्वारा पकड़ लिया गया और बंदी करके दिल्ली भेजा गया। कारागार में उसे अनेक प्रकार के क्लेश दिए जाने लगे। इधर चित्तौर में हाहाकार मच गया, दोनों रानियाँ सती होने को तैयार हुईं। गोरा-बादल, पद्मावती के कहने पर, उनकी सहायता करने पर उद्यत हुए।

सुल्तान के यहाँ दिल्ली में चित्तौर से सोलह सौ पालकिया पर चढ़कर सिपाही पहुँचे। बादशाह से कहा गया कि

...गोरा बादल का वास्तविक अभिप्राय गौर (गोरा) वश के बादल नामक पुरुष से हो सकता है।" श्री ओझाजी के निष्कर्ष में आपत्ति इस बात की है कि वह केवल शब्द साम्य पर अवलंबित है। यह साम्य भी पुष्ट नहीं कहा जा सकता। राठौर तथा सीसौदिया शब्द एक ही रूप में जाति तथा व्यक्ति-विशेष के लिये प्रयुक्त हुए है। पर गौर तथा गोरा में यह बात नहीं है। दोनों दो भिन्न शब्द हैं। यह भी कहा जाता है कि चित्तौर के दुर्ग के निकट उनके भवन भी भिन्न भिन्न हैं।

पद्मावती आई है। वह एक बार राजा से मिलना चाहती है। फिर सुल्तान के महल में रहेगी। बादशाह ने इसे मान लिया और राजा से मिलने की आज्ञा दे दी। रतनसेन के बंदीगृह में वह पालकी पहुँचाई गई जिसमें एक लोहार बैठा था। उसने राजा की बेड़ी तुरंत काट दी और राजा घोड़े पर सवार होकर भागा। अन्य छिपे हुए सिपाहियों ने उसकी रक्षा की। इस प्रकार शाही सेना को मार-काटकर लोग रतनसेन को छुड़ा लाए। रतनसेन जब चित्तौर पहुँचा तो उसने देवपाल की नीचता सुनी। इसने राजा की अनुपस्थिति में पद्मावती को बहकाने के लिये दूती भेजी थी। रतनसेन क्रोध से लाल हो गया और देवपाल से लड़ने को उद्यत हो उठा। दोनों राजाओं में लड़ाई हुई। इस द्वन्द्व में देवपाल मारा गया। उसकी साँग से रतनसेन मर्मविद्ध घायल हुआ। मरते समय उसने चित्तौर की रक्षा का भार बादल को सौंपा।

रतनसेन के शव को लेकर उसकी दोनों रानियाँ सती हुईं। उनके सती होने के पश्चात् शाही सेना चित्तौर पहुँची। सती होने का समाचार बादशाह ने सुना। वह हाथ मलकर रह गया।

पद्मावत की कथा का आधार

पद्मावत की कथा का आधार ऐतिहासिक है, पर थोड़े अंशों में। भारतीय इतिहास में अलाउद्दीन और चित्तौर के भीमसिंह की कथा प्रसिद्ध है। कहते हैं कि भीमसिंह की स्त्री पद्मिनी अपूर्व सुन्दरी थी। उसकी सुन्दरता का वर्णन सुनकर

अलाउद्दीन ने चित्तौर पर चढ़ाई की और भीमसिंह को हराया। उसने संधि करने के उद्देश से कहला भेजा कि यदि पद्मिनी का चित्र मुझे दिखा दिया जाय तो मैं दिल्ली लौट जाऊँगा। अलाउद्दीन की यह बात राजा ने स्वीकार कर ली और पद्मिनी की छाया दर्पण में उसे दिखा दी गई। अलाउद्दीन उसके रूप पर और भी मुग्ध हो गया और उसने चाल से भीमसिंह को बंदी कर लिया। अलाउद्दीन ने चित्तौर में कहला भेजा कि जब तक पद्मिनी न भेजी जायगी तब तक राजा को मुक्त न किया जायगा।

यह समाचार सुनकर पद्मिनी ने एक ढंग निकाला। उसने अपने मायके से गोरा-बादल नामक दो वीरों को बुला भेजा और उनसे सहायता करने को कहा। दोनों ने एक युक्ति सोची। उन्होंने बादशाह को कहला भेजा कि "पद्मिनी तुम्हारे पास रहने को तैयार है।" उन दोनों ने बहुत से वीरों को सुसज्जित कर पालकी में बैठाया और सब बादशाह के शिविर में पहुँचे। सुल्तान को सूचित किया गया कि पद्मिनी आ रही है; वह पहले अपने पति से भेंट करना चाहती है। अलाउद्दीन ने उसकी इच्छा-पूर्ति के लिए आज्ञा दे दी। वेश बदले हुए सब राजपूत भीमसिंह के पास पहुँचे। उन्हें लेकर वे चित्तौर की ओर चले। अलाउद्दीन को संदेह हुआ। उसने पीछा किया। भीमसिंह सकुशल चित्तौर पहुँच गया। गोरा-बादल खूब लड़े। गोरा युद्ध में मारा गया और बादशाह अपना मुँह लेकर लौट गया।

इस कथा को थोड़े हेर-फेर से अन्य लोगों ने भी लिखा है। आईन अकबरी में भीमसिंह के स्थान पर रतनसिंह नाम मिलता है। इसके अनुसार रतनसिंह की मृत्यु अलाउद्दीन के साथ युद्ध में हुई। पद्मिनी पति के साथ सती हुई। जो हो, सीधी-सादी कथा यह जान पड़ती है कि रतनसेन चित्तौर के राजा थे। उनकी पत्नी पद्मिनी या पदमावती अपूर्व सुंदरी थी। उसके रूप की चर्चा सुनकर अलाउद्दीन ने उसे पाने की इच्छा से चित्तौर पर चढ़ाई की। युद्ध में राजा ने उसे कई बार हराया, पर अंत में उसने संधि की और पदमावती को बादशाह ने देखा। उसने धोखे से राजा को बंदी कर लिया। गोरा-बादल सुल्तान को धोखा देकर राजा को छुड़ा ले गए। राजा मारा गया और पदमावती उसके साथ सती हो गई। बादशाह को कुछ न मिला। वह खिसियाकर रह गया।

इस ऐतिहासिक कथा का प्रचार भारत में बहुत प्रबलता के साथ हुआ। प्राय: सभी प्रांतों में इसका कोई न कोई रूपांतर प्रचलित हुआ। उत्तरी भारत, विशेष कर अवध, में इसके आधार पर एक कहानी प्रचलित हुई जिसका नाम था हीरामन सूआ और पद्मिनी रानी की कहानी। अभी तक अशिक्षित जनता में यह किसी न किसी रूप में पाई जाती है। गाँवों में प्राय: लोग इसे कहा करते हैं। जान पड़ता है, जायसी ने इसी प्रचलित कहानी को लेकर अपना काव्य खड़ा

किया है। वे इतिहास के अधिक जानकार थे अतः जो अंश उन्होंने लिया है, ठीक लिया है। कथा में बहुत कुछ अंश कवि को अपनी ओर से मिलाना पड़ा है जैसे पद्मिनी को सिंहलराज* की कन्या मानना। सिंहल में पद्मिनी स्त्रियों का होना केवल गोरखपंथी साधु मानते हैं। इस विचार के आधार पर जायसी ने पदमावती को सिंहल का माना और उसके पिता का नाम गंधर्वसेन रखा जो केवल कल्पित है। सिंहल तक की यात्रा आदि सारी बातें कवि को अपनी कल्पना द्वारा पूर्ण करनी पड़ी हैं। यदि वह ऐसा न करता तो उसके काव्य की कथा अपूर्ण रह जाती। यह कहना ठीक है कि रतनसेन और पदमावती के संबंध के पूर्व की सारी बातें कवि को केवल कथा की भूमिका बाँधने के लिये लिखनी पड़ी हैं। यदि ऐसा न किया जाता तो न तो कवि नायक और नायिका का 'प्रयत्न' ही लिख सकता और न उसका काव्य ही पूर्ण होता।

* श्री ओझाजी का कथन है—"रत्नसिंह के राज्य करने का जो अल्प समय निश्चित है उससे यही माना जा सकता है कि उसका विवाह सिंघलद्वीप अर्थात् लंका के राजा की पुत्री से नहीं, किंतु सिंगोली (चित्तौर से ४० मील पूर्व) के सरदार की कन्या से हुआ हो।" पदमावत में सिंहल तथा लंका की भिन्नता का स्पष्ट उल्लेख है—"बोहित चले जो चितउर ताके। भए कुपंथ, लंक दिसि हाँके।" हो सकता है कि पदमावती (इतिहास की पद्मिनी) सिंगोली के सरदार की कन्या रही हो और जायसी ने उसे सिंहल का समझकर अपने आख्यान में प्रकृत रूप दिया हो।

प्राचीन पद्धति के अनुसार जायसी अपने काव्य में अलौकिक वस्तुओं को लाने में भी नहीं हिचके हैं जैसे शुक का मनुष्य की भाँति बातचीत करना, राक्षस का मिलना आदि। प्राचीन विश्वास के अनुसार कवि को ऐसा करने में हिचक नहीं हुई। कादंबरी में भी इसी प्रकार शुक बातचीत करता है। राक्षस आदि का वर्णन प्रायः भारतीय सभी प्राचीन आख्यायिकाओं में कुछ न कुछ मिलता है। इन इनी-गिनी बातों को छोड़कर पदमावत में हम कोई और अलौकिकता तथा अस्वाभाविकता नहीं पाते। पात्र प्रायः सजीव व्यक्तियों की भाँति आचरण करते हुए पाए जाते हैं। उनके आचरण किसी प्रकार अलौकिक या अस्वाभाविक नहीं दिखाई पड़ते।

सूफी मत

प्रायः सभी मुसलमान आख्यान-लेखक सूफी संप्रदाय के थे। सूफी मतानुसार ईश्वर की कल्पना प्रियतम के रूप में की जाती है। 'उपासना के व्यवहार के लिये सूफी परमात्मा को अनंत सौंदर्य, अनंत शक्ति और अनंत गुणों का समुद्र मानते हैं।' सूफी मत भारतीय अद्वैतवाद से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। प्रोफेसर ब्राउन का मत है कि वह भारतवर्ष के वेदांत का रूपांतर है। सूफी मत इस्लाम का धार्मिक दर्शन है। इस्लाम धर्म में सांसारिक पदार्थों के उपभोग को ही आनंद मानते हैं और स्वर्ग में इन्हीं वस्तुओं के पाने की इच्छा रखते हैं। सूफी मत में स्वर्ग में 'प्रभु' का दर्शन मात्र अभीष्ट है। कवि 'मीर' इस पर फरमाते हैं।

शेख तुझे जन्नत मुझे दीदार।
वाँ भी हर एक की जुदा किस्मत॥

सूफी, सच्चे सूफी होने के लिये प्रथम तृष्णा और मोह का दमन अत्यंत आवश्यक समझते हैं। सूफियों को नमाज-रोजे से कम काम रहता है। अत:शुद्धि ही उनके मोक्ष का पक्का साधन है। यद्यपि जगत् सूफियों के लिये मिथ्या मृगतृष्णा है, ईश्वर निराकार है पर हमारे यहाँ के निर्गुण-वादियों से भिन्न वे ईश्वर का सुंदर रूप जगत् के सारे सुंदर पदार्थों में देखते हैं। वे सारे जगत् को ईश्वर के 'प्रेम की पीर' से व्यथित देखते हैं—प्रेम की पुकार उन्हें सर्वत्र सुनाई देती है। किसी ने सूफी भाव का सच्चा स्वरूप इस प्रकार प्रकट किया है—

'दरियाय इश्क बह रहा लहरों में बेशुमार'

प्रेम के आनंद में मग्न होना—सौंदर्य और सदाचार की मदिरा पीकर मत्त होना—सूफियों की परमोपासना है। इस सिद्धांत के अनुसार भावों की भरमार हम उर्दू और फारसी-साहित्य में देखते हैं। हिंदी-साहित्य में केवल मुसलमानों द्वारा लिखे आख्यानों में हमें इसका मधुर रूप देखने को मिलेगा।

जायसी सूफी संप्रदाय के थे। पदमावत में उन्होंने अपने मत की भली भाँति व्यंजना की है। पदमावत में जहाँ कहीं प्रेम का वर्णन आया है वहाँ कवि उसे लौकिक पक्ष से उठाकर अलौकिक की ओर ले गया है। स्वयं कवि ने सारी कथा अन्योक्ति समझकर लिखा है। वे स्वयं अंत में लिखते हैं—

तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा

गुरू सुआ जेह पंथ दिखावा। बिनु गुरु जगत को निर्मल पावा।
नागमती दुनिया कर धंधा। बाँचा सोइ न एहि चित बंधा।
राघव दूत सोइ सैतानू। माया अलाउदीन सुल्तानू।

सारे पदमावत में हमें आध्यात्मिक प्रेम का अभास मिलेगा; चाहे वह वियोग अवस्था में हो चाहे संयोग। इतना ही नहीं. प्राकृतिक वर्णन करते करते कवि को संसार के सारे पदार्थ उस परमात्मा के प्रेम की पीर से व्यथित दिखाई पड़ते हैं। जायसी ने सूफी मत के सच्चे अनुयायी की भाँति पदमावत में विश्वव्यापी विरह की व्यंजना स्थान पर की है; जैसे—

बिरह के आगि सूर जरि काँपा। रातिउदिवस जरै ओहि तापा।
इत्यादि।

जायसी की भाषा

जायसी ने पदमावत में अवधी भाषा का प्रयोग किया है। यह अवधी तुलसीदास की रामायण की भाषा की भाँति साहित्यिक नहीं है वरन् ठेठ प्रचलित भाषा है। अवधी का प्रचार अवध, आगरा प्रदेश, बघेलखंड, छोटा नागपुर और मध्यप्रदेश के भागों में है। अवधी के दो भेद माने जाते हैं—पूर्वी और पश्चिमी। पश्चिमी अवधी लखनऊ से कन्नौज तक बोली जाती है; पूर्वी गोंडा और अयोध्या के पास। जायसी की भाषा पूर्वी अवधी है। ये अधिकतर जायस में रहे जो पूर्वी अवधी की सीमा के भीतर है।

अवधी की माता अर्धमागधी है। प्राचीन समय में गंगा और यमुना की उपत्यका में दो प्राकृतों का प्रचार था—मागधी और शौरसेनी। पूर्वी भाग में मागधी बोली जाती थी, पश्चिमी

में शौरसेनी। इन दोनों के मध्य में जो भाषा प्रचलित थी वह अर्धमागधी के नाम से विख्यात थी। इसी अर्धमागधी से अवधी की उत्पत्ति हुई है। जायसी की भाषा को हम अवधी का प्राचीन उदाहरण कह सकते हैं। इनके पूर्व के मुसलमान आख्यान-लेखकों ने अवधी भाषा का प्रयोग अपनी भाषा में किया था पर जायसी जायस के रहनेवाले थे अतः उन्होंने अवधी के जिस शुद्ध रूप का प्रयोग किया है वह अधिक प्रामाणिक है। जायसी की भाषा को समझने के लिये अवधी भाषा के व्याकरण का संक्षिप्त ज्ञान कर लेना आवश्यक है। संक्षेप में वह यहाँ दिया जाता है।

संज्ञा और सर्वनाम

अवधी में प्रायः संज्ञाएँ तद्भव रूप में पाई जाती हैं। अधिकतर तो ऐसी होंगी जिनका संबंध प्राकृत से मिलेगा। कितनों का रूप अभी तक प्राकृत की भाँति है। अवधी के 'वा' और 'आना' के स्थान में ब्रजभाषा और खड़ी बोली में क्रम से 'औ' और 'आ' होता है। अवधी में लघ्वंत करने की प्रवृत्ति है और ब्रज और खड़ी बोली में दीर्घांत। यह प्रवृत्ति सर्वनामों में भी पाई जाती है। वचन के विषय में यह ध्यान देने की बात है कि जब तक संज्ञा में कारक-चिह्न नहीं लगता तब तक उनका रूप एकवचन सा ही रहता है।

जायसी ने 'तू' या 'तैं' के स्थान पर 'तुइँ' का प्रयोग किया है। यह रूप कन्नौजी और पश्चिमी अवधी का है।

अवधी के सर्वनामों का रूप इस प्रकार है—

सर्वनाम	कर्ता	विकृत	संबंध	कर्ता	विकृत	संबंध
	एकवचन			बहुवचन		
मैं	मैं	मो	मोर	हम	हम, हमरे	हमार, हमरे
तू	तैं	तो	तोर	तुम, तु	तुम, तुम्हरे	तुम्हार, तुम्हरे, तोहार, तोहरे
आप	आप	आपु	आपन	आप	आप	आपन
यह	ई	ए, एह, एहि	एकर, एहिकर	इन, ए	इन	इनकेर, इनकर
जो	जो, जे, जौन, जेइ (जायसी)	जे जेहि	जेकर, जेहिकर	जे	जिन	जिनकेर, जिनकर
वह	ऊ	ओ, ओहि, ओह	ओकर, ओहिकर	वै, उन	ओन, उन	ओनकर, ओनकेर
सो	सो, से, तौन	ते, तेहि	तेकर, तेहिकर	ते	तिन	तिनकर, तिनकेर
कौन	को, कौन, के, केइ (जायसी)	के, केहि	केकर, केकेर	को, के	किन	किनकर, किनकेर

कारक

कारक दो प्रकार से व्यक्त होते हैं। कुछ में प्राकृत और अपभ्रंश की भाँति 'ह' और 'हि' विभक्तियाँ लगती हैं। इन विभक्तियों का प्रयोग प्रायः सभी कारकों में होता है। ये विभक्तियाँ अभी तक संयोगावस्था में हैं। वियोगावस्था के कारक-चिह्न ये हैं—

कर्ता—ऐ (साहित्य में आकारांत शब्दों में सकर्मक भूतकालिक क्रिया के साथ)।

कर्म—के, काँ, कहँ ।

करण—सें, सन, से, सौं (केवल पश्चिमीय अवधी)।

संप्रदान—के, काँ, कहँ ।

अपादान—सें, तें, सेंती, हुँत ।

संबंध—कर, क, केर, कै (स्त्री०), केरी (स्त्री०)।

अधिकरण—में, महँ, माँ पर ।

जायसी ने अपादान कारक के लिये 'भै' या भए का प्रयोग किया है। इस विभक्ति से करण कारक का भी काम लिया है जिसका अर्थ 'कारण' और 'द्वारा' होता है।

संबंध कारक में लिंग-भेद हिंदी में पाया जाता है। बोलचाल की अवधी में यह भेद नहीं होता पर साहित्य में यह दिखाई पड़ता है।

क्रियाएँ

अवधी में तिङंत क्रियाएँ बराबर मिलती हैं। कृदंतमूलक क्रियाओं का पता कहीं कहीं उनके लिंग-भेद से होता है।

अवधी भाषा की यह प्रवृत्ति संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश की भाँति है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि अवधी भाषा अपनी मूल भाषाओं की प्रवृत्ति का अभी तक निर्वाह करती चलती है। अवधी की क्रियाएँ पुरुष-भेद के अनुसार चलती हैं। लिंग-भेद भी इनमें सदा कर्ता के अनुसार होता है, कर्म के अनुसार कभी नहीं। कुछ क्रियाओं का रूप यहाँ दिया जाता है—

अकर्मक क्रिया

[१] 'होना' वर्तमानकाल

पुरुष	एक० पुं०	एक० स्त्री०	बहु० पुं०	बहु० स्त्री०
उ० पु०	हौं, अहौं	हइउँ, आहिउँ	हई, अही	अहिन
म० पु०	हए, अहिस अहे, अहसि	अहसि	अहेव, अह्यो, अह, अहे	अहिव
अ० पु०	अहै, है, आय	अहै, है	अहैं, हैं	अहैं

भूतकाल

पुरुष	एक० पुं०	एक० स्त्री०	बहु० पुं०	बहु० स्त्री०
उ० पु०	रह्यों	रहिउँ	रहे	रहे, रहिनि, रहेन
म० पु०	रहे, रहसि	रहे, रहेसि	रह्यो	रहिउ
अ० पु०	रहा	रही	रहेन, रहिन, रहें	रही, रहिन ।

सकर्मक क्रिया

[२] 'देखना' वर्तमानकाल

	एक०	बहु०
उ० पु०	देखौं	देखी
म० पु०	देखु, देखसि	देखौ
अ० पु०	देख	देखैं

[३] भूतकाल

	एक० पुं०	एक० स्त्री०	बहु० पुं०	बहु० स्त्री
उ० पु०	देख्यों	देखिउँ	देखा, देखिन	देखा, देखिन
म० पु०	देखे, देखिस	देखिस, देखे	देखेन, देख्यो, देखेन	देखिउ, देखी
	देखेसि	देखेसि, देखी	देखेन, देखिन	
अ० पु०	देखेस, देखिस	देखिसि, देखी		देखी, देखिनि
	देखिसि, देख			

[४] भविष्यत्-काल

	एक०	बहु०
उ० पु०	देखबूँ, देखबौं, देखिहौं	देखब, देखिहैं
म० पु०	देखबे, देखिहै	देखबौ, देखिहौ
अ० पु०	देखि, देखे, देखिहै	देखिहैं

साधारण क्रिया (Infinitive) का रूप लव्वंत बकारांत होता है; जैसे—आउब, जाब, करब, खाब, पीयब, पढ़ब, लिखब, सुनब, रहब, होब, कहब इत्यादि।

अवधी में भविष्यत्-कालिक क्रिया का केवल तिङंत रूप है जिसमें लिंगभेद होता ही नहीं। ब्रजभाषा और खड़ी बोली में 'गा' और 'गी' से लिंगभेद स्पष्ट होता है।

उच्चारण

उच्चारण के कुछ साधारण नियम ये हैं—

(१) दो से अधिक वर्णों के शब्दों में यदि आदि में 'इ' या 'उ' की मात्रा हो तो इनके उपरांत 'आ' का उच्चारण अवधी में होगा; जैसे—सियार, बियाज, वियाह, दुआर, कुआर, गुवाल। ब्रजभाषा और खड़ी बोली में संधि से काम लिया जायगा; जैसे—स्यार, ब्याज, ब्याह, द्वार, क्वार, ग्वाल।

(२) 'अ' और 'आ' के उपरांत अवधी में 'इ' अधिक आवेगा। यथा—आइ, जाइ, खाइ, आइहै, जाइहै, खाइहै। अवधी के 'इ' के स्थान में ब्रजभाषा में 'य' आवेगा; जैसे—आय, जाय, खाय, आयहै, जायहै, खायहै।

(३) पद के आदि में 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण अवधी में 'अइ' और 'अउ' की भाँति होगा। यथा—ऐस = अइस, जैस = जइस। दौरि = दउरि।

(४) पदांत 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण अवधी में भी ब्रजभाषा की भाँति 'अय' और 'अव' सा होगा; जैसे—कहै = कहय, तपै = तपय, चलौ = चलव ।

जायसी की भाषा की कुछ विशेषताएँ

जायसी ने यद्यपि अपनी पद्मावत में पूर्वी अवधी व्याकरण का अनुसरण किया है पर कहीं कहीं उनकी भाषा पर अन्य आसपास की भाषाओं का भी प्रभाव पड़ा है । यथा—

(१) ऊपर कहा जा चुका है कि अवधी में क्रिया में पुरुष, वचन और लिंग-भेद कर्ता के अनुसार होता है । पश्चिमी हिंदी में भूतकालिक सकर्मक क्रिया में पुरुष-भेद नहीं होता। जायसी ने कई स्थानों पर इसका अनुसरण किया है । यथा—

(१) का मैं बोआ जनम ओहि भूँजी ।
(२) तिन्ह पावा उत्तिम कैलासू ।
(३) तुम्ह सिरजा यह समुद अपारा ।
(४) भूलि चकोर दिष्टि तहँ लावा ।
(५) अब तुम आइ अँतरपट साजा ।

(२) जायसी ने कई स्थलों पर सकर्मक भूतकालिक क्रिया में लिंग, वचन पश्चिमी हिंदी की भाँति कर्म के अनुसार रखा है । यथा—

बसिठन्ह आइ कही अस बाता ।

(३) कहीं कहीं साधारण क्रिया का रूप अवधी की भाँति 'व' कारांत न होकर नकारांत मिलता है। जैसे—कित आवन पुनि अपने हाथा।

(४) कहीं कहीं कारक-चिह्न न लगने पर भी पश्चिमी हिंदी की भाँति संज्ञा में बहुवचन का रूप दिखाई देता है। यथा—

(१) नसैं भईं सब ताँति।

(२) जोबन लाग हिलोरैं लेई।

(५) कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग जायसी ने किया है जो ठेठ अवधी के हैं। यथा—

राँध, अहक, जहिया, नौजि, तीवइ, महूँ, तहूँ, अधिकौ इत्यादि।

(६) किसी समय (अपभ्रंश तथा प्राकृत काल) में संबंध कारक की विभक्ति 'हि' या 'ह' सब कारकों की विभक्ति का काम देती थी, पर पीछे से वह केवल कर्म और संप्रदान के लिये काम में आने लगी। जायसी ने प्राचीन प्रथा के अनुसार कहीं कर्ता में 'हि' विभक्ति का स्थानापन्न 'ए' का प्रयोग किया है—

(१) राजै (राजहि) कहा सत्त कहु सूआ।

(२) सुऐ (सुअहि) तहाँ दिन दस कल काटी।

यहाँ 'ए' 'ने' के स्थान पर आया है।

छंद

जायसी ने पदमावत में सात चौपाइयों (अर्धालियों) के पीछे एक दोहा रखा है। प्राचीन कवि चंद बरदाई ने अपने रासो में दोहे चौपाई का प्रयोग किया है। चौपाई का नाम 'रासो' में 'विअक्खरी' कहा है।

दोहा लिखने की प्रथा प्राचीन है। प्राकृत और अपभ्रंश में 'दोधक' छंद मिलता है। दोहे, चौपाइयों का क्रम भिन्न-भिन्न कवियों ने भिन्न भिन्न रखा है। जायसी से पूर्व के कवियों (मंझन, कुतुबन) ने पाँच चौपाइयों के बाद एक दोहा लिखा है। जायसी ने सात और जायसी के पीछे तुलसी ने रामायण में आठ चौपाइयों के पश्चात् एक दोहा रखा है। वास्तव में तुलसी की आठ चौपाइयाँ चार चौपाई हुईं। चौपाई का अर्थ चतुष्पदी है जिसका अर्थ है चार तुकांत पद। अतः दो चौपाइयाँ मिलकर एक चतुष्पदी होगी। मुसलमान कवियों ने अज्ञानवश आधी चौपाई (अर्धाली) को पूरी चौपाई मानकर पाँच और सात चौपाई का क्रम रखा है जो वास्तव में ढाई और साढ़े तीन चौपाई है।

दोहे और चौपाई के लिये अवधी भाषा विशेषरूप से उपयुक्त है। जितनी सुगमता से ये छंद अवधी भाषा में चलते हैं उतनी अन्य भाषा में नहीं। बिहारी आदि कवियों ने सुंदर दोहे लिखे हैं पर पद-लालित्य में वे अवधी में रचे दोहों को नहीं पहुँच सकते।

———

खंड-सूची

			पृष्ठांक
[१]	पद्मावती खंड	... ...	१—१७
[२]	रतनसेन खंड	... ...	१८—३८
[३]	प्रेम खंड	... ...	३९—६०
[४]	भेंट खंड	... ...	६१—७१
[५]	नागमती खंड	... ...	७२—९४
[६]	राघव चेतन खंड	... ...	९५-११६
[७]	गोरा बादल खंड	... ...	११७-१३५
	टिप्पणी	... ...	१—४१

संक्षिप्त पद्मावत

(१) पद्मावती खंड

सुमिरौं आदि एक करतारू। जेहि जिउ दीन्ह कीन्ह संसारू
कीन्हेसि प्रथम जोति परकासू। कीन्हेसि तेइ परबत कैलासू
कीन्हेसि अगिन,पवन,जल,खेहा। कीन्हेसि बहुतै रंग उरेहा
कीन्हेसि धरती, सरग, पतारू। कीन्हेसि बरन बरन औतारू
कीन्हेसि,दिन,दिनअर,ससि,राती। कीन्हेसि नखत, तराइन-पाँती
कीन्हेसि धूप, सीउ औ छाँहा। कीन्हेसि मेघ, बीजु तेहि माँहा
कीन्हेसि सप्त मही बरम्हंडा। कीन्हेसि भुवन चौदहो खंडा

कीन्ह सबै अस जाकर दूसर छाज न काहि।
पहिले ताकर नावँ लै कथा करौं औगाहि ॥ १ ॥

धनपति उहै जेहिक संसारू। सबै देइ नीति, घट न भँडारू
जावत जगत् हस्ति औ चाँटा। सब कहँ भुगुति रात दिन बाँटा
ताकर दीठि जो सब उपराहीं। मित्र सत्रु कोइ बिसरै नाहीं
पंखि पतंग न बिसरै कोई। परगट गुपुत जहाँ लगि होई
भोग भुगुति बहु भाँति उपाई। सबै खवाइ, आप नहिं खाई

ताकर उहै जो खाना पियना। सब कहँ देइ भुगुति औ जियना
सबै आस-हर ताकर आसा। वह न काहु के आस निरासा
जुग जुग देत घटा नहिं उभै हाथ अस कीन्ह।
और जो दीन्ह जगत महँ सो सब ताकर दीन्ह॥ २॥

आदि एक बरनौं सोइ राजा। आदि न अंत राज जेहि छाजा
सदा सरबदा राज करेई। औ जेहि चहै राज तेहि देइ
छत्रहि अछत, निछत्रहि छावा। दूसरि नाहिं जो सरवरि पावा
परबत ढाह देख सब लोगू। चाँटहि करै हस्ति सरि जोगू
बज्रहिं तिनकहिं मारि उड़ाइ। तिनहिं बज्र करि देइ बड़ाई
ताकर कीन्ह न जानै कोई। करै सोइ जो चित्त न होइ
काहू भोग भुगुति सुख सारा। काहू भूख बहुत दुख मारा
सबै नास्ति वह अहथिर ऐस साज जेहि केर।
एक साजै औ भाँजै चहै सँवारै फेर॥ २॥

अलख अरूप अबरन सो कर्ता। वह सब सों सब ओहि सों बरता
परगट गुपुत सो सरब-बिआपी। धरमी चीन्ह, न चीन्है पापी
ना ओहि पूत, न पिता न माता। ना ओहि कुटुँब,न कोइ सँग नाता
जना न काहु,न कोइ ओहि जना। जहँ लगि सब ताकर सिरजना
वै सब कीन्ह जहाँ लगि कोई। वह नहिं कीन्ह काहु कर होई
हुत पहिले अरु अब है सोई। पुनि सो रहै रहै नहिं कोई
और जो होइ सो बाउर अंधा। दिन दुइ चारि मरै करि धंधा
बड़ गुनवंत गुसाईं चहै सँवारै बेग।
औ अस गुनी सँवारै जो गुन करै अनेग॥ ४॥

कीन्हेसि पुरुष एक निरमरा। नाम मुहम्मद पूनो-करा
प्रथम जोति बिधि ताकर साजी। औ तेहि प्रीति सिहिटि उपराजी
दीपक लेसि जगत कहँ दीन्हा। भा निरमल जग, मारग चीन्हा
जौं न होत अस पुरुष उजारा। सूझि न परत पंथ अँधियारा
दुसरे ठांवँ दैव वै लिखे। भए धरमी जे पाढ़त सिखे
जेहि नहिं लीन्ह जनमभरि नाऊँ। ता कहँ कीन्ह नरक महँ ठाऊँ
जगत बसीठ दई ओहि कीन्हा। दुइ जग तरा नावँ जेहि लीन्हा
गुन अवगुन बिधि पूछब होइहि लेख औ जोख।
वह बिनउब होइ आगे करब जगत कर मोख ॥ ५ ॥

सेरसाहि देहली सुलतानू। चारिउ खंड तपै जस भानू
ओही छाज छात औ पाटा। सब राजै भुइँ धरा लिलाटा
जाति सूर औ खाँड़े सूरा। औ बुधिवंत सबै गुन पूरा
सूर नवाए नव-खँड़ वई। सातउ दीप दुनी सब नई
तहँ लगि राज खड़ग करि लीन्हा। इसकंदर जुलकरन जो कीन्हा
हाथ सुलेमाँ केरि अँगूठी। जग कहँ दान दीन्ह भरि मूठी
औ अति गरू भूमिपति भारी। टेकि भूमि सब सिहिटि सँभारी
दीन्ह असीस मुहम्मद करहु जुगहि जुग राज।
बादसाह तुम जगत के जग तुम्हार मुहताज ॥६॥

सैयद असरफ पीर पियारा। जेहि मोहिं पथ दीन्ह उजियारा
लेसा हिये प्रेम कर दीया। उठी जोति, भा निरमल हीया
मारग हुत अँधियार जो सूझा। भा अँजोर, सब जाना बूझा
खार समुद्र पाप मोर मेला। बोहित-धरम लीन्ह कै चेला

उन्ह मोर कर बूड़त कै गहा। पायों तीर घाट जो अहा
जाकहँ ऐस होइ कंधारा। तुरत बेगि सो पावै पारा
दस्तगीर गाढ़े कै साथी। वह अवगाह, दीन्ह तेहि हाथी

जहाँगीर वै चिस्ती निहकलंक जस चाँद।
वै मखदूम जगत के हौं ओहि घर कै बाँद॥ ७॥

ओहि घर रतन एक निरमरा। हाजी सेख सबै गुन भरा
तेहि घर दुइ दीपक उजियारे। पंथ देइ कहँ दैव सँवारे
सेख मुहम्मद पून्यो-करा। सेख कमाल जगत निरमरा
दुऔ अचल ध्रुव डोलहिं नाहीं। मेरु खिखिंद तिन्हहुँ उपराहीं
दीन्ह रूप औ जोति गोसाईं। कीन्ह खंभ दुई जग के ताईं
दुहूँ खंभ टेके सब मही। दुहुँ के भार सिहिटि थिर रही
जेहि दरसे औ परसे पाया। पाप हरा, निरमल भइ काया

मुहमद तेइ निचिंत पथ जेहि संग मुरसिद पीर।
जेहिके नाव औ खेवक बेगि लाग सो तीर॥ ८॥

गुरु मेहदी खेवक मैं सेवा। चलै उताइल जेहि कर खेवा
अगुआ भयउ सेख बुरहानू। पंथ लाइ मोहि दीन्ह गियानू
अलहदाद भल तेहि कर गुरू। दीन दुनी रोसन सुरखुरू
सैयद मुहमद कै वै चेला। सिद्ध-पुरुष-संगम जेहि खेला
दानियाल गुरु पंथ लखाए। हजरत ख्वाज खिजिर तेहि पाए
भए प्रसन्न ओहि हजरत ख्वाजे। लिए मेरइ जहँ सैयद राजे
ओहि सेवत मैं पाई करनी। उघरी जीभ, प्रेम कबि बरनी

वै सुगुरू हौं चेला निति बिनवौं भा चेर।
उन्ह हुत देखै पायउँ दरस गोसाईं केर ॥ ९ ॥

एक-नयन कबि मुहमद गुनी। सोइ बिमोहा जेहि कबि सुनी
चाँद जैस जग बिधि औतारा। दीन्ह कलंक, कीन्ह उजियारा
जग सूझा एकै नयनाहाँ। उआ सूक जस नखतन्ह माहाँ
जौ लहि अंबहि डाभ न होई। तौ लहि सुगँध बसाइ न सोई
कीन्ह समुद्र पानि जो खारा। तौ अति भयउ असूझ अपारा
जौ सुमेरु तिरसूल बिनासा। भा कंचन-गिरि लाग अकासा
जौ लहि घरी कलंक न परा। काँच होइ नहिं कंचन-करा
एक नयन जस दरपन औ निरमल तेहि भाउ।
सब रुपवंतइ पाउँ गहि मुख जोहहिं कै चाउ ॥ १० ॥

चारि मीत कबि मुहमद पाए। जोरि मिताईं सरि पहुँचाए
यूसुफ मलिक पँडित बहु ग्यानी। पहिलै भेद-बात वै जानी
पुनि सलार कादिम मतिमाहाँ। खाँड़े दान उभै निति बाहाँ
मियाँ सलोने सिंध बरियारू। बीर खेत-रन खड़क जुझारू
सेख बड़े, बड़ सिद्ध बखाना। किए आदेस सिद्ध बड़ माना
चारिउ चतुरदसा गुन पढ़े। औ संजोग गोसाईं गढ़े
बिरिछ होइ जौ चंदन पासा। चंदन होइ बेद तेहि बासा
मुहमद चारिउ मीत मिलि भए जो एकै चित्त।
एहि जग साथ जो निबहा ओहि जग बिछुरन कित्त ॥११॥

जायस नगर धरम-अस्थानू। तहाँ आइ कबि कीन्ह बखानू
औ बिनती पँडितन सन भजा। टूट सँवारहु, मेरवहु सजा।

हौं पंडितन केर पछलगा। किछु कहि चला तबल देइ डगा
हिय भंडार नग अहै जो पूँजी। खोली जीभ तारु कै कूँजी
रतन-पदारथ बोल जो बोला। सुरस प्रेम मधु भरी अमोला
जेहि के बोल बिरह कै घाया। कहँ तेहि भूख, कहाँ तेहि माया ?
फेरे भेख रहै भा तपा। धूरि-लपेटा मानिक छपा

मुहमद कवि जौ बिरह भा ना तन रकत न माँसु।
जेइ मुख देखा तेइ हँसा सुनि तेहि आयउ आँसु ॥ १२ ॥

सन नव सै सैंतालिस अहा। कथा अरंभ बैन कवि कहा
सिंघल दीप पदमिनी रानी। रतनसेन चितउर गढ़ आनी
अलउदीन देहली सुलतानू। राघौ चेतन कीन्ह बखानू
सुना साहि गढ़ छेंका आइ। हिन्दू तुरकन्ह भई लराई
आदि अंत जस गाथा अहै। लिखि भाषा चौपाई कहै
कबि बिआस रस-कँवला पूरी। दूरि सो नियर, नियर सो दूरी
नियरे दूर फूल जस काँटा। दूरि जो नियरे जस गुड़ चाँटा

भँवर आइ बनखंड सन लेइ कँवल कै बास।
दादुर बास न पावई भलहि जो आछै पास ॥ १३ ॥

सिंघलदीप कथा अब गावौं। औ सो पदमिनि बरनि सुनावौं
निरमल दरपन भाँति बिसेखा। जो जेहि रूप सो तैसइ देखा
धनि सो दीप जहँ दीपक बारी। औ पदमिनि जो दई सँवारी
गंध्रबसेन सुगंध नरेसू। सो राजा, वह ताकर देसू
लंका सुना जो रावन राजू। तेहू चाहि बड़ ताकर साजू

अस्वपतिक-सिरमौर कहावै । गजपतीक आँकुस-गज नावै
नरपतीक कहँ और नरिंदू । भूपतीक जग दूसर इंदू
ऐस चक्कवै राजा चहूँ खंड भय होइ ।
सबै आइ सिर नावहिं सरवति करै न कोइ ॥ ४ ॥

जबहि दीप नियरावा जाई । जनु कैलास नियर भा आई
घन अमराउ लाग चहुँ पासा । उठा भूमि हुत लागि अकासा
तरिवर सबै मलयगिरि लाई । भइ जग छाँह रैनि होइ आई
मलय-समीर सोहावन छाँहा । जेठ जाड़ लागै तेहि माहाँ
ओही छाँह रैनि होइ आवै । हरियर सबै अकास देखावै
पथिक जो पहुँचै सहि कै घामू । दुख बिसरै, सुख होइ बिसरामू
जेइ वह पाई छाँह अनूपा । फिरि नहिं आइ सहै यह धूपा
अस अमराउ सघन घन बरनि न पारौं अंत ।
फूलै फरै छवौ रितु जानहु सदा बसंत ॥ १५ ॥

बसहिं पंखि बोलहिं बहु भाखा । करहिं हुलास देखि कै साखा
भोर होत बोलहिं चुहचूही । बोलहिं पाँडुक "एकै तूही"
सारौं सुआ जो रहचह करहीं । कुरहिं परेवा और करबरहीं
'पीव-पीव' कर लाग पपीहा । 'तुही-तुही' कर गडुरी जीहा
'कुहू-कुहू' करि कोइलि राखा । औ भिँगराज बोल बहु भाखा
'दही-दही' करि महरि पुकारा । हारिल बिनवै आपन हारा
कुहुकहिं मोर सोहावन लागा । होइ कुराहर बोलहि कागा
जावत पंखी जगत के भरि बैठे अमराउँ ।
आपनि आपनि भाखा लेहिं दई कर नाउँ ॥१६॥

पैग पैग पर कुवाँ बावरी। साजी बैठक और पाँवरी
और कुंड बहु ठावहिं ठाऊँ। सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ
मठ मंडप चहुँ पास सँवारे। तपा जपा सब आसन मारे
मानसरोदक बरनौं काहा। भरा समुद अस अति अवगाहा
पानि मोति अस निरमल तासू। अमृत आनि कपूर सुबासू
खँड खँड सीढ़ी भईं गरेरी। उतरहिं चढ़हिं लोग चहुँ फेरी
फूला कवँल रहा होइ राता। सहस सहस पखुरिन कर छाता
ऊपर पाल चहूँ दिसि अमृत-फल सब रूख।
देखि रूप सरवर कै गै पियास औ भूख॥ १७॥

आस पास बहु अमृत बारी। फरीं अपूर, होइ रखवारी
पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा। बिरिछ बेधि चंदन भइ बासा
सिंघलनगर देखु पुनि बसा। धनि राजा अस जेकै दसा
ऊँची पौरी ऊँच अवासा। जनु कैलास इंद्र कर वासा
राव रंक सब घर घर सुखी। जो दीखै सो हँसता-मुखी
रचि रचि साजे चंदन चौरा। पोतें अगर मेद औ गौरा
सबै गुनी औ पंडित ग्याता। संसकिरित सब के मुख बाता
अस कै मँदिर सवारैं जनु सिवलोक अनूप।
घर घर नारि पदमिनी मोहहिं दरसन रूप॥ १८॥

पुनि आए सिंघलगढ़ पासा। का बरनौं जनु लाग अकासा
तरहिं करिन्ह वासुकि कै पीठी। ऊपर इंद्रलोक पर दीठी
परा खोह चहुँ दिसी अस बाँका। काँपै जाँघ, जाइ नहिं झाँका
अगम असूझ देखि डर खाई। परै सो सपत-पतारहिं जाई

नव पौरी बाँकी नव खंडा। नवौ जो चढ़ै जाइ बरम्हंडा
कंचन कोट जरे नग सीसा। नखतहि भरी बीजु जनु दीसा
लंका चाहि ऊँच गढ़ ताका। निरखि न जाइ, दीठि मन थाका

हिय न समाइ दीठि नहिं, जानहुँ ठाढ़ सुमेर।
कहँ लगि कहौं ऊँचाई कहँ लगि बरनौं फेर ॥१९॥

निति गढ़ बाँचि चलै ससि सूरू। नाहिं त होइ बाजि-रथ चूरू
पौरी नवौ बज्र कै साजी। सहस सहस तहँ बैठे पाजी
फिरहिं जाँच कोतवार सुभौंरी। काँपै पावँ चपत वह पौरी
पौरिहि पौरि सिंह गढ़ि काढ़े। डरपहिं लोग देखि तहँ ठाढ़े
बहु बिधान वै नाहर गढ़े। जनु गाजहिं चाहहिं सिर चढ़े
टारहिं पूँछ पसारहिं जीहा। कुंजर डरहिं कि गुंजरि लीहा
कनक-सिला गढ़ि सीढ़ी लाईं। जगमगाहिं गढ़ ऊपर ताईं

नवौ खंड नव पौरी औ तहँ बज्र केवार।
चारि बसेरे सौं चढ़ै, सत सौं उतरै पार ॥२०॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा। तेहि पर बाज राज-घरियारा
घरी सो बैठि गने घरियारी। पहर पहर सो आपनि बारी
जबहीं घरी पूजि तेहिं मारा। घरी घरी घरियार पुकारा
परा जो डाँड़ जगत सब डाँड़ा। का निचिंत माटी कर भांड़ा?
तुम्ह तेहि चाक चढ़े हौ काँचे। आएहु रहै, न थिर होइ बाँचे
घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ। का निचिंत होइ सोउ बटाऊ?"
पहरहिं पहर गजर निति होई। हिया बजर, मन जाग न सोई

मुहमद जीवन जल भरन रहँट घरी कै रीति।
घरी जो आई ज्यों भरी, ढरी. जनम गा बीति ॥२१॥

गढ़ पर बसहिं झारि गढ़पती। असुपति गजपति भू-नर-पती
सब धौराहर सोने साजा। अपने अपने घर सब राजा
रूपवंत धनवंत सभागे। परस-पखान पौरि तिन्ह लागे
भोग बिलास सदा सब माना। दुख चिंता कोइ जनम न जाना
मँदिर मँदिर के चौपारी। बैठि कुँवर सब खेलहिं सारी
पासा ढरहिं खेल भल होई। खड़गदान सरि पूज न कोई
भाँट बरनि कहि कीरति भली। पावहिं हस्ति घोड़ सिंघली

मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चंदन बास।
निसि दिन रहै बसंत तहँ छवौ ऋतु बारह मास ॥२२॥

पुनि चल देखा राज-दुआरा। मानुष फिरहिं पाइ नहिं बारा
हस्ति सिंघली बाँधे बारा। जनु सजीव सब ठाढ़ पहारा
कौनौ सेत पीत रतनारे। कौनो हरे धूम औ कारे
पुनि बाँधे रज-बार तुरंगा। का बरनौं जस उन्हकै रंगा
मन तें अगमन डोलहिं बागा। लेत उसास गगन सिर लागा
पौन समान समुद पर धावहिं। बूड़ न पाँव, पार होइ आवहिं
थिर न रहहिं रिस लोह चबाहीं। भाँजहिं पूँछ, सीस उपराहीं

अस तुखार सब देखे जनु मन के रथवाह।
नैन-पलक पहुँचावहिं जहँ पहुँचा कोइ चाह ॥२३॥

राजसभा पुनि देख बईठी। इंद्रसभा जनु परि गै डीठी
धनि राजा असि सभा सँवारी। जानहु फूलि रही फुलवारी

मुकुट बाँधि सब बैठे राजा। दर निसान नित जिन्हके बाजा
रूपवंत, मनि दिपै लिलाटा। माथे छात, बैठ सब पाटा
मानहुँ कँवल सरोवर फूले। सभा क रूप देखि मन भूले
पान कपूर मेद करतूरी। सुगँध बास भरि रही अपूरी
माँझ ऊँच इंद्रासन साजा। गंध्रबसेन बैठ तहँ राजा

छत्र गगन लगि ताकर, सूर तबै जस आप।
सभा कँवल अस बिगसइ, माथे बड़ परताप ॥ २४ ॥

साजा राजमँदिर कैलासू। सोने कर सब धरति अकासू
सात खंड धौराहर साजा। उहै सँवारि सकै अस राजा
बरनौं राजमँदिर रनिवासू। जनु अछरीन्ह भरा कैलासू
सोरह सहस पदमिनी रानी। एक एक तें रूप बखानी
अति सुरूप औ अति सुकुवाँरी। पान फूल के रहहिं अधारी
तेहि ऊपर चंपावति रानी। महा सुरूप पाट-परधानी
सकल दीप महँ जेती रानी। तिन्ह महँ दीपक बारह-बानी

कुँवरि बतीसा लच्छनी अस सब माँह अनूप।
जावत सिंघलदीप के सबै बखानै रूप ॥ २५ ॥

चंपावति जो रूप सँवारी। पदमावति चाहै औतारी
भै चाहै असि कथा सलोनी। मेटि न जाइ लिखी जस होनी
सिंघलदीप भयउ तब नाऊँ। जो अस दिया बरा तेहि ठाऊँ
प्रथम सो जोति गगन निरमई। पुनि सो पिता माथे मनि भई
पुनि वह जोति मातु-घट आई। तेहि ओदर आदर बहु पाई

जस अवधान पूर होइ मासू। दिन दिन हिये होइ परगासू
जस अंचल महँ छिपै न दीया। तस उँजियार दिखावै हीया
सोने मँदिर सँवारहिं औ चंदन सब लीप।
दिया जो मनि सिवलोक महँ उपना सिंघलदीप ॥ २६ ॥

भए दस मास पूरि भइ घरी। पदमावति कन्या औतरी
जानौ सूर किरिन हुति काढ़ी। सूरुज कला घाटि, वह बाढ़ी
भा निसि महँ दिनकर परकासू। सब उजियार भयउ कैलासू
इते रूप मूरति परगटी। पूनौ ससी छीन होइ घटी
घटतहि घटत अमावस भई। दिन दुइ लाज गाड़ि भुइँ गई
पुनि जो उठि दुइज होइ नई। निहकलंक ससि बिधि निरमई
पदुम-गंध बेधा जग बासा। भौंर पतंग भए चहुँ पासा
इते रूप भै कन्या जेहिं सरि पूज न कोइ।
धनि सो देस रूपवंता जहाँ जनम अस होइ ॥ २७ ॥

भै छठि राति छठीं सुख मानी। रहस कूद सौं रैनि बिहानी
भा बिहान पंडित सब आए। काढ़ि पुरान जनम अरथाए
कन्यारासि उदय जग कीया। पदमावती नाम अस दीया
कहेन्हि जनमपत्री जो लिखी। देइ असीस बहुरे जोतिषी
पाँच बरस महँ भै सो बारी। दीन्ह पुरान पढ़ै बैसारी
भै पदमावति पंडित गुनी। चहूँ खंड के राजन्ह सुनी
सात दीप के बर जो ओनाहीं। उत्तर पावहिं फिरि फिरि जाहीं
राजा कहै गरब कै अहौं इंद्र सिवलोक।
को सरवरि है मोरे कासौं करौं बरोक ॥ १८ ॥

बारह बरस माँह भै रानी। राजैं सुना सँयोग सयानी
सात खंड धौराहर तासू। सो पदमिनि कहँ दीन्ह निवासू
औ दीन्हीं सँग सखी सहेली। जो सँग करैं रहसि रस-केली
सबै नवल पिउ संग न सोई। कवँल पास जनु बिगसीं कोई
सुआ एक पदमावति ठाऊँ। महा पँडित हीरामन नाऊँ
दई दीन्ह पंखिहि असि जोती। नैन रतन, मुख मानिक मोती
कंचन-बरन सुआ अति लोना। मानहुँ मिला सोहागहिं सोना
रहहिं एक सँग दोऊ पढ़हिं सासतर बेद।
बरम्हा सीस डोलावहीं सुनत लाग तस भेद॥ २९॥

भै उनंत पदमावति बारी। रचि रचि बिधि सब कला सँवारी
जग बेधा तेहिं अंग-सुबासा। भँवर आइ लुबुधे चहुँ पासा
बेनी नाग मलयगिरि पैठी। ससि माथे होइ दूइज बैठी
भौंह धनुक साधे सर फेरै। नयन कुरंग भूलि जनु हेरै
नासिक कीर, कवँल मुख सोहा। पदमिनि रूप देखि जग मोहा
मानिक अधर, दसन जनु हीरा। हिय हुलसे कुच कनक-जँभीरा
केहरि लंक, गवन गज हारे। सुर नर देखि माथ भुइँ धारे
जग कोइ दीठि न आवै आछहिं नैन अकास।
जोगि जती संन्यासी तप साधहिं तेहि आस॥ ३०॥

एक दिवस पदमावति रानी। हीरामनि तइँ कहा सयानी
'सुनु, हीरामनि, कहौं बुझाई। दिन दिन मदन सतावै आई
पिता हमार न चालै बाता। त्रासहि बोलि सकै नहिं माता
देस देस के बर मोहिं आवहिं। पित हमार न आँखि लगावहिं

जोबन मोर भयउ जस गंगा । देह देह हम लाग अनंगा'
हीरामनि तब कहा बुझाई । 'बिधि कर लिखा मेटि नहिं जाई
अग्या देउ देखौं फिरि देसा । तोहि जोग बर मिलै नरेसा

जौ लगि मैं फिरि आवौं मन चित धरहु निवारि' ।
सुनत रहा कोइ दुरजन राजहि कहा बिचारि ॥ ३१ ॥

राजा सुना दीठि भै आना । बुधि जो देहि सँग सुआ सयाना
भयउ रजायसु 'मारहु सूआ' । सूर सुनाव चाँद जहँ ऊआ
शत्रु सुआ के नाऊ बारी । सुनि धाए जस धाव मँजारी
तब लगि रानी सुआ छपावा । जब लगि ब्याध न आवै पावा
'पिता के आयसु माथे मोरे । कहहु जाय बिनवौं कर जोरे
पंखि न कोई होइ सुजानू । जानै भुगुति, कि जान उड़ानू
सुआ जो पढ़ै पढ़ाए बैना । तेहि कत बुधि जेहिं हिये नैना

मानिक मोती देखि वह हिये न ग्यान करेइ ।
दारिउँ दाखि जानि कै अबहिं ठोर भरि लेइ' ॥ ३२ ॥

वै तौ फिरे उतर अस पावा । बिनवा सुआ हिये डर खावा
'रानी, तुम जुग जुग सुख पाऊ । होइ अग्या बनबास तौ जाऊँ
ठाकुर अंत चहै जेहि मारा । तेहि सेवक कर कहाँ उबारा ?'
रानी उतर दीन्ह कै माया । 'जौ जिउ जाइ रहै किमि काया ?
हीरामन, तू प्रान परेवा । धोख न लाग करत तोहिं सेवा
तोहिं सेवा बिछुरन नहिं आखौं । पींजर हिये घालि कै राखौं
हौं मानुस, तू पंखि पियारा । धरम क प्रीति तहाँ केइ मारा' ?

खटका

सुअटा रहै खुरुक जिउ अबहिं काल सो आव।
सत्रु अहै जो करिया कबहुँ सो बोरै नाव ॥ ३३ ॥

एक दिवस पून्यो तिथि आई। मानसरोदक चली नहाई
पदमावति सब सखी बुलाई। जनु फुलवारि सबै चलि आई
खेलत मानसरोवर गईं। जाइ पाल पर ठाढ़ी भईं
धरी तीर सब कंचुकि सारी। सरवर महँ पैठीं सब बारी
लागीं केलि करै मझ नीरा। हंस लजाइ बैठ ओहि तीरा
बाद मेलि कै खेल पसारा। हार देइ जो खेलत हारा
सखी एक तेइ खेल न जाना। भै अचेत मनि-हार गवाँना

लागीं सब मिलि हेरै बूड़ि बूड़ि एक साथ।
कोइ उठी मोती लेइ काहू घोंघा हाथ ॥ ३४ ॥

कहा मानसर 'चाह सो पाई। पारस-रूप इहाँ लगि आई
भा निरमल तिन्ह पायन्ह परसे। पावा रूप रूप के दरसे
मलय-समीर बास तन आई। भा सीतल, गै तपनि बुझाई
न जनौं कौन पौन लेइ आवा। पुन्य-दसा भै, पाप गँवावा'
ततखन हार बेगि उतराना। पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना
बिगसा कुमुद देखि ससि-रेखा। भै तहँ ओप जहाँ जोइ देखा
पावा रूप रूप जस चहा। ससि-मुख जनु दरपन होइ रहा

नयन जो देख कवँल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन-जोत मग हीर ॥ ३५ ॥

पदमावति तहँ खेल दुलारी। सुआ मँदिर महँ देखि मजारी
कहेसि 'चलौं जौ लहि तन पाँखा'। जिउ लै उड़ा ताकि बन-ढाँखा

जाइ परा बनखँड जिउ लीन्हें। मिले पंखि, बहु आदर कीन्हें
आनि धरेन्हि आगे फरि साखा। भुगुति भेंट जौ लहि विधि राखा
पाइ भुगुति सुख तेहि मन भयऊ। दुख जो अहा बिसरि सब गयऊ
ए गुसाइँ तूँ ऐस विधाता। जावत जीव सबन्ह भुकदाता
पाहन महँ नहिं पतँग बिसारा। जहँ तोहि सुमिर दीन्ह तुइँ चारा

तौ लहि सोग बिछोह कर भोजन परा न पेट।
✓पुनि बिसरन भा सुमिरना जब संपति भै भेंट॥ ३६॥

पदमावति पहँ आइ भँडारी। कहेसि मँदिर महँ परी मजारी
सुआ जो उतर देत रह पूछा। उड़िगा, पिँजर न बोलै छूँछा
रानी सुना सबहि सुख गयऊ। जनु निसि परी, अस्त दिन भयऊ
गहने गही चाँद कै करा। आँसु गगन जल नखतन्ह भरा
टूट पाल सरवर बहि लागे। कवँल बूड़, मधुकर उड़ि भागे
एहि विधि आँसु नखत होइ चूए। गगन छाँड़ि सरवर महँ ऊए
चिहुर चुई मोतिन कै माला। अब सँकेत बाँधा चहुँ पाला

'उड़ि यह सुअटा कहँ बसा खोजु सखी सो बासु।
दहुँ है धरती की सरग, पौन न पावै तासु'॥ ३७॥

चहूँ पास समुझावहिं सखी। 'कहाँ सो अब पाउब, गा पँखी
जौ लहि पींजर अहा परेवा। रहा बंदि महँ कीन्हेसि सेवा
तेहि बंदि हुति छुटै जो पावा। पुनि फिरि बंदि होइ कित आवा?
वै उड़ान-फर तहियै खाए। जब भा पंखि, पाँख तन आए
पींजर जेहि क सौंपि तेहि गयऊ। जो जाकर सो ताकर भयऊ

दस दुआर जेहि पींजर माहाँ। कैसे बाँच मँजारी पाहाँ ?
यह धरती अस केतन लीला। पेट गाढ़ अस, बहुरि न ढीला।
जहाँ न राति दिवस है जहाँ न पौन न पानि।
तेहि बन सुअटा चलि बसा कौन मिलावै आनि' ? ॥३८॥

सुऐ तहाँ दिन दस कल काटी। आय बियाध ढुका लेइ टाटी।
पैग पैग भुइँ चापत आवा। पंखिन्ह देखि हिये डर खावा।
वै तौ अड़े और बन ताका। पंडित सुआ भूलि मन थाका।
बँधिका सुआ करत सुख-केली। चूरि पाँख मेलेसि धरि डेली।
तहवाँ बहुत पंखि खरभरहीं। आपु आपु महँ रोदन करहीं।
'जौं न होत चारा कै आसा। कित चिरिहार ढुकत लेइ लासा ?
एहि झूठी माया मन भूला। ज्यों पंखी तैसै तन फूला।
हम तौ बुद्धि गँवावा बिख-चारा अस खाइ।
तैं सुअटा पंडित होइ कैसे बाझा आइ ?' ॥३९॥

सुए कहा 'हमहूँ अस भूले। टूट हिंडोल गरब जेहि झूले।
केरा के बन लीन्ह बसेरा। परा साथ तहँ बैरी केरा।
भूले हमहुँ गरब तेहि माहाँ। सो बिसरा पावा जेहि पाहाँ।
पंखिन्ह जौं बुधि होइ उजारी। पढ़ा सुआ कित धरै मँजारी।
तादिन ब्याधि भए जिउलेवा। उठे पाँख, भा नावँ परेवा।
भै बियाधि तिसना सँग खाधू। सूझै भुगुति, न सूझ बियाधू।
हम निचिंत वह आव छिपाना। कौन बियाधहि दोष अपाना।
सो औगुन कित कीजिए जिउ दीजै जेहि काज।
अब कहना है किछु नहीं मस्ट भला पखिराज' ॥४०॥

(२) रतनसेन खंड

चित्रसेन चितउर गढ़ राजा । कै गढ़ कोट चित्र सम साजा
तेहि कुल रतनसेन उजियारा । धनि जननी जनमा अस बारा
पंडित गुनि सामुद्रिक देखा । देखि रूप औ लखन बिसेखा
रतनसेन यह कुल निरमरा । रतन-जोति मनि माथे परा
पदुम पदारथ-लिखी सो जोरी । चाँद सुरुज जस होइ अँजोरी
जस मालति कहँ भौंर बियोगी । तस ओहि लागि होइ यह जोगी
सिंघलदीप जाइ यह पावै । सिद्ध होइ चितउर लेइ आवै

भोग भोज जस माना, बिक्रम साका कीन्ह ।
परखि सो रतन पारखी, सबै लखन लिखि दीन्ह ॥ १ ॥

चितउरगढ़ कर एक बनिजारा । सिंघलदीप चला बैपारा
बाम्हन हुत एक निपट भिखारी । सो पुनि चला चलत बैपारी
रिन काहू कर लीन्हेसि काढ़ी । मकु तहँ गए होइ किछु बाढ़ी
मारग कठिन बहुत दुख भयऊ । नाँघि समुद्र दीप ओहि गयऊ
देखि हाट किछु सूझ न ओरा । सबै बहुत, किछु देख न थोरा
पै सुठि ऊँच बनिज तहँ केरा । धनी पाव, निधनी मुख हेरा
लाख करोरिन्ह बस्तु बिकाई । सहसन केरि न कोउ ओनाई

सबहीं लीन्ह बेसाहना और घर कीन्ह बहोर ।
बाम्हन तहँवा लेइ का ? गाँठि साँठि सुठि थोर ॥ २ ॥

'झूरै ठाढ़ हौं, काहे क आवा। बनिज न मिला रहा पछितावा
लाभ जानि आयउँ एहि हाटा। मूर गँवाइ चलेउँ तेहि बाटा
अपने चलत सो कीन्ह कुबानी। लाभ न देख, मूर भै हानी'
तबहीं व्याध सुआ लेइ आवा। कंचन-बरन अनूप सुहावा
बेचै लाग हाट लै ओही। मोल रतन मानिक जहँ होही
बाम्हन आइ सुआ सों पूछा। 'दहुँ गुनवंत कि निरगुन छूछा
पंडित हौ तौ सुनावहु बेदू। बिनु पूछे पाइय नहिं भेदू

हौं बाम्हन औ पंडित कहु आपन गुन सोइ।
पढ़े के आगे जो पढ़ दून लाभ तेहि होइ' ॥ ३ ॥

'तब गुन मोहि अहा, हो देवा। जब पिंजर हुत छूट परेवा
अब गुन कौन जो बँद, जजमाना। घालि मँजूसा बेचै आना
रोवत रकत भयउ मुख राता। तन भा पियर, कहौं का बाता ?'
सुनि बाम्हन बिनवा चिरिहारू। 'करि पंखिन्ह कहँ मया, न मारू
निठुर होइ जिव बधसि परावा। हत्या केरि न तोहि डर आवा'
कहसि 'पंखि का दोस जनावा। निठुर तेइ जे परमँस खावा
जौं न होहि अस परमँस,खाधू। कित पंखिन्ह कहँ धरै बियाधू ?'

बाम्हन सुआ बेसाहा सुनि मति बेद गरंथ।
मिला आइ कै साथिन्ह भा चितउर के पंथ ॥ ४ ॥

तब लगि चित्रसेन सब साजा। रतनसेन चितउर भा राजा
आइ बात तेहि आगे चली। 'राजा, बनिज आए सिंघली
हैं गजमोति भरी सब सीपी। और वस्तु बहु सिंघलदीपी
बाम्हन एक सुआ लेइ आवा। कंचन-बरन अनूप सोहावा

राते स्याम कंठ दुइ काँठा। राते डहन लिखा सब पाठा
औ दुइ नयन सुहावत राता। राते ठोर अमीरस बाता
मस्तक टीका काँध जनेऊ। कबि बियास, पंडित सहदेऊ

बोल अरथ सों बोलै सुनत सीस सब डोल।
राज मँदिर महँ चाहिय अस वह सुआ अमोल'॥ ५॥

भै रजाइ जन दस दौराए। बाम्हन सुआ बेगि लेइ आए
विप्र असीसि बिनति औधारा। सुआ जीउँ नहिं करौं निरारा
सुआ असीस दीन्ह बड़ साजू। 'बड़ परताप अखंडित राजू
भागवंत बिधि बड़ औतारा। जहाँ भाग तहँ रूप जोहारा
कोइ बिनु पूछे बोल जो बोला। होइ बोल माँटी के मोला
गुनी न कोई आपु सराहा। जो बिकाइ गुन कहा सो चाहा
जौ लहि गुन परगट नहिं होई। तौ लहि मरम न जानै कोई

चतुरवेद हौं पंडित हीरामन मोहि नावँ।
पदमावति सौं मेरवौं सेव करौं तेहि ठावँ'॥ ६॥

रतनसेन हीरामन चीन्हा। एक लाख बाम्हन कहँ दीन्हा
विप्र असीसि जो कीन्ह पयाना। सुआ सो राजमँदिर महँ आना
बरनौं काह सुआ कै भाखा। धनि सो नावँ हीरामन राखा
जौ बोलै राजा मुख जोवा। जानौ मोतिन हार परोवा
जौ बोलै तौ मानिक मूँगा। नाहित मौन बाँधि रह गूँगा
मनहुँ मारि मुख अमृत मेला। गुरु होइ आप, कीन्ह जग चेला
सुरुज चाँद कै कथा जो कहेऊ। प्रेम क कहनि लाइ चित गहेऊ

जो जो सुनै धुनै सिर राजहिं प्रीति अगाहु।
अस गुनवंता नाहिं भल बाउर करिहै काहु ॥ ७ ॥

दिन दस पाँच तहाँ जो भए। राजा कतहुँ अहेरै गए
नागमती रूपवंती रानी। सब रनिवास पाट-परधानी
कै सिंगार कर दरपन लीन्हा। दरसन देखि गरब जिउ कीन्हा
बोलहु सुआ 'पियारे-नाहाँ। मोरे रूप कोइ जग माहाँ?'
हँसत सुआ पहँ आइ सो नारी। दीन्ह कसौटी ओपनिवारी
सुआ 'बानि कसि कहु कस सोना। सिंघलदीप तोर कस लोना?
कौन रूप तोरी रुपमनी। दहु हौं लोनि कि वै पदमिनी?
जो न कहसि सत सुअटा तोहि राजा कै आन।
है कोई एहि जगत महँ मोरे रूप समान' ॥ ८ ॥

सुमिरि रूप पदमावति केरा। हँसा सुआ, रानी मुख हेरा
'जेहि सरबर महँ हंस न आवा। बगुला तेहि सर हंस कहावा
दई कीन्ह अस जगत अनूपा। एक एक तें आगरि रूपा
कै मन गरब न छाजा काहू। चाँद घटा औ लागेउ राहू
लोनि बिलोनि तहाँ को कहै। लोनी सोई कंत जेहि चहै
का पूछहु सिंघल कै नारी। दिनहिं न पूजै निसि अँधियारी
पुहुप सुबास सो तिन्ह कै काया। जहाँ माथ का बरनौं पाया?
गढ़ी सो सोने सोंधै भरी सो रूपै भाग'।
सुनत रूखि भइ रानी हिये लोन अस लाग ॥ ९ ॥

'जो यह सुआ मँदिर महँ अहई। कबहुँ बात राजा सौं कहई
सुनि राजा पुनि होइ बियोगी। छाँड़ै राज, चलै होइ जोगी

बिष राखिय नहिं, होइ अँकूरू। सबद न देइ भोर तमचूरू'
धाय दामिनी-बेग हँकारी। ओहि सौंपा हीये रिस भारी
'देखु, सुआ यह है मँदचाला। भयउ न ताकर जाकर पाला
मुख कह आन, पेट बस आना। तेहि औगुन दस हाट बिकाना
पंखि न राखिय होइ कुभाखी। लेइ तहँ मारु जहाँ नहिं साखी

जेहि दिन कहँ मैं डरति हौं रैनि छपावौं सूर।
लै चह दीन्ह कवँल कहँ मोकहँ होइ मयूर' ॥ १० ॥

धाय सुआ लेइ मारै गई। समुझि गियान हिये मति भई
सुआ सो राजा कर बिसरामी। मारि न जाइ चहै जेहि स्वामी
यह पंडित—खंडित बैरागू। दोष ताहि जेहि सूझ न आगू
जो तिरिया के काज न जाना। परै धोख, पाछे पछताना
नागमती नागिनि-बुधि ताऊ। सुआ मयूर होइ नहिं काऊ
जो न कंत के आयसु माहीं। कौन भरोस नारि कै वाही?
मकु यह खोज होइ निसि आए। तुरय-रोग हरि-माथे जाए

दुइ सो छपाए ना छपै एक हत्या, एक पाप।
अंतहि करहिं बिनास लेइ सेइ साखी देइँ आप ॥ ११ ॥

राखा सुआ धाय, मति साजा। भयउ खोज निसि आयउ राजा
रानी उतर मान सौं दीन्हा। 'पंडित सुआ मँजारी लीन्हा
मैं पूछा सिंघल पदमिनी। उतर दीन्ह, तुम्ह को नागिनी?
वह जस दिन, तुम निसि अँधियारी। कहाँ बसंत करील क बारी
का तोर पुरुष रैनि कर राऊ। उलू न जान दिवस कर भाऊ

का वह पंखि कूट मुँह कूटे। अस बड़ बोल जीभ मुख छोटे
जहर चुवै जो जो कह बाता। अस हतियार लिए मुख राता
माथे नहिं बैसारिय जौं सुठि सुआ सलोन।
कान टुटैं जेहि पहिरे का लेइ करब सो सोन?' ॥ १२ ॥

राजै सुनि बियोग तस माना। जैसे हिय बिक्रम पछिताना
वह हीरामन पंडित सूआ। जो बोलै मुख अमृत चूआ
'की परान घट आनहु मती। की चलि होहु सुआ सँग सती'
चाँद जैस धनि उजियरि अही। भा पिउ-रोस, गहन अस गही
परम सोहाग निबाहि न पारी। भा दोहाग सेवा जब हारी
एसे गरब न भूलै कोई। जेहि डर बहुत पियारी सोई
रानी आइ धाय के पासा। सुआ मुआ सेँवर के आसा
'मैं पिउ-प्रीति भरोसे गरब कीन्ह जिउ माँह।
तेहि रिस हौं परहेली, रूसेउ नागर नाहँ' ॥ १३ ॥

उतर धाय तब दीन्ह रिसाई। 'रिस आपुहि, बुधि औरहि खाइ
मैं जो कहा रिसजिनि करु बाला। को न गयउ एहि रिस कर घाला?'
जुआ-हारि समुझी मन रानी। सुआ दीन्ह राजा कहँ आनी
'मानु, पीय, हौं गरब न कीन्हा। कंत तुम्हार मरम मैं लीन्हा
मिलतहु महँ जनु अहौ निरारे। तुम्ह सौं अहै अँदेस, पियारे!
मैं जानेउँ तुम्ह मोही माहाँ। देखौं ताकि तौ हौ सब पाहाँ
का रानी, का चेरी कोई। जा कहँ मया करहु भल सोई
तुम्ह सौं कोइ न जीता हारे बररुचि भोज।
पहिले आपु जो खोवै करै तुम्हार सो खोज' ॥ १४ ॥

राजै कहा 'सत्य कहु, सूआ। बिनु सत जस सेंवर कर भूआ
होइ मुख रात सत्य के बाता। जहाँ सत्य तहँ धरम सँघाता'
'सत्य कहत, राजा, जिउ जाऊ। पै मुख असत न भाखौं काऊ
पदमावति राजा कै बारी। पदुम-गंध ससि बिधि औतारी
ससि मुख, अंग मलयगिरि रानी। कनक सुगंध दुआदस बानी
अहैं जो पदमिनि सिंघल माहाँ। सुगँध रूप सब तिन्हकै छाहाँ
हीरामन हौं तेहि क परेवा। कंठा फूट करत तेहि सेवा
जौं लहि जिऔं राति-दिन सवँरौं ओहि कर नावँ।
मुख राता, तन हरियर दुहूँ जगत लेइ जावँ'॥ १५॥

हीरामन जो कवँल बखाना। सुनि राजा होइ भँवर भुलाना
'अहा जो कनक सुबासित ठाऊँ। कस न होइ हीरामन नाऊँ
को राजा, कस दीप उतंगू। जेहि रे सुनत मन भयउ पतंगू
कहु सुगंध धनि कस निरमली। भा अलि-संग कि अबहीं कली'
'का राजा हौं बरनौं तासू। सिंघलदीप आहि कैलासू
गंध्रबसेन तहाँ बड़ राजा। अछरिन्ह महँ इन्द्रासन साजा
सो पदमावति तेहि कर बारी। जो सब दीप माँह उजियारी
उअत सूर जस देखिय चाँद छपै तेहि धूप।
ऐसै सबै जाहिं छपि पदमावति के रूप'॥ १६॥

सुनि रबि नावँ रतन भा राता। 'पंडित फेरि उहै कहु बाता
तैं सुरंग मूरति वह कही। चित महँ लागि चित्र होइ रही
जनु होइ सुरुज आइ मन बसी। सब घट पूरि हिये परगसी
अब हौं सुरुज चाँद वह छाया। जल बिनु मीन रकत बिनु काया'

'पेम सुनत मन भूल न राजा। कठिन पेम, सिर देइ तौ छाजा
पेम-फाँद जो परा न छूटा। जीउ दीन्ह पै फाँद न टूटा'
'अब मैं पेम-पंथ सिर मेला। पाँव न ठेलु, राखि कै चेला

जस अनूप, तैं बरनेसि, नखसिख बरनु सिँगार।
है मोहिं आस मिलै कै जौं मेरवै करतार'॥१७॥

'का सिँगार ओहि बरनौं, राजा। ओहि क सिँगार ओही पै छाजा
प्रथम सीस कस्तूरी केसा। बलि बासुकि, का और नरेसा?
भौंर केस, वह मालति रानी। बिसहर लुरे लेहिं अरघानी
बेनी छोरि झार जौं बारा। सरग पतार होइ अँधियारा
कोंवर कुटिल केस नग कारे। लहरन्हि भरे भुअँग बैसारे
बेधे जनौं मलयगिरि बासा। सीस चढ़े लोटहिं चहुँ पासा
घुँघुरवार अलकैं बिषभरी। सँकरैं प्रेम चहैं गिउ परी

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद।
अस्टौ कुरी नाग सब अरुझ केस के बाँद॥१८॥

बरनौं माँग सीस उपराहीं। सेंदुर अबहिं चढ़ा जेहि नाहीं
बिनु सेंदुर अस जानहु दीआ। उजियर पंथ रैनि महँ कीआ
कंचन-रेख कसौटी कसी। जनु घन महँ दामिनि परगसी
सुरुज-किरिन जनु गगन बिसेखी। जमुना माँह सुरसती देखी
खड़ै धार रुहिर जनु भरा। करवत लेइ बेनी पर धरा
तेहि पर पूरि धरे जो मोती। जमुना माँझ गंग कै सोती
करवत तपा लेहिं होइ चूरू। मकु सो रुहिर लेइ देइ सेंदूरू

कनक दुवादस बानि होइ चह सोहाग वह माँग।
सेवा करहिं नखत सब उवै गगन जस गाँग ॥१९॥

कहौं लिलार दुइज कै जोती। दुइजहि जोति कहाँ जग ओती
सहस किरिन जो सुरुज दिपाई। देखि लिलार सोउ छपि जाई
का सरवरि तेहि देउँ मयंकू। चाँद कलंकी, वह निकलंकू
औ चाँदहि पुनि राहु गहासा। वह बिनु राहु सदा परगासा
तेहि लिलार पर तिलक बईठा। दुइज-पाट जानहु धुव दीठा
कनक-पाट जनु बैठा राजा। सबै सिँगार अत्र लेइ साजा
ओहि आगे थिर रहा न कोऊ। दहुँ का कहँ अस जुरै सँजोऊ

खरग, धनुक, चक; बान दुइ जग-मारन तिहि नावँ।
सुनि कै परा मुरुछि कै 'मोकहँ हए कुठावँ' ॥२०॥

'भौंहैं स्याम धनुक जनु ताना। जा सहुँ हेर मार बिप-बाना
हनै धुनै उन्ह भौंहनि चढ़े। केइ हथियार काल अस गढ़े?
नैन बाँक, सरि पूज न कोऊ। मानसरोदक उलथहिं दोऊ
राते कँवल करहिं अलि भवाँ। घूमहिं माति चहहिं अपसवाँ
उठहिं तुरंग लेहिं नहिं बागा। चाहहिं उलथि गगन कहँ लागा
जग डोलै डोलत नैनाहाँ। उलटि अड़ार जाहिं पल माहाँ
समुद-हिलोर फिरहिं जनु भूले। खंजन लरहिं, मिरिग जनु भूले

सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरंग।
आवत तीर फिरावहीं काल भौंर तेहि संग ॥२१॥

बरुनी का बरनौं इमि बनी। साधे बान जानु दुइ अनी
जुरी राम-रावन कै सैना। बीच समुद्र भए दुइ नैना

नासिक खरग देउँ कह जोगू। खरग खीन, वह बदन-सँजोगू
नासिक देखि लजानेउ सूआ। सूक आइ बेसरि होइ ऊआ
पुहुप सुगंध करहिं एहि आसा। मकु हिरकाइ लेइ हम पासा
अधर दसन पर नासिक सोभा। दारिउँ बिंब देखि सुक लोभा
खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं। दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं

देखि अमिय-रस अधरन्ह भयउ नासिका कीर।
पौन बास पहुँचावै अस रम छाँड़ न तीर॥ २२॥

अधर सुरंग अमी-रस-भरे। बिंब सुरंग लाजि बन फरे
हीरा लेइ सो बिद्रुम-धारा। बिहँसत जगत होइ उजियारा
अस कै अधर अमी भरि राखे। अबहिं अछूत, न काहू चाखे
दसन चौक बैठे जनु हीरा। औ बिच बिच रँग स्याम गँभीरा
जस भादौं-निसि दामिनि दीसी। चमकि उठै तस बनी बतीसी
जेहि दिन दसनजोति निरमई। बहुतै जोति जोति ओहि भई
जहँ जहँ बिहँसि सुभावहि हँसी। तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी

हँसन दसन अस चमके पाहन उठे छरक्कि।
दारिउँ सरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरक्कि॥ २३॥

रसना कहौं जो कह रस-बाता। अमृत-बैन सुनत मन राता
भरे प्रेम-रस बोलै बोला। सुनै सो माति घूमि कै डोला
पुनि बरनौं का सुरंग कपोला। एक नारँग दुइ किए अमोला
तेहि कपोल बाँए तिल परा। जेइ तिल देख सो तिल तिल जरा
अगिनि-बान जानौं तिल सूझा। एक कटाछ लाख दस जूझा

सो तिल गाल मेटि नहिं गयऊ। अब वह गाल काल जग भयऊ
देखत नैन परी परछाहीं। तेहि तें रात साम उपराहीं
सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाड़ि।
खिनहिं उठै, खिन बूड़ै, डोलै नहिं तिल छाँड़ि॥ २४॥

स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे। कुंडल कनक रचे उजियारे
मनि-कुंडल झलकैं अति लोने। जनु कौंधा लौकहिं दुइ कोने
दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं। नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाहीं
बरनौं गीउ कंबु कै रीसी। कंचन-तार लागि जनु सीसी
कुंदै फेरि जानु गिउ काढ़ी। हरी पुछार ठगी जनु ठाढ़ी
गए मयूर तमचूर जो हारे। उहै पुकारहिं साँझ सकारे
धनि ओहि गीउ दीन्ह बिधि भाऊ। दहुँ का सौं लेइ करै मेराऊ
कंठसिरी मुकतावली सोहै अभरन गीउ।
लागै कंठहार होइ को तप साधा जीउ?॥ २५॥

कनक-दंड दुइ भुजा कलाई। जानौं फेरि कुंदेरै भाई
कदलि-गाभ कै जानौं जोरी। औ राती ओहि कँवल-हथोरी
जानौ रकत हथोरी बूड़ी। रबि-परभात तात, वै जूड़ी
हिया थार, कुच कंचन लारू। कनक कचोर उठे जनु चारू
बेधे भौंर कंट केतकी। चाहहिं बेध कीन्ह कंचुकी
जोबन बान लेहिं नहिं बागा। चाहहिं हुलसि हिये हठि लागा
उतँग जँभीर होइ रखवारी। छुइ को सकै राजा कै बारी
राजा बहुत मुए तपि लाइ लाइ भुइँ माथ।
काहू छुवै न पाए गए मरोरत हाथ॥ २६॥

पेट परत जनु चंदन लावा। कुहँ कुहँ केसर बरन सुहावा।
साम भुअंगिनि रोमावली। नाभी निकसि कँवल कहँ चली।
आइ दुऔ नारँग बिच भई। देखि मयूर ठमकि रहि गई।
मनहु चढ़ी भौरन्ह कै पाँती। चंदन खाँभ बास कै माती।
कैगिनि पीठ लीन्ह वह पाछे। जनु फिरि चली अपछरा काछे।
मलयागिरि कै पीठ सँवारी। बेनी नागिनि चढ़ी जो कारी।
लहरैं देति पीठ जनु चढ़ी। चीर-ओहार केंचु ली मढ़ी।

पन्नग पंकज मुख गहे खंजन तहाँ बईठ।

छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ॥ २७॥

लंक पहुमि अस आहि न काहू। केहरि कहौं न ओहि सरि ताहू।
बसा-लंक बरनै जग झीनी। तेहि तें अधिक लंक वह खीनी।
परिहँस पियर भए तेहि बसा। लिए डंक लोगन्ह कहँ डसा।
मानहुँ नालखंड दुइ भए। दुहुँ बिच लंक तार रहि गए।
हिय के मुरे चले वह तागा। पैग देत कित सहि सक लागा?
नाभिकुंड सो मलय-समीरू। समुद भँवर जस भँवै गँभीरू।
बोवइ कँवल-सुगन्ध सरीरू। समुद-लहरि सोहै तन चीरू।

बरनि सिंगार न जानेउँ नखसिख जैस अभोग।

तस जग किछुइ न पायउँ उपमा देउँ ओहि जोग'॥ २८॥

सुनतहि राजा गा मुरछाई। जानौं लहरि सुरुज कै आई।
पेम-घाव-दुख जान न कोई। जेहि लागै जानै पै सोई।
परा सो पेम-समुद्र अपारा। लहरहिं लहर होइ बिसँभारा।

बिरह-भौंर होइ भाँवरि देई । खिन खिन जीउ हिलोरा लेई
खिनहिं उसास बूड़ि जिउ जाई । खिनहिं उठै निसरै बौराई
खिनहिं पीत, खिन होइ मुख सेता । खिनहिं चेत, खिन होइ अचेता
कठिन मरन ते प्रेम-बेवस्था । ना जिउ जियै, न दसवँ अवस्था
जनु लेनिहार न लेहिं जिउ हरहिं तरासहिं ताहि ।
एतनै बोल आव मुख करै "तराहि तराहि" ॥ २९ ॥

जहँ लगि कुटुँब लोग औ नेगी । राजा राय आय सब बेगी
जावत गुनी गारुड़ी आए । ओझा, बैद, सयान बोलाए
राजहिं आहि लखन कै करा । सकति-बान मोहा है परा
नहिं सो राम, हनिवँत बड़ि दूरी । को लेइ आव सजीवन-मूरी ?
जब भा चेत उठा बैरागा । बाउर जनौं सोइ उठि जागा
आवत जग बालक जस रोआ । उठा रोइ 'हा ग्यान सो खोआ'
अब जिउ उहाँ, इहाँ तन सूना । कब लगि रहै परान-बिहूना
अहुठ हाथ तन-सरवर, हिया कँवल तेहि माहँ ।
नैनहि जानहु नीयरे, कर पहुँचत औगाह ॥ ३० ॥

सबन्ह कहा 'मन समुझहु राजा । काल सेंति कै जूझ न छाजा
तासौं जूझ जात जो जीता । जानत क्रिस्न तजा गोपीता
औ न नेह काहू सौं कीजै । नावँ मिटै, काहे जिउ दीजै'
सुए कहा 'मन बूझहु राजा । करब पिरीति कठिन है काजा
तुम राजा जेईं घर पोई । कवँल न भेटेउ, भेंटेउ कोई
जानहिं भौंरि जो तेहि पथ लूटे । जीउ दीन्ह औ दियहु न छूटे
कठिन आहि सिंघल कर राजू । पाइय नाहिं जूझ कर साजू

साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्प ।
सो पै जानै बापुरा करै जो सीस कलप्प ॥ ११ ॥

का भा जोग-कथनि के कथे । निकसै घीउ न बिन दधि मथे
जौ लहि आप हेराइ न कोई । तौ लहि हेरत पाव न सोई
तू राजा का पहिरसि कंथा । तोरे घरहि माँझ दस पंथा
काम, क्रोध,तिस्ना, मद, माया । पाँचौ चोर न छाँड़हिं काया'
सुनि सो बात राजा मन जागा । पलक न मार, पेम चित लागा
'गुरू बिरह-चिनगी जो मेला । जो सुलगाइ लेइ सो चेला
अब करि फनिग भृंग कै करा । भौंर होहुँ जेहि कारन जरा

फूल फूल फिरि पूँछौं जौ पहुँचौं ओहि केत ।
तन नेवछावरि कै मिलौं ज्यौं मधुकर जिउ देत' ॥ ३२ ॥

बंधु मीत बहुतै समुझावा । मान न राजा कोउ भुलावा
उपजी पेम-पीर जेहि आई । परबोधत होइ अधिक सो आई
तजा राज, राजा भा जोगी । औ किँगरी कर गहेउ बियोगी
तन बिसँभर, मन बाउर लटा । अरुझा पेम, परी सिर जटा
चंद्र-बदन औ चंदन-देहा । भसम चढ़ाइ कीन्ह तन खेहा
कंथा पहिरि दंड कर गहा । सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा
मुद्रा स्रवन, कंठ जपमाला । कर उदपान, काँध बघछाला

चला भुगुति माँगै कहँ साधि कया तप जोग ।
सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये बियोग ॥ ३३ ॥

गनक कहहिँ गनि 'गौन न आजू । दिन लइ चलहु,होइ सिध काजू'
'पेम-पंथ दिन घरी न देखा । तब देखै जब होइ सरेखा

जेहि तन पेम कहाँ तेहि माँसू । कया न रकत नैन नहिं आँसू
पंडित भूल न जानै चालू । जीउ लेत दिन पूछ न कालू
सती कि बौरी पूछहि पाँडे । औ घर पैठि कि सैंतै भाँडे
मरै जो चलै गंग-गति लेई । तेहि दिन कहाँ घरी को देई ?
मैं घर बार कहाँ कर पावा । घरी क आपन, अंत परावा

हौं रे पथिक पखेरू जेहि बन मोर निबाहु ।
खेलि चला तेहि बन कहँ तुम अपने घर जाहु' ॥ ३४ ॥

चहुँ दिसि आन साँटिया फेरी । भै कटकाई राजा केरी
'राजा चला साजि कै जोगू । साजहु बेगि चलहु सब लोगू
गरब जो चढ़े तुरय की पीठी । अब भुइँ चलहु सरग कै डीठी'
बिनवै रतनसेन कै माया । 'माथे छात, पाट नित पाया
बिलसहु नौ लख लच्छि पियारी । राज छाँड़ि जिनि होहु भिखारी
निति चंदन लागै जेहि देहा । सो तन देख भरत अब खेहा
सब दिन रहेहु करत तुम भोगू । सो कैसे साधव तप जोगू ?

राजपाट, दर, परिगह तुम्ह ही सौं उजियार ।
बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधियार' ॥ ३५ ॥

'मोहिं यह लोभ सुनाव न माया । काकर सुख, काकर यह काया ?
जो निआन तन होइहि छारा । माटिहि पोखि मरै को भारा ?
जौ भल होत राज औ भोगू । गोपिचंद नहिं साधत जोगू
रोवहिं नागमती रनिवासू । 'केइ तुम्ह कंत दीन्ह बनबासू
अब को हमहिं करहि भोगिनी । हमहू साथ होब जोगिनी

तुम्ह अस बिछुरै पीउ पिरीता । जहँवाँ राम तहाँ सँग सीता
जौ लहि जिउ सँग छाँड़ न काया । करिहौं सेव, पखरिहौं पाया
देहिं असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात ।
राज करहु चितउरगढ़ राखहु पिय अहिबात' ॥ ३६ ॥

'तुम्ह तिरिया मति हीन तुम्हारी । मूरुख सो जो मतै घर-नारी
रावन जो सीता सँग लाई । रावन हरी, कौन सिधि पाई ?
यह संसार सपन कर लेखा । बिछुरि गए जानौं नहिं देखा'
रोवत माय, न बहुरत बारा । रतन चला, घर भा अँधियारा
'बार मोर जो राजहि रता । सो लै चला, सुआ परबता'
रोवहिं रानी, तजहिं पराना । नोचहिं बार, करहिं खरिहाना
चूरहिं गिउ-अभरन, उर-हारा । 'अब का पर हम करब सिँगारा ?'
टूटे मन नौ मोती फूटे मन दस काँच ।
लीन्ह समेटि सब अभरन होइगा दुख कर नाच ॥३७॥

निकसा राजा सिंगी पूरी । छाँड़ा नगर मेलि कै धूरी
राय रान सब भए बियोगी । सोरह सहस कुँवर भए जोगी
नगर नगर औ गाँवहिं गाँवाँ । छाँड़ि चले सब ठाँवहिं ठाँवां
का कर मढ़, का कर घर माया । ताकर सब जाकर जिउ काया
आगे सगुन सगुनियै ताका । दहिने माछ रूप के टाँका
भरेकलस तरुनी जल आई । 'दहिउ लेहु' ग्वालिनि गोहराई
मालिनि आव मौर लिए गाँथे । खंजन बैठ नाग के माथे
जा कहँ सगुन होहिं अस औ गवनै जेहि आस ।
अस्ट महासिधि तेहि कहँ जस कबि कहा बियास ॥ ३८ ॥

भयउ पयान चला पुनि राजा। सिंगि-नाद जोगिन कर बाजा
कहेन्हि 'आजु किछु थोर पयाना। कालिह पयान दूरि है जाना
ओहि मिलान जौं पहुँचै कोई। तब हम कहब पुरुष भल सोई
है आगे परबत कै बाटा। बिषम पहार अगम सुठि घाटा
करहु दीठि थिर होइ बटाऊ। आगे देखि धरहु भुइँ पाऊ
पाँयन पहिरि लेहु सब पौंरी। काँट धसै, न गड़ै अँकरौरी
परे आइ बन परबत माहाँ। दंडाकरन बीझ-बन जाहाँ

एक बाट गइ सिंघल, दूसरि लंक समीप।
हैं आगे पथ दूऔ दहुँ गौनब केहि दीप'॥ ३९॥

ततखन बोला सुआ सरेखा। 'अगुआ सोइ पंथ जेइ देखा
सुनु मत, काज चहसि जौं साजा। पहुँचहु नगर बिजयगिरि राजा'
मासेक लाग चलत तेहि बाटा। उतरे जाइ समुद के घाटा
रतनसेन भा जोगी-जती। सुनि भेंटै आवा गजपती
'आए भलेहि, मया अब कीजै। पहुनाई कहँ आयसु दीजै'
'सुनहु, गजपती, उतर हमारा। हम तुम्ह एकै, भाव निरारा
इहै बहुत जौ बोहित पावौं। तुम्ह तैं सिंघलदीप सिधावौं

जहाँ मोहिं निजु जाना कटक होउँ लेइ पार।
जौं रे जिऔं तौ बहुरौं मरौं त ओहि के बार'॥ ४०॥

गजपति कहा 'सीस पर माँगा। बोहित नाव न होइहि खाँगा
ए सब देउँ आनि नव-गढ़े। फूल सोइ जो महेसुर चढ़े
पै गोसाइँ सन एक बिनाती। मारग कठिन जाब केहि भाँती'
'गजपति' यह मन सकती-सीऊ। पै जेहि पेम कहाँ तेहि जीऊ

जौं पै जीउ बाँध सत बेरा। बरु जिउ जाइ फिरै नहिं फेरा
हौं पदमावति कर भिखमंगा। दीठि न आव समुद औ गंगा
जेहि कारन गिउ काथरि कंथा। जहाँ सो मिलै जावँ तेहि पंथा

सरग सीस, धर धरती, हिया सो पेम-समुंद।
नैन कौड़िया होइ रहे लेइ लेइ उठहिं सो बुंद'॥४१॥

सो न डोल देखा गजपती। राजा सत्त दत्त दुहुँ सँती
निहचै चला भरम जिउ खोई। साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई
निहचै चला छाँड़ि कै राजू। बोहित दीन्ह, दीन्ह सब साजू
चढ़ा बेगि, सब बोहित पेले। धनि सो पुरुष पेम जेइ खेले
जस बन रेंगि चलै गज-ठाटी। बोहित चले, समुद गा पाटी
धावहिं बोहित मन उपराहीं। सहस कोस एक पल महँ जाहीं
समुद अपार सरग जनु लागा। सरग न घाल गनै बैरागा

'दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम।
बोहित पार होइ जब तबहि कुसल औ खेम' ॥४२॥

राजै कहा 'कीन्ह मैं पेमा। जहाँ पेम कहँ कूसल खेमा
सायर तरै हिये सत पूरा। जौ जिउ सत, कायर पुनि सूरा
तेइ सत बोहित कुरी चलाए। तेइ सत पवन पंख जनु लाए
सत साथी, सत कर संसारू। सत्त खेइ लेइ आवै पारू'
उठै लहरि जनु ठाढ़ पहारा। चढ़ै सरग औ परै पतारा
डोलहिं बोहित लहरैं खाहीं। खिन तर होहिं, खिनहिं उपराहीं
राजै सो सत हिरदै बाँधा। जेहि सत टेकि करै गिरि काँधा

खार समुद सो नाँघा आए समुद जहँ खीर ।
मिले समुद वै सातौ बेहर बेहर नीर ॥४३॥

खीर समुद का बरनौं नीरू । सेत सरूप, पियत जस खीरू
दधि-समुद्र देखत तह दाधा । पेम क लुबुध दगध पै साधा
आए उदधि समुद्र अपारा । धरती सरग जरै तेहि झारा
सुरा समुद पुनि राजा आवा । महुआ मद-छाता देखरावा
पुनि किलकिला समुद महँ आए । गा धीरज, देखत डर खाए
उठै लहरि परबत कै नाईं । फिरि आवै जोजन सौ ताईं
धरती लेइ सरग लहि बाढ़ा । सकल समुद जानहुँ भा ठाढ़ा
गै औसान सबन्ह कर देखि समुद कै बाढ़ि ।
नियर होत जनु लीलै रहा नैन अस काढ़ि ॥४४॥

हीरामन राजा सौं बोला । 'एही समुद आए सत डोला
सिंघलदीप जो नाहिं निबाहू । एही ठावँ साँकर सब काहू
एहि किलकिला समुद्र गँभीरू । जेहि गुन होइ सो पावै तीरू
इहै समुद्र-पंथ मँझधारा । खाँड़ै कै असि धार निनारा'
राजै दीन्ह कटक कहँ बीरा । 'सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा'
ठाकुर 'जेहिक सूर भा कोई । कटक सूर पुनि आपुहि होई
जौ लहि सती न जिउ सत बाँधा । तौ लहि देइ कहाँर न काँधा
कान समुद धँसि लीन्हेसि भा पाछे सब कोइ ।
कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥४५॥

कोइ बोहित जस पौन उड़ाहीं । कोई चमकि बीजु अस जाहीं
कोई जस भल धाव तुखारू । कोई जैस गरियारू

कोइ जानहुँ हरुआ रथ हाँका। कोई गरुअ भार बहु थाका
कोई रेंगहि जानहुँ चाँटी। कोई टूटि होहिं तर माटी
कोई खाहिं पौन कर झोला। कोई करहिं पात अस डोला
कोई परहिं भौंर जल माहाँ। फिरत रहहिं, कोइ देइ न बाहाँ
राजा कर भा अगमन खेवा। खेवक आगे सुआ परेवा

कोइ दिन मिला सबेरे, कोइ आवा पछ-राति।
जाकर जस जस साजु हुत सो उतरा तेहि भाँति ॥ ४६ ॥

सतएँ समुद मानसर आए। मन जो कीन्ह साहस, सिधि पाए
गा अँधियार, रैनि-मसि छूटी। भा भिनसार किरिन-रबि फूटी
'अस्ति अस्ति' सब साथी बोले। अंध जो अहै नैन बिधि खोले
कवँल बिगस तस बिहँसी देहीं। भौंर दसन होइ कै रस लेहीं
पूछा राजै 'कहु गुरु सूआ। न जनौं आजु कहाँ दहुँ ऊआ
कबहुँ न ऐस जुड़ान सरीरू। परा अगिनि महँ मलय-समीरू
निकसत आव किरिन-रबि-रेखा। तिमिर गए निरमल जग देखा

और दखिन दिसि नीयरे कंचन-मेरु देखाव।
जनु बसन्त रितु आवै तैसि बास जग आव' ॥ ४७ ॥

'तूँ राजा जस बिकरम आदी। तू हरिचन्द बैन सतबादी
जीत पेम तुइँ भूमि अकासू। दीठि परा सिंहल-कैलासू
तहाँ देखु पदमावति रामा। भौंर न जाइ, न पंखी नामा
कंचन-मेरु देखाव सो जहाँ। महादेव कर मंडप तहाँ
माघ मास, पाछिल पछ लागे। सिरी-पंचमी होइहि आगे

उघरिहि महादेव कर बारू। पूजिहि जाइ सकल संसारू
पदमावति पुनि पूजै आवा। होइहि इहि मिस दीस-मेरावा
तुम्ह गौनहु ओहि मंडप, हौं पदमावति पास।
पूजै आइ बसंत जब तब पूजै मन-आस'॥ ४८॥

---

(३) प्रेम खंड

पदमावति तेहि जोग सँजोगा। परी पेम-बस गहे बियोगा
नींद न परै रैनि जौं आवा। सेज केंवाच जानु कोइ लावा
दहै चंद औ चंदन चीरू। दगध करै तन बिरह गँभीरू
कलप समान रैनि तेहि बाढ़ी। तिल तिल भर जुगजुग जिमि गाढ़ी
गहै बीन मकु रैनि बिहाई। ससि-बाहन तहँ रहै ओनाई
पुनि धनि सिंघ उरेहै लागै। ऐसिहि बिथा रैनि सब जागै
कहँ वह भौंर कँवल-रस-लेवा। आइ परै होइ घिरिनि परेवा

सो धनि बिरह पतंग भइ जरा चहै तेहि दीप।
कंत न आव भिरिंग होइ का चंदन तन लीप ? ॥ १ ॥

परी बिरह बन जानहुँ घेरी। अगम असूझ जहाँ लगि हेरी
चतुर दिसा चितवै जनु भूली। सो बन कहँ जहँ मालति फूली ?
कँवल भौंर ओही बन पावै। को मिलाइ तन-तपनि बुझावै ?
अंग अंग अस कँवल सरीरा। हिय भा पियर कहै पर पीरा
चहै दरस, रबि कीन्ह बिगासू। भौंर-दीठि मनो लागि अकासू
पूँछै धाय, 'बारि, कहु बाता। तुइँ जस कवँल फूल रँग राता
केसर-बरन हिया भा तोरा। मानहुँ मनहिं भयउ किछु भोरा

पौन न पावै संचरै भौंर न तहाँ बईठ।
भूलि कुरंगिनि कस भई जानु सिंघ तुइँ डीठ' ॥ २ ॥

'धाय' सिंह बरु खातेउ मारी। की तसि रहति अही जसि बारी
जोबन सुनेउँ कि नवल बसंतू। तेहि बन परेउ हस्ति मैमंतू
अब जोबन-बारी को राखा। कुंजर-बिरह बिधंसै साखा
मैं जानेउँ जोबन रस-भोगू। जोबन कठिन सँताप बियोगू'
'पद्मावति, तुइँ समुद सयानी। तोहि सरि समुद न पूजै, रानी
नदी समाहिं समुद महँ आई। समुद डोलि कहु कहाँ समाई ?
अबहीं कवँल-करी हिय तोरा। आइहि भौंर जो तो कहँ जोरा

जब लगि पीउ मिलै नहिं साधु पेम कै पीर।
जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मँझ नीर' ॥ ३ ॥

'उहै, धाय, जोबन एहि जीऊ। जानहुँ परा अगिनि महँ घीऊ
करवत सहौं होत दुइ आधा। सहि न जाइ जोबन के दाधा
बिरह समुद्र भरा असँभारा। भौंर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा'
कहेसि 'पेम जौं उपना, बारी। बाँधु सत्त, मन डोल न भारी
सती जो जरै पेम सत लागी। जौं सत हिये तौ सीतल आगी
पौन बाँध सो जोगी जती। काम बाँध सो कामिनि सती
आव बसंत फूल फुलवारी। देव-बार सब जैहैं बारी

तुम्ह पुनि जाहु बसंत लेइ पूजि मनावहु देव।
जीउ पाइ जग जनम है पीउ पाइ कै सेव' ॥ ४ ॥

जब लगि अवधि आइ नियराई। दिन जुग जुग बिरहिनि कहँ जाई
तेहि बियोग हीरामन आवा। पदमावति जानहु जिउ पावा
कंठ लाइ सूआ सौं रोई। अधिक मोह जौं मिलै बिछोई
रही रोइ जब पदमिनि रानी। हँसि पूछहिं सब सखी सयानी

'मिले रहस भा चाहिय दूना। कित रोइय जौं मिलै बिछूना' ?
तेहि क उतर पदमावति कहा। 'बिछुरन-दुख जो हिये भरि रहा
मिलत हिये आयउ सुख भरा। वह दुख नैन-नीर होइ ढरा

बिछुरंता जब भेंटै सो जानै जेहि नेह।
सुक्ख सुहेला उग्गवै दुःख झरै जिमि मेह' ॥ ५ ॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूछा। 'कित गवनेहु पींजर कै छूँछा'
'रानी' तुम्ह जुग जुग सुख पाटू। छाज न पंखिहि पींजर-ठाटू
जब भा पंख कहाँ थिर रहना। चाहै उड़ा पंखि जौं डहना
पींजर महँ जो परेवा घेरा। आइ मजारि कीन्ह तहँ फेरा
दिन एक आइ हाथ पै मेला। तेहि डर बनोबास कहँ खेला
तहाँ बियाध आइ नर साधा। छूटि न पाव मीचु कर बाँधा
वै धरि बेचा बाम्हन हाथा। जंबूदीप गयउँ तेहि साथा

तहाँ चित्र चितउरगढ़ चित्रसेन कर राज।
टीका दीन्ह पुत्र कहँ, आपु लीन्ह सब साज ॥ ६ ॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ। राजा रतनसेन ओहि नाऊँ
बरनौं काह देस मनियारा। जहँ अस नग उपना उँजियारा
धनि माता औ पिता बखाना। जेहि के बंस अंस अस आना
लछन बतीसौ कुल निरमला। बरनि न जाइ रूप औ कला
वै हौं लीन्ह, अहा अस भागू। चाहै सोने मिला सोहागू
सो नग देखि हींछा भइ मोरी। है यह रतन पदारथ जोरी
है ससि जोग इहै पै भानू। तहां तुम्हार मैं कीन्ह बखानू

कहाँ रतन रतनागर कंचन कहां सुमेरु।
दैव जो जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कौनेहु फेर ॥ ७ ॥

सुनत बिरह-चिनगी ओहि परी। रतन पाव जौं कंचन-करी
कठिन पेम बिरहा दुख भारी। राज छांड़ि भा जोगि-भिखारी
कहेसि पतंग होइ धन लेऊँ। सिंघलदीप जाइ जिउ देऊँ'
हीरामन जो कही यह बाता। सुनि कै रतन पदारथ राता
जस सूरुज देखे होइ ओपा। तस भा बिरह, काम दल कोपा
सुनि कै जोगी केर बखानू। पद्मावति मन भा अभिमानू
'कंचन-करी न काँचहिं लोभा। जौ नग होइ पाव तब सोभा
सरग इंद्र डरि काँपै बासुकि डरै पतार।
कहाँ सो अस वर प्रिथमी मोहिं जोग संसार' ॥८॥

'तू, रानी, ससि कंचन-करा। वह नग रतन सूर निरमरा
बिरह-बजागि बीच का कोई। आगि जो छुवै जाइ जरि सोई
आगि बुझाइ परे जल गाढ़ै। वह न बुझाइ आपु ही बाढ़ै'
सुनि कै धनि, जारी अस कया। तब भा मयन, हिये भै मया
'देखौं जाइ जरै कस भानू। कंचन जरे अधिक होइ वानू
जौं वह जोग सँभारै छाला। पाइहि भुगुति, देहुँ जयमाला
आव बसंत कुसल जौं पावौं। पूजा मिसि मंडप कहँ आवौं
कँवल-भवँर तुम्ह बरना मैं माना पुनि सोइ।
चाँद-सूर कहँ चाहिय जौं रे सूर वह होइ' ॥ ९ ॥

हीरामन जो सुना रस बाता। पावा पान भयउ मुख राता
चला सुआ, रानी तब कहा। 'भा जो परावा कैसे रहा ?'

'सुनु रानी, हौं रहतेउँ राधा । कैसे रहौं बचन कर बाँधा'
आवा सुआ बैठ जहँ जोगी । मारग नैन, बियोग बियोगी
आइ पेम-रस कहा सँदेसा । 'गोरख मिला, मिला उपदेसा
तुम्ह कहँ गुरू मया बहु कीन्हा । कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा
सबद, एक उन्ह कहा अकेला । गुरु जस भिंग, फनिग जस चेला

आवै रितू बसंत जब तब मधुकर, तब बासु ।
जोगी जोग जो इमि करै सिद्धि समापत तासु' ॥ १० ॥

दैउ दैउ कै रितु सो गँवाई । सिरी-पचमी पहुँची आई
भयउ हुलास नवल रितु माहाँ । खिन न सोहाइ धूप औ छाहाँ
पदमावति सब सखी हँकारी । जावत सिंघलदीप कै बारी
आजु बसंत नवल रितुराजा । पंचमि होइ, जगत सब साजा
नवल सिँगार बनस्पति कीन्हा । सीस परासहिं सेंदुर दीन्हा
बिगसि फूल फूले बहु बासा । भौंर आइ लुबुधे चहुँ पासा
पियर-पात-दुख झरे निपाते । सुख-पल्लव उपने होइ राते

अवधि आइ सो पूजी जो हींछा मन कीन्ह ।
चलहु देवमढ़ गोहने चहहुँ सो पूजा दीन्ह ॥ ११ ॥

फिरी आन, रितु-बाजन बाजे । औ सिँगार बारिन्ह सब साजे
कवँल-कली पदमावति रानी । होइ मालति जानौं बिगसानी
तारा-मँडल पहिरि भल चोला । भरे सीस सब नखत अमोला
सखी कुमोद सहस दस संगा । सबै सुगंध चढ़ाए अंगा
सब राजा रायन्ह कै बारी । बरन बरन पहिरे सब सारी

सबै सुरूप, पदमिनी जाती । पान, फूल, सेंदुर सब राती
करहिं किलोल सुरंग-रँगीली । औ चोवा चंदन सब गीली

चहुँ दिसि रही सो बासना फुलवारी अस फूलि ।
वै बसंत सौं भूलीं गा बसंत उन्ह भूलि ॥ १२ ॥

भै आग्या पदमावति चली । छत्तिस कुरि भईं गोहन भली
कवँल सहाय चलीं फुलवारी । फर फूलन सब करहिं धमारी
आपु आपु महँ करहिं जोहारू । यह बसंत सबकर तिवहारू
चहै मनोरा झूमक होई । फर औ फूल लियेउ सब कोई
फागु खेलि पुनि दाहब होरी । सैंतब खेह, उड़ाउब झोरी
भा आयसु पदमावति केरा । 'बहुरि न आइ करब हम फेरा
तस हम कहँ होइहि रखवारी । पुनि हम कहाँ, कहाँ यह बारी

पुनि रे चलब घर आपने पूजि बिसेसर-देव ।
जेहि काहुहि होइ खेलना आजु खेलि हँसि लेव' ॥ १३ ॥

काहू गही आँब कै डारा । काहू जाँबु बिरह अति झारा
पुनि बीनहिं सब फूल सहेली । खोजहिं आस-पास सब बेली
फर फूलन्ह सब डार ओढ़ाई । झुंड बाँधि कै पंचम गाई
बाजहिं ढोल दुंदुभी भेरी । मादर, तूर, झाँझ चहुँ फेरी
रथहिं चढ़ीं सब रूप सोहाई । लेइ बसंत मठ-मँडप सिधाई
नवल बसंत, नवल सब बारी । सेंदुर बुक्का होइ धमारी
खिनहिं चलहिं, खिन चाँचरि होई । नाँच कूद भूला सब कोई

सेंदुर-खेह उड़ा अस, गगन भयउ सब रात ।
राती सगरिउ धरती, राते बिरिछन्ह पात ॥ १४ ॥

एहि बिधि खेलति सिंघलरानी। महादेव-मढ़ जाइ तुलानी
पदमावति गै देव-दुआरा। भीतर मँडप कीन्ह पैसारा
एक जोहार कीन्ह औ दूजा। तिसरे आइ चढ़ाएसि पूजा
फर फूलन्ह सब मँडप भरावा। चंदन अगर देव नहवावा
लेइ सेंदुर आगे भै खरी। परसि देव पुनि पायन्ह परी
'और सहेली सबै बियाहीं। मो कहँ, देव, कतहुँ बर नाहीं
हौं निरगुन जेइ कीन्ह न सेवा। गुनि निरगुनि दाता तुम्ह, देवा
बर सौं जोग मोहि मेरवहु कलस जाति हौं मानि।
जेहि दिन हींछा पूजै बेगि चढ़ावहुँ आनि' ॥ १५ ॥
ततखन एक सखी बिहँसानी। 'कौतुक आइ न देखहु रानी
पुरुब द्वार मढ़ जोगी छाए। न जनौं कौन देस तें आए
जनु उन्ह जोग तंत तन खेला। सिद्ध होइ निसरे सब चेला
उन्ह महँ एक गुरू जो कहावा। जनु गुड़ देइ काहू बौरावा
कुँवर बतीसौ लच्छन राता। दसएँ लछन कहै एक बाता
जानौं आहि गोपिचँद जोगी। की सो आहि भरथरी बियोगी
वै पिंगला गए कजरी-आरन। ए सिंघल आए केहि कारन?
यह मूरति यह मुद्रा हम न देख अवधूत।
जानौं होहि न जोगी कोइ राजा कर पूत' ॥ १६ ॥
सुनि सो बात रानी रथ चढ़ी। कहँ अस जोगी देखौं मढ़ी
लेइ सँग सखी कीन्ह तहँ फेरा। जोगिन्ह आइ अपछरन्ह घेरा
नयन चकोर पेम-मद-भरे। भइ सुदिष्टि जोगी सहुँ ढरे
जोगी दिस्टि दिस्टि सौं लीन्हा। नैन रोपि नैनहिं जिउ दीन्हा

जेहि मद चढ़ा परा तेहि पाले। सुधि न रही ओहि एक पियाले
परा माति गोरख कर चेला। जिउ तन छाँड़ि सरग कहँ खेला
किंगरी गहे जो हुत बैरागी। मरतिहु बार उहै धुनि लागी

जेहि धंधा जाकर मन लागै सपनेहु सूझ सो धंध।
तेहि कारन तपसी तप साधहिं, करहिं पेम मन बंध ॥ १७ ॥

पद्मावति जस सुना बखानू। सहस-करा देखेसि तस भानू
मेलेसि चंदन मकु खिन जागा। अधिकौ सूत, सीर तन लागा
तब चंदन आखर हिय लिखे। 'भीख लेइ तुइँ जोग न सिखे
घरी आइ तब गा तूँ सोई। कैसे भुगुति परापति होई'?
कीन्ह पयान सबन्ह रथ हाँका। परबत छाँड़ि सिंघलगढ़ ताका
बलि भए सबै देवता बली। हत्यारिन हत्या लेइ चली
बिनु जिउ पिंड' छार कर कूरा। छार मिलावै सो हित पूरा

परी कया भुइँ लोटै, कहाँ रे जिउ बलि भीउँ।
को उठाइ बैठारै बाज पियारे जीउ ॥ १८ ॥

पद्मावति सो मंदिर पईठी। हँसत सिंघासन जाइ बईठी
निसि सूती सुनि कथा बिहारी। भा बिहान कह सखी हँकारी
'देव पूजि जस आइउँ, काली। सपन एक निसि देखिउँ आली
जनु ससि उदय पुरुब दिसि लीन्हा। औ रबि उदय पछिउँ दिसि कीन्हा
पुनि चलि सूर चाँद पहँ आवा। चाँद सुरुज दुहुँ भयउ मेरावा
दिन औ राति भए जनु एका। राम आइ रावन गढ़ छेका
तस किछु कहा न जाइ निखेधा। अरजुन-बाम राहु गा बेधा

जनहुँ लंक सब लूटी हनुवँ बिधंसी बारि।
जागि उठउँ अस देखत, सखि, कहु सपन बिचारि' ॥१९॥

सखी सो बोली सपन-बिचारू। 'कालिह जो गइहु देव के बारू
पूजि मनाइहु बहुतै भाँती। परसन आइ भए तुम्ह राती।
सूरुज पुरुष चाँद तुम रानी। अस बर दैउ मेरावै आनी
पच्छिउँ खँड कर राजा कोई। सो आवा बर तुम्ह कहँ होई
किछु पुनि जूझ लागि तुम्ह रामा। रावन सौं होइअ सँगरामा
चांद सुरज सौं होइ बियाहू। बारि बिधंसब बेधव राहू
जस ऊषा कहँ अनिरुध मिला। मेटि न जाइ लिखा पुरबिला
सुख सोहाग जो तुम्ह कहँ पान फूल रस भोग।
आजु कालिह भा चाहै अस सपने का सँजोग' ॥ २० ॥

कै बसंत पदमावति गई। राजहि तब बसंत सुधि भई
जो जागा न बसंत न बारी। ना वह खेल न खेलनहारी
ना वह ओहि कर रूप सुहाई। गै हेराइ, पुनि दिस्टि न आई
केइ यह बसत बसंत उजारा ?। गा सो चाँद, अथवा लेइ तारा
बिरह-दवा को जरत सिरावा ?। को पीतम सौं करै मेरावा ?
जस बिछोह जल मीन दुहेला। जल हुँत काढ़ि अगिनि महँ मेला
चदन-आँक दाग हिय परे। बुझहि न ते आखर परजरे
आइ बसंत जो छपि रहा होइ फूलन्ह के भेस।
केहि बिधि पावौं भौंर होइ कौन गुरू-उपदेस ॥२१॥

रोवै रतन-माल जनु चूरा। जहँ होइ ठाढ़, होइ तहँ कूरा
'कहाँ सो मूरति परी जो डीठी। काढ़ि लिहेसि जिउ हिये पईठी

अरे मलिछ विसवासी देवा। कित मैं आइ कीन्ह तोरि सेवा
सुफल लागि पग टेकेउँ तोरा। सुआ क सेंवर तू भा मोरा
पाहन चढ़ि जो चहै भा पारा। सो ऐसे बूड़ै मँझधारा
पाहन सेवा कहाँ पसीजा?। जनम न ओद होइ जौ भींजा
बाउर सोइ जो पाहन पूजा। सकत को भार लेइ सिर दूजा?

सिंध तरंदा जेइ गहा पार भए तेहि साथ।
ते पै बूड़े बाउरे भेंड़-पूछि जिन्ह हाथ ॥२२॥

आनहिं दोस देहुँ का काहू। संगी कया मया नहिं ताहू
हता पियारा मीत बिछोई। साथ न लाग आपु गै सोई
का मैं कीन्ह जो काया पोषी। दूषन मोहिं, आप निरदोषी
फागु बसंत खेलि गई गोरी। मोहि तन लाइ बिरह कै होरी
अब अस कहाँ छार सिर मेलौं?। छार जो होहुँ फाग तब खेलौं
कित तप कीन्ह छाँड़ि कै राजू। गयउ अहार न भा सिध काजू
पायउँ नहिं होइ जोगी जती। अब सर चढ़ौं जरौं जस सती

आइ जो पीतम फिरि गा मिला न आइ बसंत।
अब तन होरी घालि कै जारि करौं भसमंत' ॥ २३ ॥

हनुमत बीर लंका जेहि जारी। परवत उहै अहा रखवारी
बैठि तहाँ होइ लंका ताका। छठएँ मास देइ उठि हाँका
जाइ तहाँ वै कहा सँदेसू। पारवती औ जहाँ महेसू
ततखन पहुँचे आइ महेसू। बाहन बैल, कुस्टि कर भेसू
सेसनाग जाके कँठमाला। तनु भभूति, हस्ती कर छाला

चँवर, घंट औ डँवरू हाथा। गौरा पारबती धनि साथा
अबतहि कहेन्हि 'न लावहु आगी। तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी
की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग ?
जियत जीउ कस काढ़हु ? कहहु सो मोहिं बियोग' ॥२४॥
कहेसि 'मोहिं बातन्ह बिलँमावा। हत्या केरि न डर तोहि आवा
जरै देहु, दुख जरौं अपारा। निस्तर पाइ जाउँ एक बारा
जस भरथरी लागि पिंगला। मो कहँ पदमावति सिंघला
मैं पुनि तजा राज औ भोगू। सुनि सो नावँ लीन्ह तप जोगू
एहि मढ़ सेएउँ आइ निरासा। गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा
तैं यह जिउ डाढ़े पर दाधा। आधा निकसि रहा, घट आधा
जो अधजर सो बिलँब न लावा। करत बिलंब बहुत दुख पावा,
एतना बोल कहत मुख उठी बिरह कै आगि।
जौं महेस न बुझावत जाति सकल जग लागि ॥ २५ ॥'
पारबती मन उपना चाऊ। देखौं कुँवर केर सत भाऊ
ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा। तन मन एक, कि मारग दूजा
भइ सुरूप जानहुँ अपछरा। बिहँसि कुँवर कर आँचर धरा
'सुनहु, कुँवर, मो सौं एक बाता। जस मोहिं रंग न औरहिं राता
औ बिधि रूप दीन्ह है तोका। उठा सो सबद जाइ सिव-लोका
तब हौं तो पहँ इंद्र पठाई। गइ पदमिनि, तैं अछरी पाई
अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू। मो सौं मानु जनम भरि भोगू
हौं अछरी कैलास कै जेहि सरि पूज न कोइ ?
मोहिं तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ'? २६

'भलेहिँ रंग अछरी तोर राता। मोहि दुसरे सौं भाव न बाता
मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा। नैन जो देखसि पूछसि काहा ?
अबहिं ताहि जिउ देइ न पावा। तोहि असि अछरी ठाढ़ि मनावा
जौं जिउ देइहौं ओहि कै आसा। न जनौं कहा होइ कैलासा'
गौरइ हँसि महेस सौं कहा। 'निहचै एहि बिरहानल दहा
बदन पियर जल डभकहिं नैना। परगट दुवौ पेम के बैना
एहू कहँ तस मया करेहू। पुरवहु आस, कि हत्या लेहू'

तस रोवै जस जिउ जरै गिरै रकत औ माँसु।
रोवँ रोवँ सब रोवहिं सूत सूत भरि आँसु॥ २७॥

रोवत बूड़ि उठा संसारू। महादेव तब भयउ मयारू
कहेन्हि 'न रोव, बहुत तैं रोवा। अब ईसर भा, दारिद खोवा
जो दुख सहै होइ सुख ओका। दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोका
अब तैं सिद्ध भयसि सिधि पाई। दरपन-कया छूटि गइ काई
गढ़ तस बाँक जैसि तोरि काया। पुरुष देखु ओही कै छाया
नौ पौरी तेहि गढ़ मझियारा। औ तहँ फिरहिं पाँच कोतवारा
दसवँ दुवार गुपुत एक ताका। अगम चढ़ाव, बाट सुठि बाँका

जस मरजिया समुद धँस हाथ आव तब सीप।
ढूँढ़ि लेइ जो सरग-दुआरी चढ़ै सो सिंघलदीप॥ २८॥

दसवँ दुआर ताल कै लेखा। उलटि दिस्टि जो लाव सो देखा
परगट लोकचार कहु बाता। गुपुत लाउ मन जासौं राता
"हौं हौं" कहत सबै मति खोई। जौं तू नाहिं आहि सब कोई'
सिधि-गुटिका राजै जब पावा। पुनि भइ सिद्धि गनेस मनावा

जब संकर सिधि दीन्ह गुटेका । परी हूल, जोगिन्ह गढ़ छेंका
पौरि पौरि गढ़ लाग केवारा । औ राजा सौं भई पुकारा
'जोगी आइ छेंकि गढ़ मेला । न जनौं कौन देस तें खेला'

भयउ रजायसु 'देखौ को भिखारि अस ढीठ ।
बेगि बरजि तेहि आवहु जन दुइ पठै बसीठ' ॥ २९ ॥

उतरि बसीठन्ह आइ जोहारे । 'की तुम जोगी, की बनिजारे
भयउ रजायसु आगे खेलहिं । गढ़ तर छाँड़ि अनत होइ मेलहिं
हौ जोगी तौ जुगुति सौं माँगौ । भुगुति लेहु, लै मारग लागौ'
'आनु जो भीखि हौं आयउँ लेई । कस न लेउँ जौं राजा देई
पदमावति राजा कै बारी । हौं जोगी ओहि लागि भिखारी
सोई भुगुति-परापति भूजा । कहाँ जाउँ अस बार न दूजा
तुम्ह बसीठ राजा के ओरा । साखि होहु एहि भीख निहोरा

जोगी बार आव सो जेहि भिच्छा कै आस ।
जो निरास दिढ़ आसन कित गौनै केहु पास ?' ॥ ३० ॥

सुनि बसीठ मन उपनी रीसा । जौ पीसत घुन जाइहि पीसा
'जोगी अस कहुँ कहै न कोई । सो कहु बात जोग जो होई
वह बड़ राज इंद्र कर पाटा । धरती परा सरग को चाटा ?
जौं यह बात जाइ तहँ चली । छूटहिं अबहिं हस्ति सिंघली'
'तुम्हरे जोर सिंघल के हाथी । हमरे हस्ति गुरू हैं साथी
अस्ति नास्ति ओहि करत न बारा । परबत करै पावँ कै छारा
जोर गिरे गढ़ जावत भए । जे गढ़ गरब करहिं ते नए

जोगिहि कोह न चाहिय, तस न मोहिं रिस लागि ।
जोग तंत ज्यों पानी, काह करै तेहि आगि ?' ॥ ३१ ॥

बसिटन्ह जाइ कहा अस बाता । राजा सुनत कोह भा राता
ठाँवहिं ठाँव कुँवर सब माखे । 'केइ अब लीन्ह जोग, केइ राखे ?
अबहीं बेगिहि करौ सँजोऊ । तस मारहु हत्या नहिं होऊ'
मंत्रिन्ह कहा 'रहौ मन बूझे । पति न होइ जोगिन्ह सौं जूझे
ओहि मारे तौ काह भिखारी । लाज होइ जौं माना हारी
ना भल मुए, न मारे मोखु । दुवौ बात लागै सम दोखू
रहै देहु जौं गढ़ तर मेले । जोगी कित आछैं बिनु खेले ?

आछै देहु जो गढ़ तरे, जनि चालहु यह बात ।
तहँ जो पाहन भख करहिं अस केहि के मुख दाँत' ॥ ३२ ॥

गए बसीठ पुनि बहुरि न आए । राजै कहा बहुत दिन लाए
न जनौं सरग बात दहुँ काहा । काहु न आइ कही फिरि चाहा
पंख न काया, पौन न पाया । केहि बिधि मिलौं होइ कै छाया
सँवरि रकत नैनहिं भरि चूआ । रोइ हँकारेसि माझी सूआ
परीं जो आँसु रकत कै टूटी । रेंगि चलीं जस बीर-बहूटी
ओही रकत लिखि दीन्हीं पाती । सुआ जो लीन्ह चोंच भइ राती
बाँधी कंठ परा जरि काँठा । बिरह क जरा जाइ कित नाठा ?

मसि नैना, लिखनी बरुनि, रोइ रोइ लिखा अकत्थ ।
आखर दहै, न कोइ छुवै, दीन्ह परेवा हत्थ ॥ ३३ ॥

कंचन-तार बाँधि गिउ पाती । लेइ गा सुआ जहाँ धनि राती
जैसे कवँल सूर के आसा । नीर कंठ लहि मरत पियासा

बिसरा भोग सेज सुख-बासा । जहाँ भौंर सब तहाँ हुलासा
तौ लगि धीर, सुना नहिं पीऊ । सुना त घरी रहै नहिं जीऊ
तौ लगि सुख, हिय पेम न जाना । जहाँ पेम कत सुख बिसरामा ?
अगर चँदन सुठि दहै सरीरू । औ भा अगिनि कया कर चीरू
कथा कहानी सुनि जिउ जरा । जानहुँ घीउ बसंदर परा

बिरह न आपु सँभारै, मैल चीर, सिर रूख ।
पिउ पिउ करत राति-दिन जस पपिहा मुख सूख ॥ ३४ ॥

ततखन गा हीरामन आई । मरत पियास छाँह जनु पाई
'भल तुम्ह, सुआ, कीन्ह है फेरा । कहहु कुसल अब पीतम केरा
बाट न जानौं, अगम पहारा । हिरदय मिला न होइ निनारा
मरम पानि कर जान पियासा । जो जल महँ ताकहँ का आसा ?'
'का रानी यह पूछहु बाता । जिनि कोइ होइ पेम कर राता
तुम्हरे दरसन लागि बियोगी । अहा सो महादेव मठ जोगी
तुम्ह बसंत लेइ तहाँ सिधाई । देव पूजि पुनि ओहि पहँ आई

दिस्टि-बान तस मारेहु घायल भा तेहि ठाँव ।
दूसरि बात न बोलै लेइ पदमावति नाँव ॥ ३५ ॥

तुम्ह तौ खेलि मँदिर महँ आई । ओहिक मरम प जान गोसाईं
कहेसि जरै का बारहि बारा । एकहि बार होहुँ जरि छारा
उलटा पंथ पेम के बारा । चढ़ै सरग जो परै पतारा
अब धँसि लीन्ह चहै तेहि आसा । पावै साँस कि मरै निरासा
कहि कै सुआ जो छाँड़ेसि पाती । जानहु दीप छुवत तस ताती

रोइ रोइ सुआ कहै सो बाता। रकत कै आँसु भयउ मुख राता
'वह तोहि लागि कया सब जारी। तपत मीन, जल देहि पवारी
तोहि कारन वह जोगी भसम कीन्ह तन दाहि।
तू असि निठुर निछोही बात न पूछै ताहि' ॥ ३६ ॥

कहेसि 'सुआ, मो सौं सुनु बाता। चहौं तौ आज मिलौं जस राता
पै सो मरम न जाना मोरा। जानौ प्रीति जो मरि कै जोरा
हौं जानति हौं अबही काँचा। ना जेइ प्रीति रंग थिर राँचा
ना जेइ भयउ मलयगिरि बासा। ना जेइ रबि होइ चढ़ा अकासा
ना जेइ भयउ भौंर कर रंगू। ना जेइ दीपक भयउ पतंगू
ना जेइ करा भृंग कै होई। ना जेइ आपु मरै जिउ खोई
ना जेइ प्रेम औटि एक भयऊ। ना जेहि हियै माँझ डर गयऊ
तेहि का कहिय रहब जिउ रहै जो पीतम लागि ?
जौं वह सुनै लेइ धँसि, का पानी, का आगि' ॥ ३७ ॥

पुनि धनि कनक-पानि मसि माँगी। उतर लिखत भीजी तन आँगी
'तस कंचन कह चहिय सोहागा। जौं निरमल नग होइ तौ लागा
हौं जो गई सिव-मंडप भोरी। तहँवां कस न गांठि तैं जोरी ?
भा बिसँभार देखि कै नैना। सखिन्ह लाज का बोलौं बैना—?
खेलहि मिस मैं चंदन घाला। मकु जागसि तौ देउँ जयमाला
तबहुँ न जागा, गा तू सोई। जागे भेंट, न सोए होई
अब जौं सूर होइ चढ़ै अकासा। जौं जिउ देइ त आवै पासा
तौ लगि भुगुति न लेइ सका रावन सिय जब साथ।
कौन भरोसे अब कहौं जीउ पराए हाथ ॥ ३८ ॥

अब जौं सूर गगन चढ़ि आवै। राहु होइ तौ ससि कहँ पावै
बहुतन्ह ऐस जीउ पर खेला। तू जोगी कित आहि अकेला
हौं पुनि इहाँ ऐस तोहि राती। आधी भेंट पिरीतम-पाती
तहुँ जौ प्रीति निबाहै आँटा। भौंर न देख केत कर काँटा
होइ पतंग अधरन्ह गहु दीया। लेसि समुद धँसि होइ मरजीया
चातक होइ पुकारु पियासा। पीउ न पानि सेवाति कै आसा
होहि चकोर दिस्टि ससि पाहाँ। औ रबि होहि कँवलदल माहाँ
महुँ ऐसै होउँ तोहि कहँ, सकहि तौ ओर निबाहु।
राहु बेधि अरजुन होइ जीतु दुरपदी ब्याहु'॥ ३९॥

राजा इहाँ ऐस तप झूरा। भा जरि बिरह छार कर कूरा
नैन लाइ सो गयउ बिमोही। भा बिनु जिउ, जिउ दीन्हेसि ओही
सुऐ जाइ जब देखा तासू। नैन रकत भरि आए आँसू
सदा पिरीतम गाढ़ करेई। ओहि न भुलाइ, भूलि जिउ देई
देखेसि जागि सुआ सिर नावा। पाती देइ मुख बचन सुनावा
गुरू क बचन स्रवन दुइ मेला। 'कीन्हि सुदिस्टि, बेगि चलु चेला
तोहि अलि कीन्ह आप भइ केवा। हौं पठवा गुरु बीच परेवा
आवहु सामि सुलच्छना जीउ बसै तुम्ह नावँ।
नैनहिं भीतर पंथ है हिरदय भीतर ठावँ'॥ ४०॥

सुनि पदमावति कै असि मया। भा बसंत, उपनी नइ कया
सुआ क बोल पौन होइ लागा। उठा होइ, हनुवंत अस जागा
चाँद मिलै कै दीन्हेसि आसा। सहसौ कला सूर परगासा
पाति लीन्हि, लेइ सीस चढ़ावा। दीठि चकोर चंद जस पाव

उठा फूलि हिरदय न समाना। कंथा टूक टूक बेहराना
लीन्हे सिधि साँसा मन मारा। गुरू मछंदरनाथ सँभारा
खोजि लीन्ह सो सरग-दुवारा। बज्र जो मूँदे जाइ उघारा

बाँक चढ़ाव सरग-गढ़ चढ़त गयउ होइ भोर।
भइ पुकार गढ़ ऊपर चढ़े सेंधि देइ चोर॥ ४१॥

राजै सुनि जोगी गढ़ चढ़े। पूछै पास जो पंडित पढ़े
'जोगी गढ़ जो सेंधि दै आवहिं। बोलहु सबद सिद्धि जस पावहिं'
कहहिं बेद पढ़ि पंडित बेदी। 'जोगि भौंर जस मालति-भेदी'
राँध जो मंत्री बोले सोई। 'एस जो चोर सिद्ध पै कोई
सिद्ध निसंक रैनि-दिन भवँहीं। ताका जहाँ तहाँ अपसवहीं
सिद्ध निडर अस अपने जीवा। खड़ग देखि कै नावहिं गीवा
सिद्ध अमर, काया जस पारा। छरहिं मरहिं बर जाइ न मारा

छरही काज कृस्न कर राजा चढ़ै रिसाइ।
सिध गिध दिस्टि गगन पर, बिनु छर किछु न बसाइ॥ ४२॥

अबहीं करहु गुदर मिस साजू। चढ़हिं बजाइ जहाँ लगि राजू'
चौबिस लाख छत्रपति साजे। छपन कोटि दर बाजन बाजे
देखि कटक औ मैमँत हाथी। बोले रतनसेन कर साथी
'होत आव दल बहुत असूझा। अस जानिय किछु होइहि जूझा
राजा तू जोगी होइ खेला। एही दिवस कहँ हम भए चेला
जहाँ गाढ़ ठाकुर कहँ होई। संग न छाँड़ै सेवक सोई
गुरू केर जौं आयसु पावहिं। सौंह होहिं औ चक्र चलावहिं

आजु करहिं रन भारत सत बाचा देइ राखि।
सत्य देख सब कौतुक, सत्य भरै पुनि साखि' ॥ ४३ ॥

गुरू कहा 'चेला सिध होहू। पेम-बार होइ करहु न कोहू
एहि सेंति बहुरि जूझ नहि करिए। खड़ग देखि पानी होइ ढरिए
पानिहि काह खड़ग कै धारा। लौटि पानि होइ सोइ जो मारा
राजै छेंकि धरे सब जोगी। दुख ऊपर दुख सहै बियोगी
नाग-फाँस उन्ह मेला गीवा। हरष न बिसमौ एकौ जीवा
भलेहि आनि गिउ मेली फाँसी। है न सोच हिय, रिस अस नासी
मैं गिउ फाँद ओहि दिन मेला। जेहि दिन पेम-पंथ होइ खेला

परगट गुपुत सकल महँ पूरि रहा सो नावँ।
जहँ देखौं तहँ ओही, दूसर नहिं जहँ जावँ ॥ ४४ ॥

जब लगि गुरु हौं अहा न चीन्हा। कोटि अँतरपट बीचहिं दीन्हा
जब चीन्हा तब और न कोई। तन मन जिउ जीवन सब सोई
'हौं हौं' करत धोख इतराहीं। जब भा सिद्ध कहाँ परिछाहीं?
मारै गुरू, कि गुरू जियावै। और को मार? मरै सब आवै
सो पदमावति गुरु. हौं चेला। जोग-तंत जेहि कारण खेला
माँगै सीस देउँ सह गीवा। अधिक तरौं जौं मारै जीवा
अपने जिउ कर लोभ न मोहीं। पेम-बार होइ माँगौं ओही

दरसन ओहि कर दिया जस हौं सो भिखारि पतंग।
जौ करवत सिर सारै मरत न मोरौं अंग' ॥ ४५ ॥

पदमावति कवला ससि-जोती। हँसै फूल रोवै सब मोती
जबहिं सुरुज कहँ लागा राहू। तबहिं कँवल मन भयउ अगाहू

परगट ढारि सकै नहिं आँसू । घटि घटि माँसु गुपुत होइ नासू
पदमावति संग सखी सयानी । गनत नखत सब रैनि बिहानी
जानहिं मरम कँवल कर कोई । देखि बिथा बिरहिनि कै रोई
बिरहा कठिन काल कै कला । बिरह न सहै, काल बरु भला
काल काढ़ि जिउ लेइ सिधारा । बिरह-काल मारे पर मारा

तन रावन होइ सर चढ़ा बिरह भयउ हनुवंत ।
जारे ऊपर जारै चित मन करि भसमंत ॥ ४६ ॥

घरी चारि इमि गहन गरासी । पुनि बिधि हिये जोति परगासी
निसँस ऊभि भरि लीन्हेसि साँसा । भा अधार, जीवन कै आसा
बिनवहिं सखी 'छूट ससि राहू । तुम्हरी जोति जोति सब काहू
तू ससि-बदन जगत उजियारी । केइ हरि लीन्ह, कीन्ह अँधियारी
तू गजगामिनि गरब-गहेली । अब कस आस छाँड़ु तू, बेली
तू हरि लंक हराए केहरि । अब कित हारि करति है हिय हरि?
तू कोकिल-बैनी जग मोहा । केइ ब्याधा होइ गहा निछोहा ?

कँवल-कली तू पदमिनि, गइ निसि, भयउ बिहान ।
अबहुँ न संपुट खोलसि जब रे उआ जग भानु' ॥४७॥

भानु-नावँ सुनि कँवल बिगासा । फिरि कै भौंर लीन्ह मधु बासा
सरद-चंद मुख जबहिं उघेली । खंजन-नैन उठे करि केली
बिरह न बोल आव मुख ताईं । मरि मरि बोल जीउ बरियाईं
दवैं बिरह दारुन, हिय काँपा । खोलि न जाइ बिरह दुख झाँपा
उदधि-समुद जस तरँग देखावा । चख घूमहिं, मुख बात न आवा

यह सुनि लहरि लहरि पर धावा। भँवर परा, जिउ थाह न पावा
'सखी, आनि बिष देहु तौ मरऊँ। जिउ न पियार, मरै का डरऊँ?
खिनहि उठै, खिन बूड़ै अस हिय कँवल सँकेत।
हीरामनहिं बुलावहि, सखी! गहन जिउ लेत' ॥४८॥

चेरी धाय सुनत खिन धाई। हीरामन लेइ आइ बोलाई
जनहु बैद ओषद लेइ आवा। रोगिया राग मरत जिउ पावा
सुनत असीस नैन धनि खोले। बिरह-बैन कोकिल जिमि बोले
कँवलहिं बिरह-बिथा जस बाढ़ी। केसर-बरन पीर हिय गाढ़ी
और दगध का कहौं अपारा। सती सो जरै कठिन अस झारा
होइ हनुवत पैठ है कोई। लंका दाहु लागु करै सोई
लंका बुझी आगि जौ लागी। यह न बुझाइ आँच बज्रागी
जहँ लगि चंदन मलयगिर औ सायर सब नीर।
सब मिलि आइ बुझावहिं बुझै न आगि सरीर ॥ ४९ ॥

हीरामन जौ देखेसि नारी। प्रीति-बेल उपनी हिय-बारी
कहेसि 'कस न तुम्ह होहु दुहेली। अरुझी पेम जो पीतम बेली
प्रीति-बेलि जिनि अरुझै कोई। अरुझे, मुए न छूटै सोई
पदमावति उठि टेकै पाया। 'तुम्ह हुँत देखौं पीतम-छाया
कहत लाज औ रहै न जीऊ। एक दिसि आगि दुसर दिसि पीऊ
तुम्ह सो मोर खेवक गुरु देवा। उतरौं पार तेही बिधि खेवा
दमनहिं नलहिं जो हंस मेरावा। तुम्ह हीरामन नावँ कहावा
मूरि सजीवन दूरि है सालै सकती-बानु।
प्रान मुकुत अब होत है बेगि देखावहु भानु' ॥ ५० ॥

हीरामन भुइ धरा लिलाटू। 'तुम्ह रानी जुग जुग सुख-पाटू
जेहि के हाथ सजीवन मूरी। सो जानिय अब नाहीं दूरी
पिता तुम्हार राज कर भोगी। पूजै बिप्र, मरावै जोगी
पौरि पौरि कोतवार जो बैठा। पेम क लुबुध सुरँग होइ पैठा
चढ़त रैनि गढ़ होइगा भोरू। आवत वार धरा कै चोरू
अब लेइ गए देह ओहि सूरी। तेहि सौं अगाह बिथा तुम्ह पूरी
अब तुम्ह जिउ, काया वह जोगी। कया क रोग जानु पै जोगी
रूप तुम्हार जीउ कै पिंड कमावा फेरि।
आपु हेराइ रहा, तेहि काल न पावै हेरि' ॥ ५१ ॥

हीरामन जो बात यह कही। सूर के गहन चांद तब गही
'अब जौं जोगि मरै मोहिं नेहा। मोहि ओहि साथ धरति गगनेहा
रहै त करौं जनम भरि सेवा। चलै त यह जिउ साथ परेवा
कहौ जाइ अब मोर सँदेसू। तजौ जोग, अब होहु नरेसू
जिनि जानहु हौं तुम्ह सौं दूरी। नैनन्ह मौंझ गड़ी वह सूरी
तुम्ह परसेद घटे घट केरा। मोहिं घट जीउ घटत नहिं बेरा
तुम्ह कहँ पाट हिये महँ साजा। अब तुम्ह मोर दुहूँ जग राजा
जौं रे जियहिं मिलि गर रहहिं मरहिं तो एकै दोउ।
तुम्हजिउकहँ जिनि होइ किछु, मोहिं जिउहोउ सो होउ'॥५२॥

(४) भेंट खंड

बाँधि तपा आने जहँ सूरी । जुरे आइ सब सिंघल पूरी
पहिले गुरुहि देइ कहँ आना । देखि रूप सब कोइ पछिताना
लोग कहहिं यह होइ न जोगी । राजकुँवर कोइ अहै बियोगी
काहुहि लागि भयउ है तपा । हिये सो माल, करहि मुख जपा
जस मारै कहँ बाजा तूरू । सूरी देखि हँसा मंसूरू
चमके दसन भयउ उजियारा । जो जहँ तहाँ बीजु अस मारा
जोगी केर करहु पै खोजू । मकु यह होइ न राजा भोजू

सब पूछहिं 'कहु जोगी जाति जनम औ नाँव ।
जहाँ ठाँव रोवै कर हँसा सो कहु केहि भाव' ॥ १ ॥

'का पूछहु अब जाति हमारी । हम जोगी औ तपा भिखारी
जोगिहि कौन जाति, हो राजा । गारि न कोह, मारि नहिं लाजा
निलज भिखारि लाज जेइ खोई । तेहि के खोज परै जिनि कोई
जाकर जीउ मरै पर बसा । सूरी देखि सो कस नहिं हँसा ?
आजु नेह सौं होइ निबेरा । आजु पुहुमि तजि गगन बसेरा
आजु कया-पींजर-बँदि टूटा । आजुहिं प्रान-परेवा छूटा
आजु नेह सौं होइ निनारा । आजु पेम सँग चला पियारा

आजु अवधि सिर पहुँची किए जाहुँ मुख रात ।
बेगि होहु मोहिं मारहु, जिनि चालहु यह बात' ॥ २ ॥

जोगिहि जबहिं गाढ़ अस परा। महादेव कर आसन टरा
वै हँसी पारबती सौं कहा। जानहुँ सूर गहन अस गहा
आजु चढ़े गढ़ ऊपर तपा। राजै गहा सूर तब छपा
जग देखै गा कौतुक आजू। कीन्ह तपा मारै कहँ साजू
पारबती सुनि पाँयन्ह परी। 'चलि, महेस, देखैं एहि घरी'
भेस भाँट भाँटिनि कर कीन्हा। औ हनुवंत बीर सँग लीन्हा
आइ गुपुत होइ देखन लागी। वह मूरति कस सती सभागी

कटक असूझ देखि कै राजा गरब करेइ।
दैउ क दसा न देखै दहुँ का कहँ जय देइ॥ ३॥

लेइ सँदेस सुअटा गा तहाँ। सूरी देहिं रतन कहँ जहाँ
देखि रतन हीरामन रोवा। राजा जिउ लोभन्ह हठि खोवा
देखि रुदन हीरामन केरा। रोवहिं सब, राजा मुख हेरा
माँगहिं सब बिधिना सौं रोई। कै उपकार छोड़ावै कोई
कहि सँदेस सब बिपति सुनाई। बिकल बहुत, किछु कहा न जाई
काढ़ि प्रान बैठी लेइ हाथा। मरै तौ मरौं, जिऔं एक साथा
सुनि सँदेस राजा तब हँसा। प्रान प्रान घट घट महँ बसा

सुअटा भाँट दसौंधी भए जिउ पर एक ठाँव।
चलि सो जाइ अब देख तहँ जहँ बैठा रह राव॥ ४॥

राजा रहा दिस्टि कै औंधी। रहि न सका तब भाँट दसौंधी
कहेसि मेलि कै हाथ कटारी। पुरुष न आछे बैठ पेटारी
कान्ह कोपि कै मारा कंसू। गोकुल माँझ बजावा बंसू
गंध्रबसेन जहाँ रिस-बाढ़ा। जाइ भाँट आगे भा ठाढ़ा

ठाढ़ देख सब राजा राऊ। बाएँ हाथ देइ बरम्हाऊ
बोला गंध्रबसेन रिसाई। 'कस जोगी, कस भाँट असाई'
'जोगी पानि, आगि तू राजा। आगिहि पानि जूझ नहिं छाजा

आगि बुझाइ पानि सों, जूझु न, राजा, बूझु।
लीन्हें खप्पर बार तोहिं भिच्छा देहि, न जूझु' ॥ ५ ॥

भइ अग्या 'को भाँट अभाऊ। बाएँ हाथ देइ बरम्हाऊ
को जोगी अस नगरी मोरी। जो देइ सेंधि चढ़ै गढ़ चोरी
भाँट नावँ का मारौं जीवा। कबहूँ बोलु नाइ कै गीवा'
'जौं सत पूछसि गंध्रब राजा। सत पै कहौं परै नहिं गाजा
जंबूदीप चित्तउर देसा। चित्रसेन बड़ तहाँ नरेसा
रतनसेन यह ताकर बेटा। कुल चौहान जाइ नहिं मेटा
दाहिन हाथ उठाएउँ ताही। और को अस बरम्हावौं जाही ?

नाँव महापातर मोहिं, तेहि क भिखारी ढीठ।
जौं खरि बात कहे रिस लागै, कहै बसीठ' ॥ ६ ॥

ततखन पुनि महेस मन लाजा। भाँट करा होइ बिनवा राजा
'गंध्रबसेन, तू राजा महा। हौं महेस-मूरति, सुनु कहा
जौ पै बात होइ भलि आगे। कहा चहिय, का भा रिस लागे
राजकुँवर यह, होहि न जोगी। सुनि पदमावति भयउ बियोगी
जंबूदीप राजघर बेटा। जो है लिखा सो जाइ न मेटा
तुम्हरहि सुआ जाइ ओहि आना। औ जेहि कर बर कै तेइ माना
पुनि यह बात सुनी सिव-लोका। करसि बियाह धरम है तोका

माँगै भीख खपर लेइ मुए न छाँड़ै बार।
बूझहु, कनक कचोरी भीखि देहु, नहिं मार'॥ ७॥

'ओहट होहु रे भाँट भिखारी। का तू मोहिं देहि असि गारी
को मोहिं जोग जगत होइ पारा। जा सहुँ हेरौं जाइ पतारा
जोगी जती आव जो कोई। सुनतहिं त्रासमान भा सोई
भीखि लेहिं फिरि माँगहिं आगे। ए सब रैनि रहे गढ़ लागे
जस हींछा चाहौं तिन्ह दीन्हा। नाहिं बेधि सूरी जिउ लीन्हा
जेहि अस साध होइ जिउ खोवा। सो पतंग दीपक तस रोवा
सुर, नर, मुनि सब गंध्रब देवा। तेहि को गनै? करहिं निति सेवा
मो सौं को सरवरि करै सुनु, रे झूठे भाँट!
छार होइ जौं चालौं निज हस्तिन कर ठाट'॥ ८॥

मंत्रिन्ह कहा, 'सुनहु हो राजा। देखहु अब जोगिन्ह कर काजा
हम जो कहा तुम करहु न जूझू। होत आव दर जगत असूझू
कहहिं बात, जोगी अब आए। खिनक माहँ चाहत हैं धाए
पुनि आगे का देखै राजा। ईसर केर घंट रन बाजा
जावत दानव राच्छस पुरे। आठौ बज्र आइ रन जुरे
जेहि कर गरब करत हुत राजा। सो सब फिरि बैरी होइ साजा
जहवाँ महादेव रन खड़ा। सीस नाइ नृप पायँन्ह परा
'केहि कारन रिस कीजिए हौं सेवक औ चेर।
जेहि चाहिय तेहि दीजिय बारि गोसाईं केर'॥ ९॥

'तूँ गंध्रब राजा जग पूजा। गुन चौदह, सिख देइ को दूजा?
हीरामन जो तुम्हार परेवा। गा चितउर औ कीन्हेसि सेवा

तेहि बोलाइ पूछहु वह देसू। दहुँ जोगी, की तहाँ नरेसू'
राजै जब हीरामन सुना। गयउ रोस, हिरदय महँ गुना
अग्या भई 'बोलावहु सोई। पंडित हुतें धोख नहिं होई'
एकहि कहत सहस्रक धाए। हीरामनहिं बेगि लेइ आए
राजै तेहि पूछी हँसि बाता। 'कस तन पियर, भयउ मुख राता

चतुर बेद तुम्ह पंडित पढ़े सास्त्र औ बेद।
कहाँ चढ़ाएहु जोगिन्ह, आइ कीन्ह गढ़भेद ॥ १० ॥

हीरामन रसना रस खोला। दै असीस, कै अस्तुति बोला
'हौं सेवक तुम्ह आदि गोसाईं। सेवा करौं जिऔं जब ताईं
तेहि सेवक के करमहिं दोषू। सेवा करत करै पति रोषू
औ जेहि दोष निदोषहि लागा। सेवक डरा, जीउ लेइ भागा
सप्त दीप फिर देखेउँ, राजा। जंबूदीप जाइ तब बाजा
तहँ चितउरगढ़ देखेउँ ऊचा। ऊँच राज सरि तोहिं पहूँचा
रतनसेन यह तहाँ नरेसू। एहि आनेउँ जोगी के भेसू

सुआ सुफल लेइ आयउँ तेहि गुन तें मुख रात।
कया पीत सो तेहि डर सँवरौं बिक्रम बात' ॥ ११ ॥

पहिले भयउ भाँट सत भाखी। पुनि बोला हीरामन साखी
राजहि भा निसचय, मन माना। बाँधा रतन छोरि कै आना
कुल पूछा, चौहान कुलीना। रतन न बाँधे होइ मलीना
देखि कुँवर वर कंचन जोगू। 'अस्ति अस्ति' बोला सब लोगू
मिला सो वंस अंस उजियारा। भा बरोक तब तिलक सँवारा

पन्छिउँ कर बर, पुरुब क बारी। जोरी लिखी न होइ निनारी ॥
मानुष साज लाख मन साजा। होइ सोइ जो बिधि उपराजा ॥
गए जो बाजन बाजत जिउ मारन रन माहँ।
फिरि बाजन तेइ बाजे मंगलचार ओनाहँ ॥ १२ ॥

लगन धरा औ रचा बियाहू। सिंघल नेवत फिरा सब काहू ॥
बाजन बाजे कोटि पचासा। भा अनंद सगरौ कैलासा ॥
रतनसेन कहँ कापड़ आए। हीरा मोति पदारथ लाए ॥
साजा राजा, बाजन बाजे। मदन सहाय दुवौ दर गाजे ॥
औ राता सोने रथ साजा। भए बरात गोहने सब राजा ॥
बाजत गाजत भा असवारा। सब सिंहल नइ कीन्ह जोहारा ॥
चहुँ दिसि मसियर नखत तराईं। सूरुज चढ़ा चाँद के ताईं ॥
धरती सरग चहूँ दिसि पूरि रहे मसियार।
बाजत आवै मंदिर कहँ होइ मंगलाचार ॥ १३ ॥

जहँ सोने कर चित्तर-सारी। लेइ बरात सब तहाँ उतारी ॥
माँझ सिंघासन पाट सँवारा। दूलह आनि तहाँ बैसारा ॥
होइ लाग जेवनार-पसारा। कनक-पत्र पसरे पनवारा ॥
सोन-थार मनि मानिक जरे। राय रंक के आगे धरे ॥
भइ जेवनार, फिरा खँड़वानी। फिरा अरगजा कुँहकुँह-पानी ॥
फिरा पान, बहुरा सब कोई। लाग बियाह-चार सब होई ॥
गाँठि दुलह दुलहिनि कै जोरी। दुऔ जगत जो जाइ न छोरी ॥
चांद सुरुज दुऔ निरमल दुऔ सँजोग अनूप।
सुरुज चाँद सौं भूला चांद सुरुज के रूप ॥ १४ ॥

दुऔ नाँव लै गावहिं बारा । करहिं सो पदुमिनि मंगलचारा
चाँद के हाथ दीन्ह जयमाला । चाँद आनि सूरुज गिउ घाला
सूरुज लीन्ह, चाँद पहिराई । हार नखत तरइन्ह सो पाई
पुनि धनि भरि अंजुलि जल लीन्हा । जोबन जनम कंत कहँ दीन्हा
कंत लीन्ह, दीन्हा धनि हाथा । जोरी गाँठि दुऔ एक साथा
चाँद सुरुज सन भाँवरि लेहीं । नखत मोति नेवछावरि देहीं
फिरहिं दुऔ सत फेर, घुटै कै । सातहु फेर गाँठि सो एकै

भइ भाँवरि, नेवछावरि, राज-चार सब कीन्ह ।
दायज कहौं कहाँ लगि, लिखि न जाइ जत दीन्ह ॥ १५ ॥

रतनसेन जब दायज पावा । गंध्रबसेन आइ सिर नावा
'मानुस चित्त आन किछु कोई । करै गोसाइँ सोइ पै होई
अब तुम्ह सिंघलदीप-गोसाईं । हम सेवक अहहीं सेवकाई
जस तुम्हार चितउरगढ़ देसू । तस तुम्ह इहाँ हमार नरेसू
जंबूदीप दूरि का काजू ? सिंघलदीप करहु अब राजू'
रतनसेन बिनवा कर जोरी । 'अस्तुति-जोग जीभ कहँ मोरी
तुम्ह गोसाइँ जेइ छार छुड़ाई । कै मानुस अब दीन्ह बड़ाई

जौ तुम्ह कीन्ह तौ पावा जिवन जनम सुख-भोग ।
नातरु खेह पायँ कै, हौं जोगी केहि जोग ?' ॥ १६ ॥

धौराहर पर दीन्हा बासू । सात खंड जहवाँ कैलासू
सखी सहसदस सेवा पाई । जनहु चाँद सँग नखत तराई
होइ मंडल ससि के चहुँ पासा । ससि सूरहि लेइ चढ़ी अकासा
'चलु सूरुज दिन अथवै जहाँ । ससि निरमल तू पावसि तहाँ'

पद्मावति जो सँवारै लीन्हा। पूनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा
करि मज्जन तन कीन्ह नहानू। पहिरे चीर, गयउ छपि भानू
रचि पत्रावलि, माँग सेंदूरू। भरे मोति औ मानिक चूरू

पहिरि जराऊ ठाढ़ि भइ कहि न जाइ तस भाव।
मानहु दरपन गगन भा तेहि ससि तार देखाव॥ १७॥

पदमिनि-गवन हंस गए दूरी। कुंजर लाज मेल सिर धूरी
बदन देखि घटि चंद छपाना। दसन देखि कै बीजु लजाना
खंजन छपे देखि कै नैना। कोकिल छपी सुनत मधु बैना
गीव देखि कै छपा मयूरू। लंक देखि कै छपा सदूरू
भौंहन धनुक छपा आकारा। बेनी बासुकि छपा पतारा
खड़ग छपा नासिका बिसेखी। अमृत छपा अधर-रस देखी
पहुँचहि छपी कवँल पौनारी। जंघ छपा कदली होइ बारी

अछरी रूप छपानीं जबहिं चली धनि साजि।
जावत गरब-गहेली सबै छपीं मन लाजि॥ १८॥

'बोलौं रानि, बचन सुनु साँचा। पुरुष क बोल सपथ औ बाचा
यह मन लाएउँ तोहिं अस, नारी! दिन तुइ पासा औ निसि सारी
पौ परि बारहि बार मनायउँ। सिर सौं खेलि पैंत जिउ लाएउँ
हौं अब चौक पंज तें बाँची। तुम्ह बिच गोट न आवहि काँची
पाकि उठाएउँ आस करीता। हौं जिउ तोहि हारा, तुम्ह जीता
मिलि कै जुग नहिं होहु निनारी। कहाँ बीच दूती देनहारी?
अब जिउ जनम जनम तोहि पासा। चढ़ेउँ जोग, आएउँ कैलासा

जाकर जीउ बसै जेहि तेहि पुनि ताकरि टेक।

कनक सोहाग न बिछुरै, औटि मिलै होइ एक' ॥19॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत बाता। 'निहचय तू मोरे रँग राता
निहचय भौंर कँवल-रस रसा। जो जेहि मन सो तेहि मन बसा
जब हीरामन भएउ सँदेसी। तुम्ह हुँत मँडप गइउँ, परदेसी
तोर रूप तस देखिउँ लोना। जनु, जोगी, तू मेलेसि टोना
सिधि-गुटिका जो दिस्टि कमाई। पारहि मेलि रूप बैसाई
भुगुति देइ कहँ मैं तोहि दीठा। कँवल-नैन होइ भौंर बईठा
नैन पुहुप, तू अलि भा सोभी। रहा बेधि अस, उड़ा न लोभी

जाकरि आस होइ जेहि तेहि पुनि ताकरि आस।

भौंर जो दाधा कँवल कहँ कस न पाव सो बास ? ॥20॥

कौन मोहनी दहुँ हुत तोही। जो तोहि बिथा सो उपनी मोहीं
बिनु जल मीन तलफ जस जीऊ। चातक भइउँ कहत "पिउ पीऊ"
जरिउँ बिरह जस दीपक-बाती। पंथ जोहत भइ सीप सेवाती
डाढ़ि डाढ़ि जिमि कोइल भई। भइउँ चकोरि, नींद निसि गई
तोरे पेम पेम मोहिं भयऊ। राता हेम अगिनि जिमि तयऊ
हीरा दिपै जौ सूर उदोती। नाहिं त कित पाहन कहँ जोती!
रवि परगासे कँवल बिगासा। नाहिं त कित मधुकर, कित बासा

तासौं कौन अँतरपट जो अस पीतम पीउ।

नेवछावरि अब सारौं तन, मन, जोबन, जीउ' ॥21॥

हँसि पदमावति मानी बाता। 'निहचय तू मोरे रँग राता
तू राजा दुहुँ कुल उजियारा। अस कै चरचिउँ मरम तुम्हारा

जस सत कहा कुँवर तू मोही। तस मन मोर लाग पुनि तोही'
कहि सत भाव भई कँठलागू। जनु कंचन औ मिला सोहागू
कुसुम-माल असि मालति पाई। जनु चंपा गहि डार ओनाई
रतनसेन सो कंत सुजानू। खटरस-पंडित सोरह बानू
तस सोइ मिले पुरुष औ गोरी। जैसी बिछुरी सारस-जोरी

जनहुँ औटि कै मिलि गए तस दूनौं भए एक।
कंचन कसत कसौटी हाथ न कोऊ टेक॥२२॥

भा बिहान ऊठा रवि साईं। चहुँ दिसि आईं नखत तराईं
रतनसेन गए अपनी सभा। बैठे पाट जहाँ अठ खंभा
आइ मिले चितउर के साथी। सबै बिहँसि कै दीन्ही हाथी
राजा कर भल मानहु भाई। जेइ हम कहँ यह भूमि देखाई
'धनि राजा, तुइ राज बिसेखा। जेहि के राज सबै किछु देखा
भोग-बिलास सबै किछु पावा। कहाँ जीभ जेहि अस्तुति आवा?
अब तुम आइ अँतरपट साजा। दरसन कहँ न तपावहु राजा

नैन सेराने, भूखि गइ देखे दरस तुम्हार।
नव अवतार आजु भा जीवन सफल हमार' ॥ २३ ॥

हँसि कै राज रजायसु दीन्हा। 'मैं दरसन कारन एत कीन्हा
अपने जोग लागि अस खेला। गुरू भयऊँ आपु, कीन्ह तुम्ह चेला
अहक मोरि पुरुषारथ देखेहु। गुरू चीन्हि कै जोग बिसेखेहु
जौ तुम्ह तप साधा मोहि लागी। अब जिनि हिये होहु बैरागी
जो जेहि लागि सहै तप जोगू। सो तेहि के सँग मानै भोगू'

सोरह सहस पदमिनी माँगी। सबै दीन्हि, नहिं काहुहि खाँगी
सब कर मंदिर सोने साजा। सब अपने अपने घर राजा
हस्ति घोर औ कापर सबहिं दीन्ह नव साज।
भए गृही औ लखपती घर घर मानहुँ राज ॥ २४ ॥
पदमावति सब सखी बोलाई। चीर पटोर हार पहिराई
सीस सबन्ह के सेंदुर पूरा। औ राते सब अंग सेंदूरा
चंदन अगर चित्र सब भरीं। नए चार जानहु अवतरीं
जनहुँ कँवल सँग फूलीं कूईं। जनहुँ चाँद सँग तरई ऊईं
'धनि पदमावति, धनि तोर नाहू। जेहि अभरन पहिरा सब काहू
बारह अभरन, सोरह सिँगारा। तोहि सोंह नहिं ससि उजियारा
ससि सकलंक रहै नहिं पूजा। तू निकलंक, न सरि कोइ दूजा'
काहू बीन गहा कर, काहू नाद मृदंग।
सबन्ह अनंद मनावा रहसि कूदि एक संग ॥ २५ ॥
पदमावति कह 'सुनहु, सहेली। हौं सो कँवल, तुम कुमुदिनि-बेली
कलस मानि हौं तेहि दिन आई। पूजा चलहु चढ़ावहिं जाई'
मँझ पदमावति कर जो बेवानू। जनु परभात परै लखि भानू
आस पास बाजत चौडोला। दुंदुभि, झाँझ, तूर, डफ, ढोला
एक संग सब सोंधे-भरीं। देव-दुवार उतरि भईं खरी
अपने हाथ देव नहवावा। कलस सहस इक घिरित भरावा
पोता मँडप अगर औ चंदन। देव भरा अरगज औ बंदन
कै प्रनाम आगे भई, बिनय कीन्हि बहु भाँति।
रानी कहा 'चलहु घर, सखी, होति है राति' ॥ २६ ॥

(५) नागमती खंड

नागमती चितउर-पथ हेरा। पिउ जो गए पुनि कीन्ह न फेरा
नागर काहु नारि बस परा। तेइ मोहि पिय मो सौं हरा
सुआ काल होइ लेइगा पीउ। पिउ नहिं जात, जात बरु जीऊ
भयउ नरायन बावन करा। राज करत राजा बलि छरा
करन पास लीन्हेउ कै छंदू। बिप्र रूप धरि झिलमिल इंदू
मानत भोग गोपिचँद भोगी। लेइ अपसवा जलंधर जोगी
लेइगा कृस्नहि गरुड़ अलोपी। कठिन बिछोह, जिअहिं किमि गोपी ?

सारस जोरी कौन हरि मारि बियाधा लीन्ह ?
झुरि झुरि पींजर हौं भई बिरह-काल मोहि दीन्ह ॥ १ ॥

पिउ-बियोग अस बाउर जीऊ। पपिहा निति बोलै 'पिउ पीऊ'
अधिक काम दाधै सो रामा। हरि लेइ सुवा गयउ पिउ नामा
बिरह बान तस लाग न डोली। रकत पसीज, भीजि गइ चोली
सूखा हिया हार भा भारी। हरि हरि प्रान तजहिं सब नारी
खन एक आव पेट महँ साँसा। खनहिं जाइ जिउ, होइ निरासा
पवन डोलावहिं, सींचहिं चोला। पहर एक समुझहिं मुख बोला
प्रान पयान होत को राखा ? को सुनाव पीतम कै भाखा ?

आहि जो मारै बिरह कै आगि उठै तेहि लागि।
हंस जो रहा सरीर महँ पाँख जरा, गा भागि ॥ २ ॥

पाट-महादेइ, हिये न हारू। समुझि जीव चित चेतु सँभारू
भौंर कँवल सँग होइ मेरावा। सँवरि नेह मालति पहँ आवा
पपिहै स्वाती सौं जस प्रीती। टेकु पियास, बाँधु मन थीती
धरतिहि जैस गगन सौं नेहा। पलटि आव बरसा रितु मेहा
पुनि बसंत रितु आव नवेली। सो सर, सो मधुकर, सो बेली
जिनि अस जीव करसि, तू बारी। यह तरिवर पुनि उठिहि सँवारी
दिन दस बिनु जल सूखि बिधंसा। पुनि सोइ सरवर, सोई हंसा

मिलहिं जो बिछुरे साजन अंकम भेंटि गहंत।
तपनि मृगसिरा जे सहैं ते अद्रा पलुहंत ॥ ३ ॥

चढ़ा असाढ़, गगन घन गाजा। साजा बिरह दुंद दल बाजा
धूम, साम, धौरे घन धाए। सेत धजा बग-पाँति देखाए
खड़ग-बीजु चमकै चहुँ ओरा। बुंद-बान बरसहिं घन घोरा
ओनई घटा आइ चहुँ फेरी। कंत, उबारु मदन हौं घेरी
दादुर मोर कोकिला, पीऊ। गिरै बीजु, घट रहै न जीऊ
पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा ?
अद्रा लागि, लागि भुइ लेई। मोहिं बिनु पिउ को आदर देई ?

जिन्ह घर कंता ते सुखी तिन्ह गारौ औ गर्ब।
कंत पियारा बाहिरै हम सुख भूला सर्ब ॥ ४ ॥

सावन बरस मेह अति पानी। भरनि परी, हौं बिरह झुरानी
लाग पुनरबसु पीउ न देखा। भइ बाउरि, कहँ कंत सरेखा ?
रकत कै आँसु परहिं भुइँ टूटी। रेंगि चलीं जस बीरबहूटी
सखिन्ह रचा पिउ संग हिँडोला। हरियरि भूमि, कुसुंभी चोला

हिय हिंडोल अस डोलै मोरा। बिरह झुलाइ देइ झकझोरा
बाट असूझ अथाह गँभीरी। जिउ बाउर भा फिरै भँभीरी
जग जल बूड़ जहाँ लगि ताकी। मोरि नाव खेवक बिनु थाकी

परबत समुद अगम बिच बीहड़ घन बनढाँख।
किमि कै भेंटौं कन्त तुम्ह ना मोहिं पाँव न पाँख ? ॥ ५ ॥

भा भादों दूभर अति भारी। कैसे भरौं रैनि अँधियारी
मंदिर सून पिउ अनतै बसा। सेज नागिनी फिरि फिरि डसा
रहौं अकेलि गहे एक पाटी। नैन पसारि मरौं हिय फाटी
चमक बीजु, घन गरजि तरासा। बिरह काल होइ जीउ गरासा
बरसै मघा झकोरि झकोरी। मोरि दुइ नैन चुवैं जस ओरी
धनि सूखै भरे भादौं माहाँ। अबहुँ न आएन्हि सींचेन्हि नाहाँ
पुरबा लाग भूमि जल पूरी। आक जवास भई तस झूरी

थल जल भरे अपूर सब धरति गगन मिलि एक।
धनि जोबन अवगाह महँ दे बूड़त, पिउ, टेक ॥ ६ ॥

लाग कुवार, नीर जग घटा। अबहूँ आउ, कंत, तन लटा
तोहिं देखे, पिउ, पलुहै कया। उतरा चित्त, बहुरि करु मया
चित्रा मित्र मीन कर आवा। पपिहा पीउ पुकारत पावा
उआ अगस्त, हस्ति-घन गाजा। तुरय पलानि चढ़े रन राजा
स्वाति-बूँद चातक मुख परे। समुद सीप मोती सब भरे
सरवर सँवरि हंस चलि आए। सारस कुरलहिं, खंजन देखाए
भा परगास, काँस बन फूले। कंत न फिरे, बिदेसहि भूले

बिरह-हस्ति तन सालै, घाय करै चित चूर।
बेगि आइ, पिउ, बाजहु, गाजहु होइ सदूर॥ ७॥

कातिक सरद-चंद उजियारी। जग सीतल, हौं बिरहै जारी॥
चौदह करा चाँद परगासा। जनहुँ जरै सब धरति अकासा॥
तन मन सेज करै अगिदाहू। सब कहँ चंद भयउ मोहि राहू॥
चहूँ खंड लागै अँधियारा। जौ घर नाहीं कंत पियारा॥
अबहूँ, निठुर, आउ एहि बारा। परब देवारी होइ संसारा॥
सखि झूमक गावैं अँग मोरी। हौं झुरावँ, बिछुरी मोरि जोरी॥
जेहि घर पिउ सो मनोरथ पूजा। मो कहँ बिरह, सवति-दुख दूजा॥
सखि मानैं तिउहार सब गाइ देवारी खेलि।
हौं का गावौं कंत बिनु रही छार सिर मेलि॥ ८॥

अगहन दिवस घटा, निसि बाढ़ी। दूभर रैनि, जाइ किमि गाढ़ी?
अब धनि बिरह दिवस भा राती। जरै बिरह जस दीपक-बाती॥
काँपै हिया जनावै सीऊ। तौ पै जाइ होइ सँग पीऊ॥
घर घर चीर रचे सब काहू। मोर रूप-रँग लेइगा नाहू॥
पलटि न बहुरा गा जो बिछोई। अबहूँ फिरै, फिरै रँग सोई॥
बज्र-अगिनि बिरहिनि हिय जारा। सुलुगि सुलुगि दगधै होइ छारा॥
यह दुख दगध न जानै कंतू। जोबन जनम करै भसमंतू॥
पिउ सौं कहेउ सँदेसड़ा, हे भौंरा, हे काग।
सो धनि बिरहै जरि मुई तेहिक धुआँ हम लाग॥ ९॥

पूस जाड़ थर थर तन काँपा। सुरुज जाइ लंका-दिसि चाँपा॥
बिरह बाढ़, दारुन भा सीऊ। कँपि कँपि मरौं, लेइ हरि जीऊ॥

कंत कहाँ, लागौं ओहि हियरे। पंथ अपार, सूझ नहिं नियरे
सौंर सपेती आवै जूड़ी। जानहु सेज हिवंचल बूड़ी
चकई निसि बिछुरै, दिन मिला। हौं दिन-राति बिरह कोकिला
रैनि अकेलि साथ नहिं सखी। कैसे जियै बिछोहा पखी
बिरह सचान भयउ तन जाड़ा। जियत खाइ औ मुए न छाँड़ा

रकत ढुरा माँसू गरा हाड़ भयउ सब संख।
धनि सारस होइ ररि मुई पीउ समेटहि पंख॥ १० ॥

लागेउ माघ, परै अब पाला। बिरहा काल भयउ जड़काला
पहल पहल तन रूई झाँपै। हहरि हहरि अधिकौ हिय काँपै
आइ सूर होइ तापु, रे नाहा। तोहि बिनु जाड़ न छूटै माहा
एहि माँह उपजै रसमूलू। तूँ सो भौंर, मोर जोबन फूलू
नैन चुवहिं जस महवट नीरू। तोहि बिनु अंग लाग सर-चीरू
टप टप बूँद परहिं जस ओला। बिरह पवन होइ मारै झोला
केहि क सिँगार, के पहिरु पटोरा? गीउ न हार, रही होइ डोरा

तुम बिनु काँपै धनि हिया तन तिनउर भा डोल।
तेहि पर बिरह जराइ कै चहै उड़ावा झोल॥ ११ ॥

फागुन पवन झकोरा बहा। चौगुन सीउ जाइ नहिं सहा
तन जस पियर पात भा मोरा। तेहि पर बिरह देइ झकझोरा
तरिवर झरहिं, झरहिं बन ढाखा। भई ओनंत फूलि फरि साखा
करहिं बनसपति हिये हुलासू। मो कहँ भा जग दून उदासू
फागु करहिं सब चाँचरि जोरी। मोहिं तन लाइ दीन्हि जस होरी

जा पै पीउ जरत अस पावा । जरत मरत मोहिं रोष न आवा
राति-दिवस बस यह जिउ मोरे । लगौं निहोर कंत अब तोरें
यह तन जारौं छार कै कहौं कि 'पवन, उड़ाव' ।
मकु तेहि मारग उड़ि परै कंत धरै जहँ पाव ॥१२॥

चैत वसंता होइ धमारी । मोहिं लेखे संसार उजारी
पंचम बिरह पंचसर मारै । रकत रोइ सगरौं बन ढारै
बूड़ि उठे सब तरिवर-पाता । भीजि मजीठ, टेसु बन राता
बौरे आम फरै अब लागे । अबहुँ आउ घर, कंत सभागे
सहस भाव फूलीं बनसपती । मधुकर घूमहिं सँवरि मालती
मोकहँ फूल भए सब काँटे । दिस्टि परत जस लागहिं चाँटे
फरि जोबन भए नारँग साखा । सुआ-बिरह अब जाइ न राखा
घिरिनि परेवा होइ पिउ आउ बेगि परु टूटि ।
नारि पराये हाथ है तोहि बिनु पाव न छूटि ॥१३॥

भा बैसाख तपनि अति लागी । चोआ चीर चँदन भा आगी
सूरुज जरत हिवंचल ताका । बिरह-बजागि सौंह रथ हाँका
जरत बजागिनि करु, पिउ, छाँहा । आइ बुझाउ, अँगारन्ह माहाँ
तोहि दरसन सीतल नारी । आइ आगि तें करु फुलवारी
लागिउँ जरै, जरै जस भारू । फिरि फिरि भूँजेसि, तजिउँ न बारू
सरवर-हिया घटत निति जाई । टूक टूक होइ कै बिहराई
बिहरत हिया करहु, पिउ टेका । दीठि-दवँगरा मेरवहु एका
कँवल जो बिगसा मानसर बिनु जल गयउ सुखाइ ।
कबहुँ बेलि फिरि पलुहै जौं पिउ सींचै आइ ॥ १४ ॥

जेठ जरै जग, चलै लुवारा । उठहिं बवंडर, परहिं अँगारा ॥
बिरह गाजि हनुवँत होइ जागा । लंका-दाह करै तनु लागा ॥
चारिहु पवन झकोरै आगी । लंका दाहि पलंका लागी ॥
दहि भइ साम नदी कालिंदी । बिरह क आगि कठिन अति मंदी ॥
उठै आगि औ आवै आँधी । नैन न सूझ, मरौं दुख-बाँधी ॥
अधजर भइउँ, माँसु तन सूखा । लागेउ बिरह काल होइ भूखा ॥
माँसु खाइ अब हाड़न्ह लागै । अबहुँ आउ, आवत सुनि भागै ॥

गिरि, समुद्र, ससि, मेघ, रवि सहि न सकहिं वह आगि ।
मुहमद सती सराहिए, जरै जो अस पिउ लागि ॥१५॥

तपै लागि अब जेठ-असाढ़ी । मोहि पिउ बिनु छाजनि भइ गाढ़ी ॥
तन तिनउर भा, झूरौं खरी । भइ बरखा, दुख आगरि जरी ॥
बंध नाहिं औ कंध न कोई । बात न आव, कहौं का रोई ?
साँठि नाठि, जग बात को पूछा ? बिनु जिउ फिरै मूँज-तनु छूँछा ॥
भई दुहेली टेक बिहूनी । थाँभ नाहिं उठि सकै न थूनी ॥
बरसै मेह, चुवहिं नैनाहा । छपर छपर होइ रहि बिनु नाहा ॥
कोरौं कहाँ ठाट नव साजा । तुम बिनु कंत न छाजनि छाजा ॥

अबहूँ मया-दिस्टि करि, नाह निठुर, घर आउ ।
मँदिर उजार होत है नव कै आइ बसाउ ॥ १६ ॥

रोइ गँवाए बारह मासा । सहस सहस दुख एक एक साँसा ॥
तिल तिल बरख बरख परि जाई । पहर पहर जुग जुग न सेराई ॥
सो नहिं आवै रूप मुरारी । जासौं पाव सोहाग सुनारी ॥
साँझ भए झुरि झुरि पथ हेरा । कौनि सो घरी करै पिउ फेरा ?

दहि कोइला भइ कंत सनेहा। तोला माँसु रहा नहिं देहा
रकत न रहा, बिरह तन गरा। रती रती होइ नैनन्ह ढरा
पायँ लागि जोरै धनि हाथा। जारा नेह, जुड़ावहु, नाथा

बरस दिवस धनि रोइ कै हारि परी चित झंखि।
मानुष घर घर बूझि कै बूझै निसरी पंखि ॥ १७ ॥

भइ पुछार, लीन्ह बनवासू। बैरिनि सवति दीन्ह चिलवासू
होइ खर बान बिरह तनु लागा। जौं पिउ आवै उड़हि तौ कागा
हारिल भई पंथ मैं सेवा। अब तहँ पठवौं कौन परेवा
धौरी पंडुक कहु पिउ नाऊँ। जौं चित रोख न दूसर ठाऊँ
जाहि बया होइ पिउ कँठ लवा। करै मेराव सोइ गौरवा
कोइल भई पुकारति रही। महरि पुकारै 'लेइ लेइ दही'
पेड़ तिलोरी औ जल हंसा। हिरदय पैठि बिरह कटनंसा

जेहि पंखी के निअर होइ कहै बिरह कै बात।
सोई पंखी जाइ जरि, तरिवर होइ निपात ॥ १८ ॥

कुहुकि कुहुकि जस कोइल रोई। रकत-आँसु घुँघुची बन बोई
भइ करमुखी नैन तन राती। को सेराव? बिरहा-दुख ताती
जहँ जहँ ठाढ़ि होइ बनबासी। तहँ तहँ होइ घुँघुचि कै रासी
बूँद बूँद महँ जानहुँ जीऊ। गुंजा गूँजि करै 'पिउ पीऊ'
तेहि दुख भए परास निपाते। लोहू बूड़ि उठे होइ राते
राते बिंब भीजि तेहि लोहू। परवर पाक, फाट हिय गोहूँ
देखौं जहाँ होइ सोइ राता। जहाँ सो रतन कहै को बाता?

नहिं पावस ओहि देसरा नहि हेवंत बसंत।
ना कोकिल न पपीहरा जेहि सुनि आवै कंत॥ १९॥

फिरि फिरि रोव, कोइ नहिं डोला। आधी राति बिहंगम बोला
'तू फिरि फिरि दाहै सब पाँखी। केहि दुख रैनि न लावसि आँखी'
नागमती कारन कै रोई। 'का सोवै जो कंत-बिछोई
मनचित हुँते न उतरै मोरे। नैन क जल चुकि रहा न मोरे
कोइ न जाइ ओहि सिंघलदीपा। जेहि सेवाति कहँ नैना सीपा
जोगी होइ निसरा सो नाहू। तब हुँत कहा सँदेस न काहू
निति पूछौं सब जोगी जंगम। कोइ न कहै निज बात, बिहंगम!
चारिउ चक्क उजार भए कोइ न सँदेसा टेक।
कहौं बिरह-दुख आपन बैठि सुनहु दँड एक॥२०॥

तासौं दुख कहिए, हो बीरा। जेहि सुनि कै लागै पर-पीरा
को होइ भिउँ अँगवै पर दाहा। को सिंघल पहुँचावै चाहा?
जहँवाँ कंत गए होइ जोगी। हौं किँगरी भइ झूरि बियोगी
वै सिंगी पूरी, गुरु, भेंटा। हौं भइ भसम, न आइ समेटा
कथा जो कहै आइ ओहि केरी। पाँवरि होउँ, जनम भरि चेरी
ओहि के गुन सँवरत भइ माला। अबहुँ न बहुरा उड़ि गा छाला
बिरह गुरू, खप्पर कै हीया। पवन अधार रहै सो जीया
हाड़ भए सब किँगरी नसै भईं सब ताँति।
रोवँ रोवँ तें धुनि उठै कहौं बिथा केहि भाँति?॥२१॥

पदमावति सौं कहेहु, बिहंगम। कंत लोभाइ रही करि संगम
तू घर घरनि भई पिउ-हरता। मोहिं तन दीन्हेसि जप औ बरता

रावट कनक सो तोकहँ भयऊ। रावट लंक मोहिं कै गयऊ
तोहिं चैन सुख मिलै सरीरा। मो कहँ हिये दुंद दुख पूरा
हमहुँ बियाही सँग ओहि पीऊ। आपुहि पाइ जानु पर जीऊ
अबहुँ मया करु, करु जिउ फेरा। मोहिं जियाउ कंत देइ मेरा
मोहिं भोग सौं काज न, बारी। सौंह दीठि कै चाहनहारी

सवति न होसि तू बैरिनि मोर कंत जेहि हाथ।
आनि मिलाव एक बेर तोर पाँय मोर माथ ॥ २२ ॥

रतनसेन कै माइ सुरसती। गोपीचँद जसि मैनावती
आँधरि बूढ़ि होइ दुख रोवा। जीवन रतन कहाँ दुहुँ खोवा
जीवन अहा लीन्ह सो काढ़ी। भइ बिनु टेक करै को ठाढ़ी ?
नैन दीठ नहिं दिया बराहीं। घर अँधियार पूत जौ नाहीं
को रे चलै सरवन के ठाऊँ। टेक देह औ टेकै पाऊँ
लेइ सो सँदेस बिहंगम चला। उठी आगि सगरौं सिंघला
दाधे बन बीहड़ जल सीपा। जाइ नियर भा सिंघलदीपा

समुद-तीर एक तरिवर जाइ बैठ तेहि रूख।
जौ लगि कहा सँदेस नहिं, नहिं पियास नहिं भूख॥ २३ ॥

रतनसेन बन करत अहेरा। कीन्ह ओही तरिवर तर फेरा
सीतल बिरिछ समुद के तीरा। अति उतंग औ छाँह गँभीरा
तुरय बाँधि कै बैठ अकेला। साथी और करहिं सब खेला
देखत फिरै सो तरिवर-साखा। लाग सुनै पंखिन्ह कै भाखा
पंखिन्ह महँ सो बिहंगम अहा। नागमती जासौं दुख कहा

पूछहिं सबै बिहंगम नामा। अहो मीत, काहे तुम सामा
कहेसि 'मीत, मासक दुइ भए। जंबूदीप तहाँ हम गए
नगर एक हम देखा गढ़ चितउर ओहि नावँ।
सो दुख कहौं कहाँ लगि हम दाढ़े तेहि ठावँ ॥ २४ ॥

जोगी होइ निसरा सो राजा। सून नगर जानहु धुँध बाजा
नागमती है ताकरि रानी। जरी बिरह, भइ कोइल-बानी
अब लगि जरि भइ होइहि छारा। कही न जाइ बिरह कै झारा'
सुनि चितउर-राजा मन गुना। 'बिधि-सँदेस मैं कासौं सुना
को तरिवर पर पंखी-बेसा। नागमती कर कहै सँदेसा?
हौं सोई राजा भा जोगी। जेहि कारन वह ऐसि बियोगी
जस तूँ पंखि महूँ दिन भरौं। चाहौं कवहिं जाइ उड़ि परौं
पंखि, आँखि तेहि मारग लागी सदा रहाहिं।
कोइ न सँदेसी आवहिं तेहि क सँदेस कहाहिं' ॥ २५ ॥

'पूछसि कहा सँदेस-बियोगू। जोगी भए न जानसि भोगू
देखेउँ तोरे मँदिर घमोई। मातु तोरि आँधरि भइ रोई
जस सरवन बिनु अंधी अंधा। तस ररि मुई, तोहिं चित बँधा
कहेसि मरौं, को काँवरि लेई? पूत नाहिं, पानी को देई?
नागमती दुख बिरह अपारा। धरती सरग जरै तेहि झारा
वह तोहि कारन मरि भइ छारा। रही नाग होइ पवन अधारा
माँसु गिरा पाँजर होइ परी। जोगी, अबहुँ पहुँचु लेइ जरी
देखि बिरह-दुख ताकर मैं सो तजा बनवास।
आयउँ भागि समुद्रतट तबहुँ न छाँड़ै पास' ॥ २६ ॥

कहि संदेस बिहंगम चला। आगि लागि सगरौं सिंघला
घरी एक राजा गोहरावा। भा अलोप, पुनि दिस्टि न आवा
पंखी नावँ न देखा पाँखा। राजा रोइ फिरा कै साँखा
तन सिंघल, मन चितउर बसा। जिउ बिसँभर नागिनि जिमि डसा
बरसि एक तेहि सिंघल भयऊ। भोग,बिलास करत दिन गयऊ
कँवल उदास जो देखा भँवरा। थिर न रहै अब मालति सँवरा
गंध्रबसेन आव सुनि बारा। 'कस जिउ भयउ उदास तुम्हारा
मैं तुम्हही जिउ लावा, दीन्ह नैन महँ बास।
जौ तुम होहु उदास तौ यह काकर कैलास' ॥ २७ ॥

रतनसेन बिनवा कर जोरी। 'अस्तुति जोग जीभ नहिं मोरी
सहस जीभ जौ होहिं गोसाईं। कहि न जाइ अस्तुति जहँ ताईं
काँच रहा तुम कंचन कीन्हा। तब भा रतन जोति तुम दीन्हा
अब बिनती एक करौं, गोसाईं। तौ लगि कया जीउ जब ताईं
आवा आजु हमार परेवा। पाती आनि दीन्ह मोहिं, देवा
राज हमार जहाँ चलि आवा। लिखि पठइन अब होइ परावा
उहाँ नियर दिल्ली सुलतानू। होइ जो भोर उठै जिमि भानू
रहहु अमर महि गगन लगि तुम महि लेइ हम्ह आउ।
सीस हमार तहाँ निति जहाँ तुम्हारा पाउ' ॥ २८ ॥

राज-सभा पुनि उठी सबारी। 'अनु बिनती, राखिय पति भारी
भाइन्ह माहँ होइ जिनि फूटी। घर के भेद लंक अस टूटी
बिरवा लाइ न सूखै दीजै। पावै पानि दिस्टि सो कीजै
आनि रखा तुम्ह दीपक लेसी। पै न रहै पाहुन परदेसी

जाकर राज जहाँ चलि आवा। उहै देस पै ताकहँ भावा
हम्ह तुम्ह नैन घालि कै राखे। ऐसि भाख एहि जीभ न भाखे
दिवस देहु सह कुसल सिधावहिं। दीरघ आउ होइ, पुनि आवहिं"

सबहि बिचार परा अस भा गवने कर साज।
सिद्धि गनेस मनावहिं बिधि पुरवहु सब काज॥२९॥

बिनय करै पद्मावति बारी। 'हौं पिउ, जैसी कुंद नेवारी
नागसेर जो है मन तोरे। पूजि न सकै बोल सरि मोरे
होइ सदबरग लीन्ह मैं सरना। आगे करु जो कंत, तोहि करना'
गवन चार पद्मावति सुना। उठा धसकि जिउ औ सिर धुना
राखत बारि सो पिता निछोहा। कित बियाहि अस दीन्ह बिछोहा
पुनि पद्मावति सखी बोलाई। सुनी कै गवन मिलै सब आई
'मिलहु, सखी, हम तहँवाँ जाहीं। जहाँ जाइ पुनि आउब नाहीं

कंत चलाई, का करौं, आयसु जाइ न मेटि।
पुनि हम मिलहिं कि ना मिलहिं, लेहु सहेली भेंटि' ॥३०॥

धनि रोवत रोवहिं सब सखी। 'हम तुम्ह देखि आपु कहँ झँखी
तुम्ह ऐसी जौ रहै न पाई। पुनि हम काह जो आहिं पराई
तब तेइ नैहर नाहीं चाहा। जौ ससुरारि होइ अति लाहा
तुम बारी पिउ दुहुँ जग राजा। गरब किरोध ओहि पै छाजा
सब फर फूल ओहि के साखा। चहै सो तूरै, चाहै राखा
आयसु लिहे रहिहु नित हाथा। सेवा करहु लाइ भुइँ माथा
मोइ पियारी पियहि पिरीती। रहै जो आयसु सेवा जीती'

पत्रा काढ़ि गवन-दिन देखहिं, कौन दिवस दहुँ चाल।
दिसासूल, चक्र जोगिनी सौंह न चलिए, काल ॥ ३१ ॥

'चलहु चलहु' भा पिउ कर चालू। घरी न देख लेत जिउ कालू
रोवहिं मातु पिता औ भाई। कोउ न टेक जौ कंत चलाई
रोवहिं सब नैहर सिंघला। लेइ बजाइ कै राजा चला
भरीं सखी सब भेंटत फेरा। अंत कंत सौं भयउ गुरेरा
जब पहुँचाइ फिरा सब कोऊ। चला साथ गुन अवगुन दोऊ
औ सँग चला गवन सब साजा। उहै देइ अस पारै राजा
रतन पदारथ मानिक मोती। काढ़ि भँडार दीन्ह रथ जोती
लिखनी लागि जौ लेखै कहै न पारै जोरि।
अरब, खरब, दसनील, सँख औ अरबुद पदुम करोरि ॥३२॥

बोहित भरे चला लेइ रानी। दिस्टि माहँ कोइ और न आनी
आधे समुद ते आए नाहीं। उठी बाउ आँधी उतराहीं
लहरैं उठीं समुद उलथाना। भूला पंथ सरग नियराना
बोहित चले जो चितउर ताके। भए कुपंथ, लंक दिसि हाँके
बोहित बहे, न मानहिं खेवा। पारि लगावै को करि सेवा
बोहित टूक टूक सब भए। एहु न जाना कहँ चलि गए
भए राजा रानी दुइ पाटा। दूनौं बहे, चले दुइ बाटा
काया जीउ मिलाइ कै मारि किए दुइ खंड।
तन रोवै धरती परा, जीउ चला बरम्हंड ॥ ३३ ॥

मुरुछि परी पदमावति रानी। कहाँ जीउ, कहँ पीउ, न जानी
जानहु चित्र-मूर्ति गहि लाई। पाटा परी बही तस जाई

जनम न सहा पवन सुकुवारा। तेइ सो परी दुख-समुद अपारा
लछिमी नावँ समुद कै बेटी। तेहि कहँ लच्छि होइ जेहि भेंटी
खेलति अही सहेली सेंती। पाटा जाइ लाग तेहि रेती
कहेसि सहेली 'देखहु पाटा। मूरति एक लागि बहि घाटा'
जौ देखा, तीवइ है साँसा। फूल मुश्रा, पै मुई न बासा

रंग जो राता प्रेम के जानहु बीरबहूटि।
आइ बसी दधि-समुद महँ पै रंग गयउ न छूटि॥ ३४॥

लछमी लखन बतीसौ लखी। कहेसि 'न मरै' सँभारहुँ सखी
कागर पतरा ऐस सरीरा। पवन उड़ाइ परा मँझ नीरा
लहरि झकोर उदधि जल भीजा। तबहूँ रूप-रंग नहिं छीजा'
आपु सीस लेइ बैठी कोरै। पवन डोलावै सखि चहुँ ओरै
बहुरि जो समुझि परा तन जीऊ। माँगेसि पानि बोलि कै पीऊ
पानि पियाइ सखी मुख धोई। पदमिनि जनहुँ कँवल सँग कोई
तब लछिमी दुख पूछा ओही। 'तिरिया, समुझि बात कहु मोहीं

देखि रूप तोर आगर लागि रहा चित मोर।
केहि नगरी कै नागरी काह नावँ, धनि, तोर ?'॥ ३५॥

नैन पसारि देख धन चेती। देखै काह, समुद कै रेती
आपन कोइ न देखेसि तहाँ। पूछेसि, 'तुम्ह हौ को ? हौं कहाँ ?
कहाँ जगत महँ पीउ पियारा। जो सुमेरु, बिधि गरुअ सँवारा'
कहेन्हि 'न जानहिं हम तोर पीऊ। हम तोहिं पाव, रहा नहिं जीऊ
पाट परी आई तुम्ह 'बही। ऐस न जानहिं दहुँ कहँ अही'

तब सुधि पदमावति मन भई। सँवरि बिछोह मुरुछि मरि गई
बाउरि होइ परी पुनि पाटा। 'देहु बहाइ कंत जेहि घाटा'
साथी आथि निआथि जो सकै साथ निरबाहि।
जो जिउ जारे पिउ मिलै भेंटु रे जिउ, जरि जाहि ॥ ३६ ॥

सती होइ कहँ सीस उघारा। घन महँ बीजु घाव जिमि मारा
सेंदुर जरै आगि जनु लाई। सिर कै आगि सँभारि न जाई
छूटि माँग अस मोति-पिरोई। बारहिं बार जरै जौं रोई
टूटहिं मोति बिछोह जो भरे। सावन-बूँद गिरहिं जनु झरे
भहर भहर कै जोबन बरा। जानहुँ कनक अगिनि महँ परा
अगिनि माँग, पै देइ न कोई। पाहुन पवन पानि सब कोई
खीन लंक टूटी दुखभरी। बिनु रावन केहि बर होइ खरी
रोवत पंखि बिमोहे जस कोकिला-अरंभ।
जाकरि कनकलता सो बिछुरा पीतम खंभ ॥ ३७ ॥

लछिमी लागि बुझावै जीऊ। 'ना मरु बहिन,मिलिहि तोर पीऊ
पीउ पानि, होउ पवन-अधारी। जसि हौं तहूँ समुद कै बारी
मैं तोहि लागि लेवँ खटवाटू। खोजहि पिता जहाँ लगि घाटू
हौं जेहि मिलौं ताहि बड़ भागू। राजपाट औ देवँ सोहागू'
कहि बुझाइ लेइ मँदिर सिधारी। भइ जेवनार न जेंवै बारी
जेहि रे कंत कर होइ बिछोहा। कहँ तेहि भूख, कहाँ सुख-सोवा
कहाँ सुमेरु, कहाँ वह सेसा। को अस तेहि सौं कहै सँदेसा
लछिमी जाइ समुद पहँ रोइ बात यह चालि।
कहा समुद 'वह घट मोरे, आनि मिलावौं कालि' ॥ ३८ ॥

राजा जाइ तहाँ बहि लागा। जहाँ न कोइ सँदेसी कागा
'काहि पुकारौं, का पहँ जाऊँ। गाढ़े मीत होइ एहि ठाऊँ
ए गोसाइँ, तू सिरजनहारा। तुइ सिरजा यह समुद अपारा
सो मूरख औ बाउर अंधा। तोहि छाँड़ि चित औरहि बंधा
तुइँ जिउ तन मेरवसि देइ आऊ। तुही बिछोवसि, करसि मेराऊ
जानसि सबै अवस्था मोरी। जस बिछुरी सारस कै जोरी
एक मुए ररि मुवै जो दूजी। रहा न जाइ, आउ अब पूजी

दुख सौं पीतम भेंटि कै सुख सौं सोव न कोइ।
एही ठावँ मन डर पै मिलि न बिछोहा होइ' ॥ ३९ ॥

कहि कै उठा समुद महँ आवा। काढ़ि कटार गीउ महँ लावा
कहा समुद्र, 'पाप अब घटा'। बाम्हन रूप आइ परगटा
तिलक दुआदस मस्तक कीन्हे। हाथ कनक-बैसाखी लीन्हे
मुद्रा स्रवन, जनेउ काँधे। कनक-पत्र धोती तर बाँधे
पाँवरि कनक जराऊ पाऊँ। दीन्हि असीस आइ तेहि ठाऊँ
'कहसि कुअर, मो सौं सत बाता। काहे लागि करसि अपघाता
परिहँस मरसि कि कौनिउ लाजा। आपन जीउ देसि केहि काजा?

जिनि कटार गर लावसि, समुझि देखु मन आप।
सकति जीउ जौं काढ़ै, महा दोष औ पाप' ॥ ४० ॥

'को तुम्ह उतर देइ, हो पाँड़े। सो बोलै जाकर जिउ भाँड़े
जंबूदीप केर हौं राजा। सो मैं कीन्ह जो करत न छाजा
सिंघलदीप राजघर-बारी। सो मैं जाइ बियाही नारी
बहु बोहित दायज उन दीन्हा। नग अमोल निरमर भरि लीन्हा

रतन पदारथ मानिक मोती। हुती न काहु के संपति ओती
बहल, घोड़, हस्ती सिंघली। औ सँग कुँवरि लाख दुइ चली
ते गोहने सिंघल पदमिनी। एक सों एक चाहि रूपमनी

पदमावति जग रूपमनि कहँ लगि कहौं दुहेल।
तेहि समुद्र महँ खोएउँ, हौं का जिऔं अकेल'? ॥४१॥

हँसा समुद होइ उठा अँजोरा। जग बूड़ा सब काँह कहि मोरा
तोर होइ तोहि परे न बेरा। बूझि बिचारि तहूँ केहि केरा'
'अनु, पाँड़े, पुरुषहि का हानी। जौ पावौं पदमावति रानी
कहँ अस रहस भोग अब करना। ऐसे जिए चाहि भल मरना
जस यह समुद दीन्ह दुख मोकाँ। देइ हत्या झगरौं सिवलोका'
'तुही एक मैं बाउर भेंटा। जैस राम, दसरथ कर बेटा
तोहि बल नाहि, मूँदु अब आँखी। लावौं तीर, टेकु बैसाखी'

बाउर अंध प्रेम कर सुनत लुबुधि भा बाट।
निमिष एक महँ लेइगा पदमावति जेहि घाट ॥ ४२॥

लछिमी चंचल नारि परेवा। जेहि सत होइ छरै कै सेवा
रतन सेन आवै जेहि घाटा। अगमन होइ बैठि तेहि बाटा
औ भइ पदमावति के रूपा। कीन्हेसि छाहँ जरै जहँ धूपा
देखि सो कँवल भँवर होइ धावा। साँस लीन्ह, वह बास न पावा
निरखत आइ लच्छिमी दीठी। रतनसेन तब दीन्ही पीठी
जौ भलि होति लच्छिमी नारी। तजि महेस कित होत भिखारी?
पुनि धनि फिरि आगे होइ रोई। 'पुरुष पीठि कस दीन्हि निछोई?

हौं रानी पदमावति रतनसेन तू पीउ।
आनि समुद महँ छाँड़ेहु अब रोवौं देइ जीउ' ॥४३॥

'मैं हौं सोइ भँवर औ भोजू। लेत फिरौं मालति कर खोजू
का तुइँ नारि बैठि अस रोई। फूल सोइ पै बास न सोई
हौं ओहि बास जीउ बलि देऊँ। और फूल कै बास न लेऊँ'
तब हँसि कह राजा 'ओहि ठाऊँ। जहाँ सो मालति लेइ चलु, जाऊँ'
लेइ सो आइ पदमावति पासा। पानि पियावा मरत पियासा
कँवल जो बिहँसि सूर-मुख दरसा। सूरुज कँवल दिस्टि सौं परसा
देखा दरस, भए एक पासा। वह ओहिके, वह ओहिके आसा
पायँ परी धनि पीउ के नैनन्ह सौं रज मेट।
अचरज भयउ सबन्ह कहँ भइ ससि कँवलहिं भेंट ॥ ४४ ॥

लछिमी सौं पदमावति कहा। 'तुम्ह प्रसाद पाइउँ जो चहा
जौ सब खोइ जाहिं हम दोऊ। जो देखै भल कहै न कोऊ
जे सब कुँवर आए हम साथी। औ जत हस्ति, घोड़ औ आथी
जौ पावैं, सुख जीवन भोगू। नाहिं त मरन, भरन दुख रोगू'
तब लछिमी गई पिता के ठाऊँ। 'जो एहिकर सब बूड़ सो पाऊँ'
तब सो जरी अमृत लेइ आवा। जो मरे हुत तिन्ह छिरिकि जियावा
एक एक कै दीन्ह सो आनी। भा सँतोष मन राजा रानी
आइ मिले सब साथी हिलि मिलि करहिं अनंद।
भई प्राप्त सुख-संपति गयउ छूटि दुख-द्वंद्व ॥ ४५ ॥

'दिन दस रहे तहाँ पहुनाई। पुनि भए बिदा समुद सौं जाई
लछिमी पदमावति सौं भेंटी। औ तेहि कहा 'मोरि तू बेटी'

दीन्ह समुद्र पान कर बीरा। भरि कै रतन पदारथ हीरा
और पाँच नग दीन्ह बिसेखे। सरवन सुना, नैन नहिं देखे
एक तौ अमृत, दूसर हंसू। औ तीसर पंखी कर बंसू
चौथ दीन्ह सावक-सादूरू। पाँचवँ परस, जो कंचन-मूरू
तरुन तुरंगम आनि चढ़ाए। जल-मानुष अगुवा सँग लाए

जोरि कटक पुनि राजा घर कहँ कीन्ह पयान।
दिवसहि भानु अलोप भा बासुकि इंद्र सकान ॥ ४६ ॥

चितउर आइ नियर भा राजा। बहुरा जीति, इंद्र अस गाजा
बाजन बाजहिं, होइ अँदोरा। आवहिं बहल हस्ति औ घोरा
नागमती कहँ अगम जनावा। गइ तपनि बरषा जनु आवा
रही जो मुइ नागिनि जस तुचा। जिउ पाएँ तन कै भइ सुचा
सब दुख जस केंचुरि गा छूटी। होइ निसरी जनु बीरबहूटी
हुलसि गंग जिमि बाढ़िहि लेई। जोबन लाग हिलोरैं देई
काम-धनुक सर लेइ भइ ठाढ़ी। भागेउ बिरह रहा जो डाढ़ी

पूछहिं सखी सहेलरी हिरदय देखि अनंद।
'आजु बदन तोर नीरमल अहै उवा जस चंद' ॥ ४७ ॥

'अब लगि रहा पवन, सखि, ताता। आजु लाग मोहिं सीअर गाता
महि हुलसै जस पावस-छाहाँ। तस उपना हुलास मन माहाँ
अब जोबन गंगा होइ बाढ़ा। औटन कठिन मारि सब काढ़ा
हरियर सब देखौं संसारा। नए चार जनु भा अवतारा'
सुनि तेहि खन राजा कर नाऊँ। भा हुलास सब ठावहिं ठाऊँ

पलटा जनु बरषा-रितु राजा। जस असाढ़ आवै दर साजा
देखि सो छत्र भई जग छाहाँ। हस्ति-मेघ ओनए जग माहाँ
होइ असवार जो प्रथमै मिलै चले सब भाइ।
नदी अठारह गंडा मिलीं समुद कहँ जाइ ॥ ४८ ॥

बाजत गाजत राजा आवा। नगर चहूँ दिसि बाज बधावा
बिहँसि आइ माता सौं मिला। राम जाइ भेंटी कौसिला
साजे मंदिर बंदनवारा। होइ लाग बहु मंगलचारा
पदमावति कर आव बेवानू। नागमती जिउ महँ भा आनू
जनहुँ छाँह महँ धूप देखाई। तैसइ झार लागि जौ आई
सही न जाइ सवति कै झारा। दुसरे मंदिर दीन्ह उतारा
भई उहाँ चहुँ खंड बखानी। रतनसेन पदमावति आनी
पुहुप गंध संसार महँ रूप बखानि न जाइ।
हेम सेत जनु उघरि गा जगत पात फहराइ ॥ ४९ ॥

बैठ सिँघासन, लोग जोहारा। निधनी निरगुन दरब बोहारा
अगनित दान निछावरि कीन्हा। मँगतन्ह दान बहुत कै दीन्हा
सब कै दसा फिरी पुनि दुनी। दान-डाँग सबही जग सुनी
सब दिन राजा दान दिआवा। भइ निसि, नागमती पहँ आवा
नागमती मुख फेरि बईठी। सौंह न करै पुरुष सौं दीठी
ग्रीषम जरत छाँड़ि जो जाई। सो मुख कौन देखावै आई?
'तू जोगी होइगा बैरागी। हौं जरि छार भइउँ तोहि लागी
काह हँसौ तुम मोसौं किएउ और सौं नेह।
तुम्ह मुख चमकै बीजुरी मोहिं मुख बरिसै 'मेह' ॥ ५० ॥

'नागमती तू पहिलि बियाही। कठिन प्रीति दाहै जस दाही
बहुतै दिनन आव जो पीऊ। धनि न मिलै धनि पाहन जीऊ
पाहन लोह पोढ़ जग दोऊ। तेउ मिलहिं जौ होइ बिछोऊ
कोइ केहु पास आस कै हेरा। धनि ओहि दरस निरास न फेरा'
कंठ लाइ कै नारि मनाई। जरी जो बेलि सींचि पलुहाई
जौं भा मेर भयउ रँग राता। नागमती हँसि पूछी बाता
'कहहु, कंत , ओहि देस लोभाने। कस धनि मिली, भोग कस माने

काह कहौं हौं तोसौं किछु न हिये तोहि भाव।
इहाँ बात मुख मोसौं उहाँ जीउ ओहि ठावँ' ॥ ५१ ॥

कहि दुख-कथा जौ रैनि बिहानी। भयउ भोर जहँ पदमिनि रानी
भानु देखि ससि-बदन मलीना। कँवल नैन राते, तनु खीना
रैनि नखत गनि कीन्ह बिहानू। बिकल भई देखा जब भानू
सूर हँसै, ससि रोइ डफारा। टूट आँसु जनु नखतन्ह-मारा
रहै न राखी होइ निसाँसी। 'तहँवाँ जाहु जहाँ निसि बासी
हौं कै नेह कुआँ महँ मेली। सींचै लाग झुरानी बेली
नैन रहै होइ रहट क घरी। भरी ते ढारी, छूँछी भरी

सुभर सरोवर हंस चल घटतहि गए बिछोइ।
कँवल न प्रीतम परिहरै सूखि पंक बरु होइ' ॥ ५२ ॥

'पदमावति तुइँ जीउ पराना। जिउ तें जगत पियार न आना
तुइँ जिमि कँवल बसी हिय माहाँ। हौं होइ अलि बेधा तोहि पाहाँ
मालति-कली भँवर जौ पावा। सो तजि आन फूल कित भावा ?'
'मैं हौं सिंघल कै पदमिनी। सरि न पूज जंबू-नागिनी

हौं सुगंध निरमल उजियारी। वह विष-भरी डेरावनि कारी
मोरी बास भँवर संग लागहिं। ओहि देखत मानुष डरि भागहिं
हौं पुरुषन्ह कै चितवन दीठी। जेहि के जिउ अस अहौं पईठी

ऊँचे ठावँ जो बैठै करै न नीचहिं संग।
जहाँ सो नागिन हिरकै करिया करै सो अंग' ॥ ५३ ॥

पलुही नागमती कै बारी। सोने फूल फूलि फुलवारी
जावत पंखि रहे सब दहे। सबै पंखि बोलत गहगहे
सारिउँ सुवा महरि कोकिला। रहसत आइ पपीहा मिला
हारिल सबद, महोख सोहावा। काग कुराहर करि सुख पावा
भोग-बिलास कीन्ह कै फेरा। बिहँसहिं, रहसहिं, करहिं बसेरा
नाचहिं पंडुक मोर परेवा। बिफल न जाइ काहु कै सेवा
होइ उजियार, सूर जस तपै। खूसट मुख न देखावै छपै

संग सहेली नागमति आपनि बारी माहँ।
फूल चुनहिं, फल तूरहिं, रहसि कूदि सुख-छाहँ ॥ ५४ ॥

(६) राघव चेतन खंड

राघव चेतन चेतन महा। आऊ सरि राजा पहँ रहा
होइ अचेत घरी जौं आई। चेतन कै सब चेत भुलाई
भा दिन एक अमावस सोई। राजै कहा 'दुइज कब होइ ?'
राघव के मुख निकसा 'आजू'। पँडितन्ह कहा 'काल्हि, महराजू'
राजे दुवौ दिसा फिरि देखा। इन महँ को बाउर, को सरेखा ?
भुजा टेकि पंडित तब बोला। 'छाँड़हि देस बचन जौ डोला'
राघव करै जाखिनी-पूजा। चहै सो भाव देखावै दूजा

राघ पूजि जाखिनी, दुइज देखाएसि साँझ।
बेद-पंथ जे नहिं चलहिं तें भूलहिं बन माँझ॥ १॥

पँडितन्ह कहा परा नहिं धोखा। कौन अगस्त समुद जेइ सोखा ?
सो दिन गयउ साँझ भइ दूजी। देखी दुइज घरी वह पूजी
पँडितन्ह राजहि दीन्ह असीसा। 'अब कस यह कंचन औ सीसा
जौ यह दुइज काल्हि कै होती। आजु तेज देखत ससि-जोती
राघव दिस्टिबंध कल्हि खेला। सभा माँझ चेटक अस मेला
एहि कर गुरू चमारिनि लौना। सिखा काँवरू पाढ़न टोना
दुइज अमावस कहँ जो देखावै। एक दिन राहु चाँद कहँ लावै

राज-बार अस गुनी न चाहिय जेहि टोना कै खोज।
एहि चेटक औ विद्या छला सो राजा भोज'॥ २॥

राघव-बैन जो कंचन रेखा। कसे बानि पीतर अस देखा
अग्या भइ, रिसान नरेसू। 'मारहु नाहिं, निसारहु देसू'
झूठ बोल थिर रहै न राँचा। पंडित सोइ बेद-मत-साँचा
एहि रे बात पदमावति सुनी। देस निसारा राघव गुनी
ग्यान-दिस्टि धनि अगम बिचारा। भल न कीन्ह अस गुनी निसारा
रानी राघव बेगि हँकारा। सूर-गहन भा लेहु उतारा
बाम्हन जहाँ दच्छिना पावा। सरग जाइ जौ होइ बोलावा

आवा राघव चेतन धौराहर के पास।
ऐस न जाना ते हियै बिजुरी बसै अकास ॥ ३ ॥

पदमावति जो झरोखे आई। निहकलंक ससि दीन्ह दिखाई
ततखन राघव दीन्ह असीसा। भयउ चकोर चंदमुख दीसा
पहिरे ससि नखतन्ह कै मारा। धरती सरग भयउ उजियारा
औ पहिरे कर कंकन-जोरी। नग लागे जेहि महँ नौ कोरी
कँकन एक कर काढ़ि पवारा। काढ़त हार टूट औ मारा
जानहु चाँद टूट लेइ तारा। छुटी अकास काल कै धारा
जानहु टूटि बीजु भुइँ परी। उठा चौंधि राघव चित हरी

परा आइ भुइँ कंकन जगत भयउ उजियार।
राघव बिजुरी मारा बिसँभर किछु न सँभार ॥ ४ ॥

पदमावति हँसि दीन्ह झरोखा। जौ यह गुनी मरै, मोहिं दोखा
सबै सहेली देखै धाईं। 'चेतन चेतु' जगावहिं आईं
चेतन परा, न आवै चेतू। सबै कहा 'एहि लाग परेतू
कोई कहै आहि सनिपातू। कोई कहै कि मिरगी बातू

कोइ कह लाग पवन कर झोला। कैसेहु समझ न चेतन बोला
पुनि उठाइ बैठाएन्हि छाहाँ। पूछहिं कौन पीर हिय माहाँ
दहुँ काहू के दरसन हरा। की ठग धूत भूत तोहि छरा

की तोहि दीन्ह काहु किछु रे डसा तोहि साँप ?।
कहु सचेत होइ चेतन, देह तोरि कस काँप' ॥ ५ ॥

भएउ चेत, चेतन चित चेता। नैन झरोखे, जीउ सँकेता
पुनि जो बोला मति बुधि खोवा। नैन झरोखा लाए गोवा
बाउर बहिर सीस पै धुना। आपनि कहै, पराइ न सुना
जानहु लाई काहु ठगौरी। खन पुकार, खन बातैं बौरी
'हौं रे ठगा एहि चितउर माहाँ। का सौं कहौं, जाऊँ केहि पाहाँ ?
यह राजा सठ बड़ हत्यारा। जेइ राखा अस ठग बटपारा
ना कोइ बरज, न लाग गोहारी। अस एहि नगर होइ बटपारी

दिस्टि दीन्ह ठगलाड़ू, अलक-फाँस परे गीउ।
जहाँ भिखारि न बाँचै तहाँ बाँच को जीउ ?॥ ६ ॥

कित धौराहर आइ झरोखे ? लेइ गइ जीउ दच्छिना धोखे
तेइ हँकारि मोहिं कंकन दीन्हा। दिस्टि जो परी जीउ हरि लीन्हा'
सखिन्ह कहा 'चेतसि बिसँभारा। हिये चेतु जेहि जासि न मारा
जौ कोइ पावै आपन माँगा। ना कोइ मरै, न काहू खाँगा
वह पदमावति आहि अनूपा। बरनि न जाइ काहु के रूपा
तुम्ह अस बहुत बिमोहित भए। धुनि धुनि सीस जीउ देइ गए
बहुतन्ह दीन्ह नाइ कै गीवा। उतर देइ नहिं, मारै जीवा

कोइ माँगै नहिं पावै कोइ माँगै बिनु पाव।
तू, चेतन, औरहि समुझावै तो कहँ को समुझाव' ? ॥ ७ ॥

भएउ चेत, चित चेतन चेता। 'बहुरि न आइ सहौं दुख एता
रोवत आइ परे हम जहाँ। रोवत चले, कौन सुख तहाँ ?
जहाँ रहे संसौ जिउ केरा। कौन रहनि ? चलि चलै सबेरा
अब यह भीख तहाँ होइ माँगौं। देइ एत जेहि जनम न खाँगौं
अस कंकन जौ पावौं दूजा। दारिद हरै, आस मन पूजा
दिल्ली नगर आदि तुरकानू। जहाँ अलाउदीन सुलतानू
सोन ढरै जेहि के टकसारा। बारह बानी चलै दिनारा
कवँल बखानौं जाइ तहँ जहँ अलि अलाउदीन।
सुनि कै चढ़ै भानु होइ रतन जो होइ मलीन' ॥ ८ ॥

राघव चेतन कीन्ह पयाना। दिल्ली नगर जाइ नियराना
आइ साह के बार पहूँचा। देखा राज जगत पर ऊँचा
बादसाह सब जाना बूझा। सरग पतार हिये महँ सूझा
औ अस ओहिक सिंघासन ऊँचा। सब काहू पर दिस्टि पहूँचा
सब दिन राजकाज सुख-भोगी। रैनि फिरै घर घर होइ जोगी
राव रंक जावत सब जाती। सब कै चाह लेइ दिन-राती
पंथी परदेसी जत आवहिं। सब कै चाह दूत पहुँचावहिं
एहू बात तहँ पहुँची सदा छत्र सुख-छाहँ।
बाम्हन एक बार है कँकन जराऊ बाँह ॥ ९ ॥

मया साह मन सुनत भिखारी। परदेसी को ? पूछु हँकारी
राघव चेतन हुत जो निरासा। ततखन बेगि बोलावा पासा

सीस नाइ कै दीन्ह असीसा। चमकत नग कंकन कर दीसा
अग्या भइ पुनि राघव पाहाँ। 'तू मंगन, कंकन का बाहाँ?'
राघव फेरि सीस भुइँ धरा। 'जुग जुग राज भानु कै करा
पदमिनि सिंघलदीप क रानी। रतनसेन चितउरगढ़ आनी
जहाँ कँवल ससि सूर न पूजा। केहि सरि देउँ, और को दूजा?

सोइ रानी संसार-मनि दछिना कंकन दीन्ह।
अछरी-रूप देखाइ कै जीउ झरोखे लीन्ह'॥ १० ॥

सुनि कै उतर साहि मन हँसा। जानहु बीजु चमकि परगसा
'काँच जोग जेहि कंचन पावा। मंगन ताहि सुमेरु चढ़ावा
नावँ भिखारि जीभ मुख बाँची। अबहुँ सँभारि बात कहु साँची
कहँ अस नारि जगत उपराहीं। जेहि के सरि सूरुज ससि नाहीं?
जो पदमिनि सो मंदिर मोरे। सातौ दीप जहाँ कर जोरे
सात दीप महँ चुनि चुनि आनी। सो मोरे सोरह सै रानी
जौ उन्ह कै देखसि एक दासी। देखि लोन होइ लोन बिलासी

चहूँ खंड हौं चक्कवै जस रबि तपै अकास।
जौ पदमिनि तौ मोरे अछरी तौ कैलास'॥ ११ ॥

'तुम बड़ राज छत्रपति भारी। अनु बाम्हन मैं अहौं भिखारी
सातौ दीप देखि हौं आवा। तब राघव चेतन कहवावा
वह पदमिनि चितउर जो आनी। काया कुंदन द्वादस बानी
कुंदन कनक ताहि नहिं बासा। वह सुगंध जस कँवल बिगासा
कुंदन कनक कठोर सो अंगा। वह कोमल, रँग पुहुप सुरंगा

ओहि छुइ पवन बिरिछ जेहि लागा। सोइ मलयागिरि भयउ सभागा
सबै चितेर चित्र कै हारे। ओहिक रूप कोइ लिखै न पारे
सुरुज-किरिन जसि निरमल तेहि तें अधिक सरीर।
सौंह दिस्टि नहिं जाइ करि नैनन्ह आवै नीर ॥ १२ ॥
का धनि कहौं जैसि सुकुमारा। फूल के छुए होइ बेकरारा
पखुरी काढ़हिं फूलन सेंती। सोई डासहिं सौंर सपेती
फूल समूचे रहै जौ पावा। ब्याकुल होइ नींद नहिं आवा'
जौ राघव धनि बरनि सुनाई। सुना साह, गइ मुरछा आई
जनु मूरति वह परगट भई। दरस देखाइ मोहि छपि गई
जो जो मंदिर पदमिनि लेखी। सुना जौ कंवल कुमुद अस देखी
तब कह अलाउदीं जग-सुरू। 'लेउँ नारि चितउर कै चुरू
जौ वह पदमिनि मानसर अलि न मलिन होइ जात।
चितउर महँ जो पदमिनी फेरि उहै कहु बात' ॥ १३ ॥
'ए जगसूर' कहौं तुम्ह पाहाँ। और पाँच नग चितउर माहाँ
एक हंस है पंखि अमोला। मोती चुनै, पदारथ बोला
दूसर नग जो अमृत बसा। सो बिष हरै नाग कर डसा
तीसर पाहन परस पखाना। लोह छुए होइ कंचन-बाना
चौथ अहै सादूर अहेरी। जो बन हस्ति धरै सब घेरी
पाँचवँ नग सो तहाँ लागना। राजपंखि पेखा गरजना
हरिन रोझ कोइ भागि न बाँचा। देखत उड़ै सचान होइ नाचा
नग अमोल अस पाँचौ भेंट समुद ओहि दीन्ह।
इसकंदर जो न पावा सो सायर धँसि लीन्ह' ॥ १४ ॥

पान दीन्ह राघव पहिरावा। दस गज हस्ति घोड़ सो पावा

औ दूसर कंकन कै जोरी। रतन लागि ओहि बत्तिस कोरी

लाख दिनार देवाइ जेंवा। दारिद हरा समुद कै सेवा

हौं जेहि दिवस पदमिनी पावौं। तोहि राघव, चितउर बैठावौं

पहिले करि पाँचौ नग मूठी। सो नग लेउँ जो कनक-अँगूठी

सरजा बीर पुरुष बरियारू। ताजन नाग, सिंह असवारू

दीन्ह पत्र लिखि,बेगि चलावा। चितउर-गढ़ राजा पहँ आवा

राजै पत्रि बँचावा, लिखी जो करा अनेग।

सिंघल के जो पदमिनी पठै देहु तेहि बेग ॥ १५ ॥

सुनि अस लिखा उठा जरि राजा। जानौ दैउ तड़पि घन गाजा

'का मोहि सिंह देखावसि आई। कहौं तौ सारदूल धरि खाई

भलेहि साह पुहुमीपति भारी। माँग न कोइ पुरुष कै नारी

जो सो चक्कवै ताकहँ राजू। मँदिर एक कहँ आपन साजू'

'राजा, अस न होहु रिस-राता। सुनु होइ जूड़, न जरि कहु बाता

बादसाह कहँ ऐस न बोलू। चढ़ै तौ परै जगत महँ डोलू

सूरहि चढ़त न लागहि बारा। तपै आगि जेहि सरग पतारा

तासौं कौन लड़ाई ? बैठहु चितउर, खास।

ऊपर लेहु चँदेरी, का पदमिनि एक दासि' ? ॥ १६ ॥

'जौ पै धरनि जाइ घर केरी। का चितउर, का राज चँदेरी ?

जिउ न लेइ घर कारन कोई। सो घर देइ जो जोगी होई

हौं रनथँभउर-नाह हमीरू। कलपि माथ जेइ दीन्ह सरीरू

हौं सो रतनसेन सक-बंधी। राहु बेधि जीता सैरंधी

हनुवँत सरिस भार जेइ काँधा । राघव सरिस समुद जो बाँधा
बिक्रम सरिस कीन्ह जेइ साका । सिंघलदीप लीन्ह जौ ताका
जौ असलिखा भएउँ नहिं ओछा । जियत सिंघ कै गह को मोछा ?

दरब लेइ तौ मानौं सेव करौं गहि पाउ ।
चाहै जौ सो पदमिनी सिंघलदीपहि जाउ' ॥ १७ ॥

'बोलु न, राजा, आपु जनाई । लीन्ह देवगिरि और छिताई
सातौ दीप राज सिर नावहिं । औ सँग चली पदमिनी आवहिं
जेहि कै सेव करै संसारा । सिंघलदीप लेत कित बारा ?
जिनि जानसि यह गढ़ तोहि पाहीं । ताकर सबै, तोर किछु नाहीं
सेवा करु जौ जियन तोहि, भाई ! नाहिं त फेरि माख होइ जाई'
'तुरुक, जाइ कहुँ मरै न धाई । होइहि इसकंदर कै नाई
औ तेहि दीप पतँग होइ परा । अगिनि-पहार पाँव देइ जरा

महूँ समुझि अस अगमना सजि राखा गढ़ साजु ।
कालिह होइ जेहि आवन सो चलि आवै आजु' ॥ १८ ॥

मरजा पलटि साह पहँ आवा । 'देव न मानै बहुत मनावा
आगि जो जरै आगि पै सूझा । जरत रहै, न बुझाए बूझा'
सुनि कै अस राता सुलतानू । जैसे तपै जेठ कर भानू
'हिंदू देव काह बर खाँचा ? सरगहु अब न सूर सौं बाँचा
लिखा पत्र चारिहु दिसि धाए । जावत उमरा बेगि बोलाए
दुंद घाव भा, इंद्र सकाना । डोला मेरु, सेस अकुलाना
चितउर सौंह बारिगह तानी । जहँ लगि सुना कूच सुलतानी

हस्ति घोड़ औ दर पुरुष जावत बेसरा ऊँट।
जहँ तहँ लीन्ह पलानै कटक सरह अस छूट ॥ १९ ॥

चले पंथ पैगह सुलतानी। तीख तुरंग बाँक कनकानी
लोहसार हस्ती पहिराए। मेघ साम जनु गरजत आए
चले जो उमरा मीर बखाने। का बरनौं जस उन्हकर बाने
धनि सुलतान जेहिक संसारा। उहै कटक अस जोरै पारा
लाखन मीर बहादुर जंगी। जँबुर, कमानैं, तीर खदंगी
बरन बरन औ पाँतिहि पाँती। चली सो सेना भाँतिहि भाँती
बेहर बेहर सब कै बोली। बिधि यह खानि कहाँ दहुँ खोली?

सात सात जोजन कर एक दिन होइ पयान।
अगिलहिं जहाँ पयान होइ पछिलहिं तहाँ मिलान ॥२०॥

डोले गढ़, गढ़पति सब काँपे। जोउ न पेट, हाथ हिय चाँपे
दूतन्ह आइ कहा जहँ राजा। चढ़ा तुरुक आवै दर साजा
सुनि राजा दौराई पाती। हिंदू-नावँ जहाँ लगि जाती
'चितउर हिंदुन कर अस्थाना। सत्रु तुरुक हठि कीन्ह पयाना
आव समुद्र रहै नहिं बाँधा। मैं होइ मेड़ भार सिर काँधा
पुरवहु साथ, तुम्हारि बड़ाई। नाहि त सत को पार छँड़ाई?
जौ लहि मेड़ रहै सुख-साखा। टूटे बारि जाइ नहिं राखा

सती जौ जिउ महँ सत धरै जरै न छाँड़ै साथ।
जहँ बीरा तहँ चून है पान, सोपारी, काथ' ॥२१॥

करत जो राय साह कै सेवा। तिन्ह कहँ आइ सुनाव परेवा
सब होइ एकमते जो सिधारे। बादसाह कहँ आइ जोहारे

'है चितउर हिंदुन्ह कै माता। गाढ़ परे तजि जाइ न नाता
रतनसेन तहँ जौहर साजा। हिंदुन्ह माँझ आहि बड़ राजा
हिंदुन्ह केर पतँग कै लेखा। दौरि परहिं अगिनी जहँ देखा
कृपा करहु चित बाँधहु धीरा। नाहिं त हमहिं देहु हँसि बीरा
पुनि हम जाइ मरहिं ओहि ठाऊँ। मेटि न जाइ लाज सौं नाऊँ'

दीन्ह साह हँसि बीरा और तीन दिन बीचु।
तिन्ह सीतल को राखै जिनहिं अगिनि महँ मीचु? ॥२२॥

रतनसेन चितउर महँ साजा। आइ बजाइ बैठ सब राजा
सजि संग्राम बाँध सब साका। छाँड़ा जियन, मरन सब ताका
गढ़ तस सजा जो चाहै कोई। बरिस बीस लगि खाँग न होई
बाँके चाहि बाँक गढ़ कीन्हा। औ सब कोट चित्र कै लीन्हा
बैठे धानुक कँगुरन कँगुरा। भूमि न आँटी अँगुरन अँगुरा
औ बाँधे गढ़ गज मतवारे। फाटै भूमि होहिं जौं ठारे
बिच बिच बुर्ज बने चहुँ फेरी। बाजहिं तबल, ढोल औ भेरी

भा गढ़ राज सुमेरु जस सरग छुवै पै चाह।
समुद न लेखे लावै गंग सहसमुख काह? ॥२३॥

बादसाह हठि कीन्ह पयाना। इंद्र-भँडार डोल, भय माना
होत पयान कटक सो आवा। आइ साह चितउर नियरावा
राजा राव देखि सब चढ़ा। आव कटक सब लोहे-मढ़ा
चहुँ दिसि दिस्टि परा गजजूहा। साम-घटा मेघन्ह अस रूहा
चढ़ि धौराहर देखहिं रानी। धनि तुइँ अस जाकर सुलतानी

की धनि रतनसेन तुइँ राजा। जा कहँ तुरुक कटक अस साजा
बैरख ढाल केरि परछाहीं। रैनि होति आवै दिन माहीं

अंधकूप भा आवै उड़त आव तस छार।
ताल तलावा पोखर धूरि भरी जेवनार॥ २४॥

राजै कहा 'करहु जो करना। भएउ असूझ, सूझ अब मरना'
जहँ लगि राज साज सब होऊ। ततखन भएउ संजोउ सँजोऊ
बाजे तबल अकूत जुझाऊ। चढ़े कोपि सब राजा राऊ
असु-दल गज-दल दूनौ साजे। औ घन तबल जुझाऊ बाजे
माथे मुकुट, छत्र सिर साजा। चढ़ा बजाइ इंद्र अस राजा
आगे रथ सेना सब ठाढ़ी। पाछे धुजा मरन कै काढ़ी
चढ़ा बजाइ चढ़ा जस इंदू। देवलोक गोहने भए हिंदू

देखि अनी राजा कै जग होइ गएउ असूझ।
दहुँ कस होवै चाहै चाँद सूर के जूझ॥ २५॥

इहाँ राज अस सेन बनाई। उहाँ साह कै भई अवाई
अगिले दौरे आगे आए। पछिले पाछ कोस दस छाए
साह आइ चितउरगढ़ बाजा। हस्ती सहस बीस सँग साजा
ओनइ आये दूनौ दल साजे। हिंदू तुरुक दुवौ रन गाजे
दुवौ समुद दधि उदधि अपारा। दूनौ मेरु खिखिंद पहारा
भा संग्राम न भा अस काऊ। लोहे दुहुँ दिसि भए अगाऊ
सीस कंध कटि कटि भुइँ परे। रुहिर सलिल होइ सायर भरे

काहू साथ न तन गा सकति मुए सब पोखि।
ओछ पूर तेहि जानब जो थिर आवत जोखि॥ २६॥

अथवा दिवस, सूर भा बासा। परी रैनि, ससि उवा अकासा
चाँद छत्र देइ बैठा आई। चहुँ दिसि नखत दीन्ह छिटकाई
नखत अकासहि चढ़े दिपाहीं। टुटि टुटि लूक परहिं, न बुझाहीं
परहिं सिला जस परै बजागी। पाहन पाहन सौं उठि आगी
गोला परहिं, कोल्हु ढरकाहीं। चूर करत चारिउ दिसि जाहीं
ओनई घटा बरस झरि लाई। ओला टपकहिं, परहिं बिछाई
तुरुक न मुख फेरहिं गढ़ लागे। एक मरै, दूसर होइ आगे

परहिं बान राजा के सकै को सनमुख काढ़ि?
ओनई सेन साह कै रही भोर लगि ठाढ़ि॥ २७॥

भयउ बिहानु, भानु पुनि चढ़ा। सहसहु करा दिवस बिधि गढ़ा
भा धावा, गढ़ कीन्ह गरेरा। कोपा कटक लाग चहुँ फेरा
छेंका कोट जोर अस कीन्हा। घुसिकै सरग सुरंग तिन्ह दीन्हा
गरगज बाँधि कमानैं धरीं। बज्र-आगि मुख दारू भरीं
अस्ट धातु के गोला छूटहिं। गिरहिं पहार चून होइ फूटहिं
एक बार सब छूटहिं गोला। गरजै गगन, धरति सब डोला
फूटहिं कोट फूट जनु सीसा। ओदरहिं बुरुज जाहिं सब पीसा

लंका-रावट जस भई दाह परी गढ़ सोइ।
रावन लिखा जरै कहँ कहहु अजर किमि होइ॥ २८॥

राजगीर लागे गढ़ थवई। फूटै जहाँ सँवारहिं सबई
सौ सौ मन के बरिसहिं गोला। बरिसहिं तुपक तीर जस ओला
जानहुँ परहिं सरग हुत गाजा। फाटै धरति आइ जहँ बाजा
सबै कहा अब परलै आई। धरती सरग जूझ जनु लाई

तबहूँ राजा हिये न हारा। राज-पौरि पर रचा अखारा
सौंह साह कै बैठक जहाँ। समुहें नाच करावै तहाँ
तंत बितंत सुभर घन-तारा। बाजहिं सबद होइ झनकारा

जग-सिंगार मनमोहन पातुर नाचहिं पाँच।
बादसाह गढ़ छेंका राजा भूला नाच ॥ २९ ॥

जहँवाँ सौंह साह कै दीठी। पातुरि फिरत दीन्हि तहँ पीठी
देखत साह सिंघासन गूँजा। कब लगि मिरिग चाँद तोहि भूजा
छाँड़हिं बान जाहिं उपराही। का तैं गरब करसि इतराही?
बोलत बान लाख भए ऊँचे। कोइ कोट, कोइ पौरि पहूँचे
जहाँगीर कनउज कर राजा। ओहि क बान पातुरि के बाजा
लागा बान, जाँघ तस नाचा। जिउ गा सरग, परा भुँइ साँचा
उड़सा नाच, नचनिया मारा। रहसे तुरुक बजाइ कै तारा

जो गढ़ साजै लाख दस कोटि उठावै कोट।
बादसाह जब चाहै छपै न कौनिउ ओट ॥ ३० ॥

आठ बरिस गढ़ छेंका रहा। धनि सुलतान, कि राजा महा
आइ साह अँबराव जो लाए। फरे झरे पै गढ़ नहिं पाए
जौ तोरों तौ जौहर होई। पदमिनि हाथ चढ़ै नहिं सोई
एहि बिधिढील दीन्ह, तब ताईं। दिल्ली तैं अरदासैं आईं
पछिउँ हरेव दीन्हि जो पीठी। सो अब चढ़ा सौंह कै दीठी
जिन्ह भुइँ माथ, गगन तेइ लागा। थाने उठे, आव सब भागा
उहाँ साह चितउरगढ़ छावा। इहाँ देस अब होइ परावा

जिन्ह जिन्ह पंथ न तृन परत बाढ़े बेर बबूर।
निसि अँधियारी जाइ तब बेगि उठै जौ सूर॥ ३१॥

सुना साह अरदासैं पढ़ी। चिंता आन आनि चित चढ़ी
गढ़ सौं अरुझि जाइ तब छूटै। होइ मेराव, कि सो गढ़ टूटै
पाहन कर रिपु पाहन हीरा। बेधौं रतन पान देइ बीरा
सरजा सेंती कहा यह भेऊ। पलटि जाहु अब मानहु सेऊ
कहु तोहि सौं पदमिनि नहिं लेउँ। चूरा कीन्ह छाँड़ि गढ़ देऊँ
सरजा पलटि सिंघ चढ़ि गाजा। अग्या जाइ कही जहँ राजा
'अबहूँ हिये समुझु, रे राजा। बादसाह सौं जूझ न छाजा
हैं जो पाँच नग तो पहँ लेइ पाँचौं कह भेंट।
मकु सो एक गुन मानै सब ऐगुन धरि मेट' ॥ ३२॥

'अनु सरजा को मेटै पारा। बादसाह बड़ अहै तुम्हारा
ऐगुन मेटि सकै पुनि सोई। औ जो कीन्ह चहै सो होई
नग पाँचौ देइ देउँ भँडारा। इसकंदर सौं बाँचै दारा
जौ यह बचन त माथे मोरे। सेवा करौं ठाढ़ कर जोरे
पै बिनु सपथ न अस मन माना। सपथ बोल बाचा-परवाँना
खंभ जो गरुअ लीन्ह जग भारू। तेहि क बोल नहिं टरै पहारू'
'नाव जो माँझ भार हुँत गीवा'। सरजै कहा 'मंद वह जीवा'
सरजै सपथ कीन्ह छल बैनहि मीठै मीठ।
राजा कर मन माना, माना तुरत बसीठ॥ ३३॥

हंस कनक-पींजर हुँत आना। औ अमृत, नग परस-पखाना
औ सोनहार सोन कै डाँड़ी। सारदूल रूपै कै काँड़ी

सो बसीठ सरजा लेइ आवा। बादसाह कहँ आनि मेरावा
'कालिह आव गढ़ ऊपर भानू। जो रे धनुक, सौंहि होइ बानू'
पान बसीठ मया करि पावा। लीन्ह पान, राजा पहँ आवा
'जस हम भेंट कीन्ह गा कोहू। सेवा माँझ प्रीति औ छोहू
कालिह साह गढ़ देखै आवा। सेवा करहु जैस मन भावा'

भा आयसु अस राजघर बेगि दै करहु रसोइ।
ऐस सुरस रस मेरवहु जेहि सौं प्रीति-रस होइ ॥ ३४ ॥

जत परकार रसोइ बखानी। साह जिँवावहिं कहँ सब आनी
जेवाँ साह जो भयउ बिहाना। गढ़ देखै गवना सुलताना
कँवल सहाय सूर सँग लीन्हा। राघव चेतन आगे कीन्हा
ततखन आइ बिवाँन पहूँचा। मन तें अधिक,गगन तें ऊँचा
उघरी पवँरि, चला सुलतानू। जानहु चला गगन कहँ भानू
आजु पवँरि-मुख भा निरमरा। जौ सुलतान आइ, पग धरा
जनहुँ उरेह काटि सब काढ़ी। चित्र क मूरति बिनवहिं ठाढ़ी

लाखन बैठ पँवरिया जिन्ह तैं नवहिं करोरि।
तिन्ह सब पवँरि उघारे ठाढ़ भए कर जोरि ॥ ३५ ॥

सातौ पँवरी कनक-केवारा। सातौ पर बाजहिं घरियारा
सात रंग तिन्ह सातौ पवरी। तब तिन्ह चढ़ै फिरै नौ भँवरी
खँड खँड साज पलँग औ पीढ़ी। जानहु इंद्रलोक कै सीढ़ी
कनक-छत्र सिंघासन साजा। पैठत पँवरि मिला लेइ राजा
बादसाह चढ़ि चितउर देखा। सब संसार पाँव तर लेखा

रतन पदारथ नग जो बखाने। घूरन्ह माँह देख छहराने
मँदिर मँदिर फुलवारी बारी। बार बार बहु चित्र सँवारी
पाँसा सारि कुँवर सब खेलहिं गीतन्ह स्रवन ओनाहिं।
चैन चाव तस देखा जनु गढ़ छेंका नाहिं ॥ ३६ ॥
देखत साह कीन्ह तहँ फेरा। जहँ मंदिर पदमावति केरा
आस पास सरवर चहुँ पासा। माँझ मँदिर जनु लाग अकासा
कनक सँवारि नगन्ह सब जरा। गगन चंद जगु नखतन्ह भरा
सरवर चहुँ दिसि पुरइन फूली। देखत बारि रहा मन भूली
कुँवरि सहस दस बार अगोरे। दुहुँ दिसि पँवरि ठाढ़ि कर जोरे
सारदूल दुहुँ दिसि गढ़ि काढ़े। गलगाजहिं जानहुँ ते ठाढ़े
जावत कहिए चित्र कटाऊ। तावत पँवरिन्ह बने जड़ाऊ
साह मँदिर अस देखा जनु कैलास अनूप।
जाकर अस धौराहर सो रानी केहि रूप ॥ ३७ ॥
नाँघत पँवरि गए खँड साता। सतएँ भूमि बिछावन राता
आँगन साह ठाढ़ भा आई। मँदिर छाँह अति सीतल पाई
रानी धौराहर उपराहीं। करै दिस्टि नहिं तहाँ तराहीं
सखी सरेखी साथ बईठी। तपै सूर, ससि आव न दीठी
राजा सब करै कर जोरे। आजु साह घर आवा मोरे
नट नाटक, पातुरि औ बाजा। आइ अखाड़ माहँ सब साजा
परगट कह राजा सौं बाता। गुपुत प्रेम पदमावति राता
गीत नाद अस धंधा दहक बिरह कै आँच।
मन कै डोरि लागि तहँ जहँ सो गहि गुन खाँच ॥ ३८ ॥

गोरा बादल राजा पाहाँ। रावत दुवौ दुवौ जनु बाहाँ
आइ स्रवन राजा के लागे। मूसि न जाहिं पुरुष जो जागे
'बाचा परखि तुरुक हम बूझा। परगट मेर, गुपुत छल सूझा
तुम नहिं करौ तुरुक सौं मेरू। छल पै करहिं अंत कै फेरू'
सुनि राजहिं यह बात न भाई। 'जहाँ मेर तहँ नहिं अधमाई
मंदहि भल जो करै भल सोई। अंतहि भला भले कर होई
जो छल करै ओहि छल बाजा। जैसे सिंघ मँजूसा साजा'
राजै लोन सुनावा लाग दुहुन्ह जस लोन।
आए कोहाइ मँदिर कहँ सिंह छान अब गोन ॥३९॥
राजा कै सोरह सै दासी। तिन्ह मँह चुनि काढ़ीं चौरासी
बरन बरन सारी पहिराईं। निकसि मँदिर तें सेवा आईं
जनु निसरीं सब बीरबहूटी। रायमुनी पींजर हुँत छूटीं
सबै परथमै जोबन सोहैं। नयन बान औ सारँग भौंहैं
मारहिं धनुक फेरि सर ओही। पनिघट घाट धनुक जिति मोही
काम-कटाछ हनहिं चित-हरनी। एक एक तें आगरि बरनी
जानहुँ इंद्रलोक तें काढ़ीं। पाँतिहि पाँति भईं सब ठाढ़ी
साह पूछ राघव पहँ 'ए सब अछरी आहिं।
तुइ जो पदमिनि बरनी कहु सो कौन इन माहिं' ॥४०॥
'दीरघ आउ, भूमिपति भारी। इन मँह नाहिं पदमिनी नारी
यह फुलवारि सो ओहि कै दासी। कहँ केतकी भँवर जहँ बासी
वह तौ पदारथ, ए सब मोती। कहँ वह दीप पतँग जेहि जोती
जौ लगि सूर क दिस्टि अकासू। तौ लगि ससि न करै परगासू'

सुनि कै साह दिस्टि तर नावा। 'हम पाहुन, यह मँदिर परावा
पाहुन ऊपर हेरै नाहीं। हना राहु अर्जुन परछाहीं'
सेव करैं दासी चहुँ पासा। अछरी मनहुँ इंद्र कैलासा

पुनि सँधान बहु आनहिं परसहिं बूकहि बूक।
करहिं सँवार गोसाइं जहाँ परै किछु चूक ॥४१॥

भइ जेवनार फिरा खँड़वानी। फिरा अरगजा कुहँकुहँ-पानी
नग अमोल जो थारहि भरे। राजै सेव आनि कै धरे
बिनती कीन्ह घालि गिउ पागा। 'ए जगसूर, सीउ मोहिं लागा'
सुनि बिनती बिहँसा सुलतानू। सहसौ करा दिपा जस भानू
'ए राजा, तुइ साँच जुड़ावा। भइ सुदिस्टि अब, सीउ छुड़ावा
खाहु देस आपन करि सेवा। और देउँ माँडौ तोहि, देवा'
हँसि हँसि बोलै, टेकै काँधा। प्रीति भुलाइ चहै छल बाँधा

मया-बोल बहुत कै साह पान हँसि दीन्ह।
पहिले रतन हाथ कै चहै पदारथ लीन्ह ॥४२॥

माया-मोह-बिबस भा राजा। साह खेल सतरँज कर साजा
'राजा, है जौ लगि सिर घामू। हम तुम घरिक करहिं बिसरामू'
दरपन साह भीति तहँ लावा। देखौं जबहिं झरोखे आवा
खेलहिं दुऔ साह औ राजा। साह क रुख दरपन रह साजा
सूर देख जौ तरई-दासी। जँह ससि तहाँ जाइ परगासी
'सुना जो हम दिल्ली सुलतानू। देखा आजु तपै जस भानू
ऊँच छत्र जाकर जग माहाँ। जग जो छाँहँ सब ओहि कै छाँहाँ

बादसाह दिल्ली कर कित चितउर महँ आव।
देखि लेहु, पदमावति, जेहि न रहै पछिताव' ॥ ४३ ॥

बिगसै कुमुद कहे ससि ठाऊँ। बिगसै कँवल सुने रबि-नाऊँ
भइ निसि, ससि धौराहर चढ़ी। सोरह कला जैस बिधि गढ़ी
बिहँसि झरोखे आइ सरेखी। निरखि साह दरपन महँ देखी
होतहि दरस परस भा लोना। धरती सरग भएउ सब सोना
रुख माँगत रुख ता सहुँ भयऊ। भा शह मात, खेल मिटि गयऊ
राजा भेद न जानै झाँपा। भा बिसँभार, पवन बिनु काँपा
राघव कहा कि लागि सोपारी। लेइ पौढ़ावहिं सेज सँवारी

रैनि बीति गइ भोर भा उठा सूर तब जागि।
जो देखै ससि नाहीं रही करा चित लागि ॥ ४४ ॥

राघव चेति साह पहँ गयऊ। सूरज देखि कँवल बिसमयऊ
'देखि एक कौतुक हौं रहा। रहा अँतरपट पै नहिं अहा
सरवर देख एक मैं सोई। रहा पानि पै पानि न होई
सरग आइ धरती महँ छावा। रहा धरति पै धरत न आवा
तिन्ह महँ पुनि एक मंदिर ऊँचा। करन्ह अहा पै कर न पहूँचा
तेहि मंडप मूरति मैं देखी। बिनु तन,बिनु जिउ जाइ बिसेखी
पूरन चंद होइ जनु तपी। पारस रूप दरस देइ छपी

बिगसा कँवल सरग निसि जनहुँ लौकि गइ बीजु।
ओहि राहु भा भानुहिं राघव मनहिं पतीजु ॥४५॥

अति बिचित्र देखा सो ठाढ़ी। चित कै चित्र, लीन्ह जिउ काढ़ी
सिंघ-लंक, कुंभस्थल जोरू। आँकुस नाग, महाउत मोरू

तेहि ऊपर भा कँवल बिगासू। फिरि अलि लीन्ह पुहुप-मधु-बासू
दुइ खंजन बिच बैठेउ सूआ। दुइज क चाँद धनुक लेइ ऊआ
मिरिग देखाइ गवन फिरि किया। ससि भा नाग, सूर भा दिया
सुठि ऊँचे देखत वह उचका। दिस्टि पहुँचि, कर पहुँचि न सका
पहुँच-बिहून दिस्टि कित भई? गहि न सका, देखत वह गई

राघव, हेरत जिउ गयउ कित आछत जो असाध?
यह तन राख पाँख कै सकै न केहि अपराध' ॥४६॥

राघव सुनत सीस भुइँ धरा। 'जुग जुग राज भानु कै करा
उहै कला, वह रूप बिसेखी। निहचै तुम्ह पदमावति देखी
केहरि लंक, कुँभस्थल हिया। गीउ मयूर; अलक बेधिया
कँवल बदन औ बास सरीरू। खंजन नयन, नासिका कीरू
भौंह धनुक, ससि-दुइज लिलाटू। सब रानिन्ह ऊपर ओहि पाटू
सोई मिरिग देखाइ जो गयऊ। बेनी नाग, दिया चित भयऊ
दरपन महँ देखी परछाहीं। सो मूरति, भीतर जिउ नाहीं

सबै सिंगार-बनी धनि अब सोई मति कीज।
अलक जो लटकै अधर पर सो गहि कै रस लीज' ॥४७॥

मीत पै माँगा बेगि बिवाँनू। चला सूर, सँवरा अस्थानू
बहुत मया सुनि राजा फूला। चला साथ पहुँचावै भूला
साह हेतु राजा सौं बाँधा। बातन्ह लाइ लीन्ह, गहि काँधा
चाँद क गहन अगाह जनावा। राज भूल गहि साह चलावा
राजा कहँ बियाध भइ माया। तजि कैलास धरा भुइँ पाया

जेहिकारन गढ़ कीन्ह अगूठी । कित छाँड़ै जौ आवै मूठी ?
चारा मेलि धरा जस माछू । जल हुँत निकसि मुवै कित काछू ?
राजहिं धरा आनि कै तन पहिरावा लोह ।
ऐस लोह सो पहिरै चीत सामि कै दोह ॥ ४८ ॥

पायँन्ह गाढ़ी बेड़ी परी । साँकर गीउ, हाथ हथकरी
औ धरी बाँधि मँजूषा मेला । ऐस सत्रु जिनि होइ दुहेला !
सुनि चितउर महँ परा बखाना । देस देस चारिउ दिसि जाना
आजु नरायन फिरि जग खूँदा । आजु सो सिंघ मँजूषा मूँदा
आजु खसे रावन दस माथा । आजु कान्ह कालीफन नाथा
आजु परान कंस कर ढोला । आजु मीन संखासुर लीला
आजु परे पंडव बँदि माहाँ । आजु दुसासन उतरीं बाहाँ
आजु धरा बलि राजा मेला बाँधि पतार ।
आजु सूर दिन अथवा भा चितउर अँधियार ॥ ४९ ॥

पद्मावति बिनु कंत दुहेली । बिनु जल कँवल सूखि जस बेली
गाढ़ी प्रीति सो मोसौं लाए । दिल्ली कंत निचिंत होइ छाए
सो दिल्ली अस निबहुर देसू । कोइ न बहुरा कहै सँदेसू
जो गवनै सो तहाँ कर होई । जो आवै किछु जान न सोई
अगम पंथ पिय तहाँ सिधावा । जो रे गयउ सो बहुरि न आवा
कुवाँ धार जल जैक बिछोवा । डोल भरै नैनन्ह धनि रोवा
'लेजुरि भई नाह बिनु तोहीं । कुवाँ परी, धरि काढ़सि मोहीं'
नैन-डोल भरि ढारै हिये न आगि बुझाई ।
घरी घरी जिउ आवै घरी घरी जिउ जाइ ॥ ५० ॥

पिय बिनु व्याकुल बिलपै नागा। बिरहा-तपनि साम भए कागा
'पवन पानि कहँ सीतल पीऊ। जेहि देखे पलुहै तन जीऊ
कहँ सो बास मलयगिरि नाहा। जेहि कल परति देत गल बाहाँ
पदमिनि ठगिनि भई कित साथा। जेहि तें रतन परा पर-हाथा
होइ बसंत आवहु, पिय केसरि। देखे फिर फूलै नागेसरि
तुम्ह बिनु, नाह, रहै हिय तचा। अब नहिं बिरह-गरुड़ सौं बचा
अब अँधियार परा, मसि लागी। तुम्ह बिनु कौन बुझावै आगी

नैन, स्रवन, रस रसना सबै खीन भए, नाह।
कौन सो दिन जेहि भेंट कै आइ करै सुख-छाँह' ॥ ५१ ॥

(७) गोरा बादल खंड

कुंभलनेर-राय देवपालू। राजा केर सत्रु हिय-सालू
वह पै सुना कि राजा बाँधा। पाछिल बैर सँवरि छर साँधा
सत्रु-साल तब नेबरै सोई। जौ घर आव सत्रु कै जोई
दूती एक बिरिध तेहि ठाऊँ। बाम्हनि जाति, कुमोदिनि नाऊँ
ओहि हँकारि कै बीरा दीन्हा। 'तोरे बर मैं बर जिउ कीन्हा
तुइ जो कुमोदिनि कँवल के नियरे। सरग जो चाँद बसै तोहि हियरे
चितउर महँ जो पदमिनि रानी। कर बर छर सौं दे मोहिं आनी

रूप जगत-मन-मोहन औ पदमावति नावँ।
कोटि दरब तोहि देइहौं आनि करसि एहि ठाँव' ॥१॥

कुमुदिनि कहा 'देखु, हौं सो हौं। मानुष काह, देवता मोहौं'
दूती बहुत पकावन साधे। मोतिलाडू औ खेरौरा बाँधे
लेइ पूरी भरि डाल अछूती। चितउर चली पैज कै दूती
बिरिध बैस जौ बाँधे पाऊ। कहाँ सो जोबन, कित बेवसाऊ
तन बूढ़ा, मन बूढ़ न होई। बल न रहा, पै लालच सोई
कहाँ सो रूप जगत सब राता। कहँ सो गरब हस्ति जस माता
कहाँ सो तीख नयन, तन ठाढ़ा। सबै मारि जोबन-पन काढ़ा

मुहमद बिरिध जो नइ चलै, काह चलै भुइँ टोइ।
जोबन-रतन हेरान है, मकु धरती महँ होइ ॥ २ ॥

आइ कुमोदिनि चितउर चढ़ी। जोहन मोहन पाढ़त पढ़ी
पूछि लीन्ह रनिवास बरोठा। पैठी पँवरी भीतर कोठा
जहाँ पदमिनी ससि उजियारी। लेइ दूती पकवान उतारी
हाथ पसारि धाइ कै भेंटी। 'चीन्हा नहिं, राजा कै बेटी
हौं बान्हनि जेहि कुमुदिनि नाऊँ। हम तुम उपने एकै ठाऊँ
नावँ पिता कर दूबे बेनी। सोइ पुरोहित गँधरबसेनी
तुम बारी तब सिंघलदीपा। लीन्हे दूध पियाइउँ सीपा।
ठाँव कीन्ह मैं दूसर कुंभलनेरै आइ।
सुनि तुम्ह कहँ चितउर महँ कहिउँ कि भेंटौं जाइ' ॥३॥

सुनि निहचै नैहर कै गोई। गरे लागि पदमावति रोई
नैन-गगन रबि बिनु अँधियारे। ससि-मुख आँसु टूट जनु तारे
जग अँधियार गहन दिन परा। कब लगि ससि नखतन्ह निसि भरा
'माय बाप कित जनमी बारी। गोउ तूरि कित जनम न मारी ?
कित बियाहि दुख दीन्ह दुहेला। चितउर पंथ कंत बँदि मेला
अब एहि जियन चाहि भल मरना। भएउ पहार जनम दुख भरना
निकसि न जाइ निलज यह जीऊ। देखौं मँदिर सून बिनु पीऊ
कुहुकि जो रोई ससि नखत नैन हैं रात चकोर।
अबहूँ बोलैं तेहि कुहुक कोकिल चातक मोर' ॥ ४ ॥

कुमुदिनि कंठ लागि सुठि रोई। पुनि लेइ रूप-डार मुख धोई
'तुइ ससि-रूप जगत उजियारी। मुख न झाँपु निसि होइ अँधियारी
सुनि चकोर कोकिल दुख दुखी। घुँघची भई नैन करमुखी
केतौ धाइ मरै कोइ बाटा। सोइ पाव जो लिखा लिलाटा

जो विधि लिखा आन नहिं होई। कित धावै, कित रोवै कोई
कित कोउ हींछ करै औ पूजा। जो बिधि लिखा होइ नहिं दूजा'
जेतिक कुमुदिनि बैन करेई। तस पदमावति स्रवन न देई

सेंदुर चीर मैल तस सूखि रही जस फूल।
जेहि सिँगार पिय तजिगा जनम न पहिरै भूल ॥ ५ ॥

तब पकवान उघारा दूती। पदमावति नहिं छुवै अछूती
'मोहि अपने पिय केर खभारू। पान फूल कस होइ अहारू ?
मोकहँ फूल भए सब काँटै। बाँटि देहु जौ चाहहु बाँटै
रतन छुवा जिन्ह हाथन्ह सेंती। और न छुवौं सो हाथ संकेती
ओहि के रँग भा हाथ मँजीठी। मुकुता लेउँ तौ घुँघची दीठी
नैन करमुहें, राती काया। मोति होहिं घुँघची जेहि छाया
अस कै ओछ नैन हत्यारे। देखत गा पिउ गहै न पारै

का तोर छुवौं पकावन गुड़ करुवा घिउ रूख।
जेहि मिलि होत सवाद रस लेइ सो गयउ पिउ भूख' ॥६॥

कुमुदिनि रही कँवल के पासा। बैरी सूर, चाँद कै आसा
धनि कुँभिलानि रही, भइ चूरू। बिगसि रैनि बातन्ह कर भूरू
'कस तुइ, बारि, रहसि कुँभिलानी। सूखि बेलि जस पाव न पानी
अबही कँवल-करी तुइँ बारी। कोवँरि बैस, उठत पौनारी
बेनी तोरि मैलि औ रूखी। सरवर माहँ रहसि कस सूखी ?
पान-बेलि बिधि कया जमाई। सींचत रहै तबहिं पलुहाई
करु सिँगार सुख फूल तमोरा। बैठु सिँघासन, झूलु हिंडोरा

हार चीर निति पहिरहु सिर कर करहु सँभार।
भोग मानि लेहु दिन दस जोबन जात न बार' ॥ ७ ॥

बिहँसि जो जोबन कुमुदिनि कहा। कँवल न बिगसा, संपुट रहा
'ए कुमुदिनि! जोबन, तेहि माहाँ। जो आछै पिउ के सूख-छाहाँ
जा कर छत्र सो बाहर छावा। सो उजार घर कौन बसावा
अहा न राजा रतन अँजोरा। केहिक सिँघासन, केहिक पटोरा?
को पालक पौढ़ैं, को माढ़ो? सोवनहार परा बदिँ गाढ़ो
चहुँ दिसि यह घर भा अँधियारा। सब सिँगार लेइ साथ सिधारा
कया-बेलि तब जानौं जामी। सींचनहार आव घर स्वामी
तौ लहि रहौं झुरानी जौ लहि आव सो कंत।
एहि फूल, एहि सेंदुर नव होइ उठै बसंत' ॥ ८ ॥

जिनि तुइ, बारि, करसि अस जीऊ। जौ लहि जोबन तौ लहि पीऊ
पुरुष संग आपन केहि केरा। एक कोहाँइ, दुसर सहुँ हेरा
जोबन-जल दिन दिन जस घटा। भँवर छपान, हंस परगटा
सुभर सरोवर जौ लहि नीरा। बहु आदर, पंखी बहु तीरा
नीर घटे पुनि पूछ न कोई। बिरसि जो लीज हाथ रह सोई
जौ लगि कालिँदि, होहि बिरासी। पुनि सुरसरि होइ समुद परासी
जोबन भवँर, फूल तन तोरा। बिरिध पहुँचि जस हाथ मरोरा
कृस्न जो जोबन कारनै गोपीतन्ह के साथ।
छरि कै जाइहि बान पै धनुक रहै तोरे हाथ' ॥ ९ ॥

'जौ पिउ रतनसेन मोर राजा। बिनु पिउ जोबन कौने काजा?
कुल कर पुरुष-सिंघ जेहि खेरा। तेहि थर कैस सियार बसेरा?

जोबन-नीर घटे का घटा ? सत्त के बर जौ नहिं हिय फटा'
'जोबन बिना बिरिध होइ नाऊँ । बिनु जोबन थाकै सब ठाऊँ
जोबन हेरत मिलै न हेरा । सो जौ जाइ, करै नहिं फेरा
सेंवर-सेव न चित करु सूत्रा । पुनि पछितासि अंत जब भूत्रा
रूप तोर जग ऊपर लोना । यह जोबन पाहुन चल होना

उठत कोंप जस तरिवर तस जोबन तोहि रात ।
तौ लहि रंग लेहु रचि पुनि सो पियर होइ पात' ॥ १० ॥

कुमुदिनि-बैन सुनत हिय जरी । पदमिनि उरहि आगि जनु परी
'रँग ताकर हौं जारौं काँचा । आपन तजि जो पराएहि राँचा
दूसर करै जाइ दुइ बाटा । राजा दुइ न होहिं एक पाटा
जेहि के जीउ प्रीति दिढ़ होई । सुख सोहाग सौं बैठे सोई
जोबन जाउ, जाउ सो भँवरा । पिय कै प्रीति न जाइ, जो सँवरा
एहि जग जौ पिउ करहिं न फेरा । ओहि जग मिलहिं जो दिन दिन हेरा
जोबन मोर रतन जहँ पीऊ । बलि तेहि पिउ पर जोबन जीऊ

भरथरि बिछुरि पिंगला आहि करत जिउ दीन्ह ।
हौं पापिनि जो जियति हौं इहै दोष हम कीन्ह' ॥ ११ ॥

'पदमावति, सो कौनि रसोई । जेहि परकार न दूसर होई
रस दूसर जेहि जीभ बईठा । सो जानै रस खाटा मीठा
भँवर बास बहु फूलन्ह लेई । फूल बास बहु भँवरन्ह देई
दूसर पुरुष न रस तुइ पावा । तिन्ह जाना जिन्ह लीन्ह परावा
एक चुल्लू रस भरै न हीया । जौ लहि नहिं फिर दूसर पीया

तोर जोबन जस समुद हिलोरा । देखि देखि जिउ बूड़ै मोरा
रंग और नहिं पाइय बैसे । जरे मरे बिनु पाउब कैसे ?
देखि धनुक तोर नैना मोहिं लाग बिष-बान ।
बिहँसि कँवल जो मानै भँवर मिलावौं आन' ॥ १२ ॥

'कुमुदिनि, तुइ बैरिनि, नहिं धाई । तुइ मसि बोलि चढ़ावसि आई
निरमल जगत नीर कर नामा । जौ मसि परै होइ सो सामा
जहँवाँ धरम पाप नहिं दीसा । कनक सोहाग माँझ जस सीसा
जो मसि परे होइ ससि कारी । सो हँसि लाइ देसि मोहिं गारी
कापर महँ न छूट मसि-अंकू । सो मसि लेइ मोहिं देसि कलंकू
साम भँवर मोर सूरुज-करा । और जो भँवर साम मसि-भरा
कँवल भँवर-रबि देखै आँखी । चंदन-बास न बैठै माखी
साम समुद मोर निरमल रतनसेन जगसेन ।
दूसर सरि जो कहावै सो बिलाइ जस फेन' ॥ १३ ॥

'पदमिनि, पुनि मसि बोलन बैना । सो मसि देखु दुहूँ तोरे नैना
मसि सिँगार, काजर सब बोला । मसि क बुंद तिल सोह कपोला
लोना सोइ जहाँ मसि-रेखा । मसि पुतरिन्ह तिन्ह सौं जग देखा
जो मसि घालि नयन दुहुँ लीन्ही । सो मसि फेरि जाइ नहिं कीन्ही
मसि-मुद्रा दुइ कुच उपराहीं । मसि भँवरा जे कँवल भँवाहीं
मसि केसहि, मसि भौंह उरेही । मसि बिनु दसन सोह नहिं देही
सो कस सेत जहाँ मसि नाहीं ? सो कस पिंड न जेहि परछाहीं ?
अस देवपाल राय मसि छत्र धरा सिर फेर ।
चितउर राज बिसरिगा गयउ जो कुंभलनेर' ॥ १४ ॥

सुनि देवपाल जो कुंभलनेरी। पंकज-नैन भौंह-धनु फेरी
'सत्रु मोरे पिउ कर देवपालू। सो कित पूज सिंघ सरि भालू?
दु:ख भरा तन जेत न केसा। तेहि का सँदेस सुनावसि, बेसा?
सोन नदी अस मोर पिउ गरुवा। पाहन होइ परै जौ हरुवा
जेहि ऊपर अस गरुवा पीऊ। सो कस डोलाए डोलै जीऊ'
फेरत नैन चेरि सौ छूटीं। भइ कूटन कुटनी तस कूटीं
नाक-कान काटेन्हि, मसि लाई। मूँड़ मूँड़ि कै गदह चढ़ाई

मुहमद बिधि जेहि गरु गढ़ा का कोई तेहि फूँक।
जेहि के भार जग थिर रहा उड़ै न पवन के झूँक॥ १५॥

काढ़ि कुमुदनिहिं धीरज धारा। गइ गोरा बादल के बारा
चरन,कवल भुइँ जनम न धरे। जात तहाँ लगि छाला परे
निसरि आए छत्री सुनि दोऊ। तस काँपे जस काँप न कोऊ
केस छोरि चरनन्ह-रज झारा। 'कहाँ पावँ पदमावति धारा?'
राखा आनि पाट सोनवानी। बिरह-बियोगिनि बैठी रानी
दोउ ठाढ़ होइ चँवर डोलावहिं। 'माथे छात, रजायसु पावहिं
उलटि बहा गङ्गा कर पानी। सेवक-बार आइ जो रानी

का अस कस्ट कीन्ह तुम्ह जो तुम्ह करत न छाज।
अग्या होइ बेगि सो जीउ तुम्हारे काज' ॥१६॥

कही रोइ पदमावति बाता। नैनन्ह रकत दीख जग राता
'तुम गोरा बादल खँभ दोऊ। जस रन पारथ और न कोऊ
दुख बरखा अब रहै न राखा। मूल पतार, सरग भइ साखा
तेहि दुख लेत बिरिछ बन बाढ़े। सीस उघारे रोवहिं ठाढ़े

पुहुमि पूरि, सायर दुख पाटा। कौड़ी केर बेहरि हिय फाटा
बेहरा हिये खजूर क बिया। बेहर नाहिं मोर पाहन-हिया
पिय जेहि बँदि जोगिनिहोइ धावौं। हौं बँदि लेउँ, पियहि मुकरावौं

सूरुज गहन-गरासा कँवल न बैठै पाट।
महूँ पथ तेहि गवनब कंत गए जेहि बाट' ॥ १७ ॥

गोरा बादल दोउ पसोजे। रोवत रुहिर बूड़ि तन भीजे
'हम राजा सों इहै कोहाँने। तुम न मिलौ, धरिहै तुरकाने
जो मति सुनि हम गए कोहाँई। सो निआन हम्ह माथे आई
जौ लगि जिउ, नहिं भागहिं दोऊ। स्वामि जियत कत जोगिनि होऊ
उए अगस्त हस्ति जब गाजा। नीर घटे घर आइहि राजा
बरषा गए, अगस्त जो दीठिहि। परिहि पलानि तुरंगम पीठिंह
बेधौं राहु, छोड़ावहु सूरू। रहै न दुख कर मूल अँकूरू

सोइ सूर तुम ससहर आनि मिलावौं सोइ।
तस दुख महँ सुख उपजै रैनि माहँ दिन होइ' ॥१८॥

लीन्ह पान बादल औ गोरा। 'केहि लेइ देउँ उपम तुम्ह जोरा?
तुम सावंत, न सरवरि कोऊ। तुम हनुवंत अँगद सम दोऊ
तुम अरजुन औ भीम भुवारा। तुम बल रन दल मंडनहारा
राम लखन तुम दैत-सँघारा। तुमहीं घर बलभद्र भुवारा
तुमहि युधिष्ठिर औ दुरजोधन। तुमहिं नील नल दोउ संबोधन
तुम परदुम्न औ अनिरुध दोऊ। तुम अभिमन्यु बोल सब कोऊ
तुम्ह सरि पूज न बिक्रम साके। तुम हमीर हरिचँद सम आँके

जस अंत संकट पंडवन्ह भएउ भीवँ बँदिछोर।
तस परबस पिउ काढ़हु राखि लेहु भ्रम मोर'॥ १९॥

गोरा बादल बीरा लीन्हा। जस हनुवँत अंगद बर कीन्हा
'कँवल चरन भुइँ धरि दुख पावहु। चढ़ि सिंघासन मँदिर सिधावहु'
सुनतहि सूर कँवल हिय जागा। केसरि-बरन फूल हिय लागा
जनु निसि महँ दिन दीन्ह देखाई। भा उदात, मसि गई बिलाई
बादल केरि जसोवै माया। आइ गहेसि बादल कर पाया
'बादल राय, मोर तुइ बारा। का जानसि कस होइ जुझारा
बादसाह पुहुमी-पति राजा। सनमुख होइ न हमीरहि छाजा
जहाँ दलपती दलि मरहिं तहाँ तोर का काज ?
आजु गवन तोर आवै बैठि मानु सुख राज'॥ २०॥

'मातु न जानसि बालक आदी। हौं बादला सिंह रनबादी
सुनि गज-जूह अधिक जिउ तपा। सिंघ क जाति रहै किमि छपा ?
तौ लगि गाज, न गाज सिँघेला। सौंह साह सौं जुरौं अकेला
को मोहि सौंह होइ मैमंता। फारौं सूँड़, उखारौं दंता
जुरौं स्वामि सँकरे जस ढारा। पेलौं जस दुरजोधन भारा
अंगद कोपि पाँव जस राखा। टेकौं कटक छतीसौ लाखा
हनुवँत सरिस जंघ बर जोरौं। दहौं समुद्र, स्वामि-बँदि छोरौं
सो तुम, मातु जसोवै, मोहिं न जानहु बार।
जहँ राजा बलि बाँधा छोरौं पैठि पतार'॥ २१॥

बादल गवन जूझ कर साजा। तैसहि गवन आइ घर बाजा
का बरनौं गवने कर चारू। चंद्रबदनि रचि कीन्ह सिँगारू

मानि गवन सो घूँघुट काढ़ी। बिनवै आइ बार भई ठाढ़ी
मुख फिराइ मन अपने रीसा। चलत न तिरिया कर मुख दीसा
तब धनि बिहँसि कहा गहि फेंटा। 'नारि जो बिनवै कंत न मेटा
आजु गवन हौं आई, नाहाँ। तुम न, कंत गवनहु रन माहाँ
धनि न नैन भरि देखा पीऊ। पिउ न मिला धनि सैा भरि जीऊ'

पायँन्ह धरा लिलाट धनि 'बिनय सुनहु, हो राय'।
अलक परी फँदवार होइ कैसेहु तजै न पाय॥ २२॥

'छाँड़ि फेंट धनि' बादल कहा। 'पुरुष-गवन धनि फेंट न गहा
जौ तुइ गवन आइ, गजगामी। गवन मोर जहँवाँ मोर स्वामी
जौ लगि राजा छूटि न आवा। भावै बीर, सिँगार न भावा
तिरिया भूमि खड़ग कै चेरी। जीत जो खड़ग होइ तेहि केरी
जेहि घर खड़ग मोंछ तेहि गाढ़ी। जहाँ न खड़ग मोंछ नहिं दाढ़ी
तब मुँह मोंछ, जीउ पर खेलौं। स्वामि-काज इंद्रासन पेलौं
पुरुष बोलि कै टरै न पाछू। दसन गयंद, गीउ नहिं काछू

तुइ अबला, धनि, कुबुधि बुधि जानै काह जुझार।
जेहि पुरुषहि हिय बीर रस भावै तेहि न सिँगार'॥२३॥

एकौ बिनति न मानै नाहाँ। आगि परी चितउर धनि माहाँ
उठा जो धूम नैन करुवाने। लागे परै आँसु झहराने
भींजे हार, चीर, हिय चोली। रही अछूत कंत नहिं खोली
'जौ तुम कंत, जूझ जिउ काँधा। तुम किय साहस, मैं सत बाँधा
रन संग्राम जूझि जिति आवहु। लाज होइ जौ पीठि देखावहु'

मतैं बैठि बादल औ गोरा। सो मत कीज परै नहिं भोरा
जस तुरकन्ह राजा छर साजा। तस हम साजि छोड़ावहिं राजा
पुरुष तहाँ पै करै छर जहँ बर किए न आँट।
जहाँ फूल तहँ फूल है जहाँ काँट तहँ काँट ॥ २४ ॥

सोरह सै चंडोल सँवारे। कुँवर सजोइल कै बैठारे
पदमावति कर सजा बिवानू। बैठ लोहार न जानै भानू
रचि बिवान सो साजि सँवारा। चहुँ दिसि चँवर करहिं सब ढारा
साजि सबै चंडोल चलाए। सुरँग ओहार, मोति बहु लाए
भए सँग गोरा बादल बली। कहत चले पदमावति चली
हीरा रतन पदारथ झूलहिं। देखि बिवान देवता भूलहिं
सोरह सै सँग चलीं सहेली। कँवल न रहा, और को बेली ?
राजहिं चलीं छोड़ावै तहँ रानी होइ ओल।
तीस सहस तुरि खिचीं सँग सोरह सै चंडोल ॥ २५ ॥

राजा बँदि जेहि के सोंपना। गा गोरा तेहि पहँ अगमना
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा। बिनती कीन्ह पायँ गहि गोरा
बिनवौ बादसाह सौं जाई। अब रानी पदमावति आई
बिनती करै आइ हौं दिल्ली। चितउर कै मोहि स्यो है किल्ली
बिनती करै जहाँ है पूँजी। सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी
एक घरी जौ अग्या पावौं। राजहिं सौंपि मँदिर महँ आवौं
तब रखवार गए सुलतानी। देखि अँकोर भए जस पानी
लीन्ह अँकोर हाथ जेहि जीउ दीन्ह तेहि हाथ।
जहाँ चलावै तहँ चलै फेरे फिरै न माथ ॥ २६ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा। सत्त न रहै हाथ जौ बोरा
जहँ अँकोर तहँ नीक न राजू। ठाकुर केर बिनासै काजू
भा जिउ घिउ रखवारन्ह केरा। दरब लोभ चंडोल न हेरा
जाइ साह आगे सिर नावा। 'ए जगसूर, चाँद चलि आवा
जावत हैं सब नखत तराईं। सोरह सै चंडोल सो आईं
चितउर जेति राज कै पूँजी। लेइ सो आइ पदमावति कूँजी
बिनती करै जोरि कर खरी। लेइ सौंपौं राजा एक घरी

इहाँ उहाँ कर स्वामी दुऔ जगत मोहिं आस।
पहिले दरस देखावहु तौ पठवहु कैलास'॥ २७॥

आग्या भई, जाइ एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि बिधि भरी
चलि बिवान राजा पहँ आवा। सँग चंडोल जगत सब छावा
पदमावति के भेस लोहारू। निकसि काटि बँदि कीन्ह जोहारू
उठा कोपि जस छूटा राजा। चढ़ा तुरंग, सिंघ अस गाजा
गोरा बादल खाँड़े काढ़े। निकसि कुँवर चढ़ि चढ़ि भए ठाढ़े
तीख तुरंग गगन सिर लागा। केहुँ जुगुति करि टेकी बागा
जो जिउ ऊपर खड़ग सँभारा। मरनहार सो सहसन्ह मारा

भई पुकार साह सौं, 'ससि औ नखत सो नाहिं।
छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं'॥ २८॥

लेइ राजा चितउर कहँ चले। छूटेउ सिंघ, मिरिग खलभले
चढ़ा साहि, चढ़ि लाग गोहारी। कटक असूझ परी जग कारी
फिरि गोरा बादल सौं कहा। 'गहन छूटि पुनि चाहै गहा
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू। अब इहै गोइ, इहै मैदानू

तुइ अब राजहि लेइ चलु, गोरा। हौं अब उलटि जुरौं भा जोरा
वह चौगान तुरुक कस खेला। होइ खेलार रन जुरौं अकेला
तौ पावौं बादल अस नाऊँ। जौ मैदान गोइ लेइ जाऊँ

आजु खड़ग चौगान गहि करौं सीस रिपु गोइ।
खेलौं सौंह साह सौं हाल जगत महँ होइ' ॥ २९ ॥

तब अगमन होइ गोरा मिला। 'तुइ राजहि लेइ चलु, बादला'!
'पिता मरै जो सँकरे साथा। मीचु न देइ पूत के माथा
मैं अब आउ भरी औ भूँजी। का पछिताव आउ जौ पूजी?
बहुतन्ह मारि मरौं जौ जूझी। तुम जिनि रोएहु तौ मन बूझी'
कुँवर सहस सँग गोरा लीन्हे। और बीर बादल सँग कीन्हे
गोरहि समदि मेघ अस गाजा। चला लिए आगे करि राजा
गोरा उलटि खेत भा ठाढ़ा। पूरुष देखि चाव मन बाढ़ा

आव कटक सुलतानी गगन छपा मसि माँझ।
परति आव जग कारी होति आव दिन साँझ ॥ ३० ॥

फिरि आगे गोरा तब हाँका। 'खलौं, करौं आजु रन-साका
हौं कहिए धौलागिरि गोरा। टरौं न टारे, अंग न मोरा
साहिल जैस गगन उपराहीं। मेघ-घटा मोहि देखि बिलाहीं
सहसौ सीस सेस सम लेखौं। सहसौ नैन इंद्र सम देखौं
चारिउ भुजा चतुरभुज आजू। कंस न रहा, और को साजू
हौं होइ भीम आजु रन गाजा। पाछे घालि डुंगवै राजा
होइ हनुवँत जमकातर ढाहौं। आजु स्वामि साँकरे निबाहौं

होइ नल नील आजु हौं देहुँ समुद महँ मेंड़।
कटक साह कर टेकौं होइ सुमेरु रन बेंड़' ॥ ३१ ॥

ओनई घटा चहूँ दिसि आई। छूटहिं बान मेघ-झरि लाई
डोलै नाहिं देव जस आदी। पहुँचे आइ तुरुक सब बादी
हाथन्ह गहे खड़ग हरद्वानी। चमकहिं सेल बीजु कै पानी
सोझ बान जस आवहिं गाजा। बासुकि डरै सीस जनु बाजा
नेजा उठे डरै मन इंदू। आइ न बाज जानि कै हिंदू
गोरै साथ लीन्ह सब साथी। जस मैमंत सूँड़ बिनु हाथी
सब मिलि पहिलि उठौनी कीन्ही। आवत आइ हाँकि रन दीन्ही
रुंड मुंड अब टूटहिं स्यों बखतर औ कूँड़।
तुरय होहिं बिनु काँधे हस्ति होहिं बिनु सूँड़ ॥ ३२ ॥

भइ बगमेल, सेल घनघोरा। औ गज-पेल, अकेल सो गोरा
सहस कुँवर सहसौ सत बाँधा। भार-पहार जूझ कर काँधा
लगे मरै गोरा के आगे। बाग न मोर घाव मुख लागे
जैस पतंग आगि धँसि लेई। एक मुवै, दूसर जिउ देई
टूटहिं सीस, अधर धर मारै। लोटहिं कंधहिं कंध निरारै
कोई परहिं रुहिर होइ राते। कोई घायल घूमहिं माते
कोइ खुरखेह गए भरि भोगी। भसम चढ़ाइ परे होइ जोगी
घरी एक भारत भा भा असवारन्ह मेल।
जूझि कुँवर सब निबरे गोरा रहा अकेल ॥ ३३ ॥

गोरै देख साथि सब जूझा। आपन काल नियर भा, बूझा
कोपि सिंघ सामुहँ रन मेला। लाखन्ह सौं नहिं मरै अकेला।

लेइ हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा। जैसे पवन बिदारै घटा
जेहि सिर देइ कोपि करवारू। स्यों घोड़े टूटै असवारू
लोटहिं सीस कबंध निनारे। माठ मजीठ जनहुँ रन ढारे
खेलि फाग सेंदुर छिरकावा। चाँचरि खेलि आगि जनु लावा
हस्ती घोड़ धाइ जो धूका। ताहि कीन्ह सो रुहिर भभूका

भइ अग्या सुलतानी 'बेगि करहु एहि हाथ।
रतन जात है आगे लिए पदारथ साथ' ॥३४॥

सबै कटक मिलि गोरहि छेका। गूँजत सिंघ जाइ नहिं टेका
जेहि दिसि उठै सोइ जनु खावा। पलटि सिंघ तेहि ठाँव न आवा
सिंघ जियत नहिं आपु धरावा। मुए पाछ कोई घिसियावा
करै सिंघ मुख-सौंहहिं दीठी। जौ लगि जियै देइ नहिं पीठी
सरजा बीर सिंघ चढ़ि गाजा। आइ सौंह गोरा सौं बाजा
पहुँचा आइ सिंघ असवारू। जहाँ सिंघ गोरा बरियारू
मारेसि साँग पेट महँ धँसी। काढ़ेसि हुमुकि आँति भुइँ खसी

भाँट कहा 'धनि गोरा, तू भा रावन राव।
आँति समेटि बाँधि कै तुरय देत है पाव' ॥३५॥

कहेसि अंत अब भा भुइँ परना। अंत त खसे खेह सिर भरना
कहि कै गरजि सिंघ अस धावा। सरजा सारदूल पहँ आवा
सरजै लीन्ह साँग पर घाऊ। परा खड़ग जनु परा निहाऊ
दूसर खड़ग कंध पर दीन्हा। सरजै ओहि ओड़न पर लीन्हा
तीसर खड़ग कूँड़ पर लावा। काँध गुरुज हुत, घाव न आवा

तब सरजा कोपा बरिबंडा। जनहु सदूर केर भुजदंडा॥
कोपि गरजि मारेसि तस बाजा। जानहु परी टूटि सिर गाजा॥
गोरा परा खेत महँ सुर पहुँचावा पान।
बादल लेइगा राजा लेइ चितउर नियरान॥३६॥

पदमावति मन रही जो झूरी। सुनत सरोवर-हिय गा पूरी॥
अद्रा महि-हुलास जिमि होई। सुख सोहाग आदर भा सोई॥
राजा जहाँ सूर परगासा। पदमावति मुख-कँवल बिगासा॥
कँवल पायँ सूरुज के परा। सूरुज कँवल आनि सिर धरा॥
पूजा कौनि देउँ तुम्ह राजा? सबै तुम्हार, आव मोहिं लाजा॥
तन मन जोबन आरति करऊँ। जीव काढ़ि नेवछावरि धरऊँ॥
पंथ पूरि कै दिस्टि बिछावौं। तुम पग धरहु, सीस मैं लावौं॥
जौ सूरज सिर ऊपर तौ रे कँवल सिर छात।
नाहिं त भरे सरोबर सूखे पुरइन-पात'॥३७॥

परसि पायँ राजा के रानी। पुनि आरति बादल कहँ आनी॥
पूजे बादल के भुजदंडा। तुरय के पाँव दाब कर-खंडा॥
'यह गजगवन गरब जो मोरा। तुम्ह राखा, बादल औ गोरा॥
सेंदुर-तिलक जो आँकुस अहा। तुम्ह राखा माथे तौ रहा॥
काछ काछि तुम जिउ पर खेला। तुम्ह जिव आनि मँजूषा मेला॥
राखा छात चवँर औ धारा। राखा छुद्रघंट-झनकारा॥
तुम हनुवँत होइ धुजा पईठे। तब चितउर पिय आइ बईठे'॥
पुनि गजमत्त चढ़ावा नेत बिछाई खाट।
बाजत गाजत राजा आइ बैठ सुख पाट॥३८॥

सुनि देवपाल राय कर चालू। राजहि कठिन परा हिय सालू
'दादुर कतहुँ कँवल कहँ पेखा। गादुर मुख न सूर कर देखा
अपने रँग जस नाच मयूरू। तेहि सरि साध करै तमचूरू
जौ लगि आइ तुरुक गढ़ बाजा। तौ लगि धरि आनौं तब राजा'
नींद न लीन्हि, रैनि सब जागा। होत बिहान जाइ गढ़ लागा
कुंभलनेर अगम गढ़ बाँका। बिषम पंथ चढ़ि जाइ न झाँका
राजहि तहाँ गएउ लेइ कालू। होइ सामुहँ रोपा देवपालू
 दुवौ अनी सनमुख भईं लोहा भएउ असूझ।
 सत्रु जूझि तब नेवरै एक दुवौ महँ जूझ ॥ ३९ ॥
जौ देवपाल राव रन गाजा। 'मोहि तोहिं जूझ एकौझा, राजा!'
मेलेसि साँल आइ बिष-भरी। मेटि न जाइ काल कै घरी
आइ नाभि पर साँग बईठी। नाभि बेधि निकसी सो पीठी
चला मारि तब राजै मारा। टूट कंध, धड़ भएउ निनारा
सीस काटि कै बैरी बाँधा। पावा दावँ बैर जस साधा
जियत फिरा आएउ बल-भरा। माँझ बाट होइ लोहै धरा
कारी घाव जाइ नहिं डोला। रही जीभ जम गही, को बोला?
 सुधि-बुधि तौ सब बिसरी भार परा मँझबाट।
 हस्ति घोर को का कर घर आनी गइ खाट ॥ ४० ॥
जौ लहि साँस पेट महँ अही। तौ लहि दसा जीउ कै रही
काल आइ देखराई साँटी। उठि जिउ चला छोड़ि कै माटी
का कर लोग, कुटुँब, घर-बारू। का कर अरथ दरब संसारू?
ओही घरी सब भएउ परावा। आपन सोइ जो परसा, खावा

अहे जे हितू साथ के नेगी। सबै लाग काढ़ै तेहि बेगी
हाथ झारि जस चलै जुआरी। तजा राज, होइ चला भिखारी
जब हुत जीउ, रतन सब कहा। भा बिनु जीउ, न कौड़ी लहा

गढ़ सौंपा बादल कहँ गए टिकठि बसि देव।
छोड़ी राम अजोध्या; जो भावै सो लेव॥ ४१॥

पदमावति पुनि पहिरि पटोरी। चली साथ पिउ के होइ जोगी
सूरुज छपा, रैनि होइ गई। पूनो-ससि, सो अमावस भई
छोरे केस, मोति-लर छूटीं। जानहुँ रैनि नखत सब टूटीं
सेंदुर परा जो सीस उधारा। आगि लागि चह जग अँधियारा
'यही दिवस हौं चाहति, नाहा। चलौं साथ, पिउ, देइ गलबाहौं
सारस पंखि न जियै निनारे। हौं तुम्ह बिनु का जिऔं, पियारे!
नेवछावरि कै तन छहरावौं। छार होउँ सँग, बहुरि न आवौं

दीपक प्रीति पतंग जेउँ जनम निबाह करेउँ।
नेवछावरि चहुँ पास होइ कंठ लागि जिउ देउँ'॥ ४२॥

नागमती पदमावति रानी। दुवा महा सत सती बखानी
दुवौ सवति चढ़ि खाट बईठीं। औ सिवलोक परा तिन्ह दीठी
बैठौ कोइ राज औ पाटा। अंत सबै बैठै पुनि खाटा
चंदन अगर काठ सर साजा। औ गति देइ चले लेइ राजा
बाजन बाजहिं होइ अगूता। दुवौ कंत लेइ चाहहिं सूता
एक जो बाजा भएउ बियाहू। अब दुसरे होइ ओर-निबाहू
जियत जो जरै कंत के आसा। मुएँ रहसि बैठै एक पासा

आजु सूर दिन अथवा आजु रैनि ससि बूड़।
आजु नाचि जिउ दीजिय आजु आगि हम्ह जूड़॥ ४३॥

सर रचि दान-पुन्नि बहु कीन्हा। सात बार फिरि भाँवरि लीन्हा
'यह जग काह जो अछहि न आथी। हम तुम, नाह, दुहूँ जग साथी'
लेइ सर ऊपर खाट बिछाई। पौढ़ीं दुवौ कंत गर लाई
वै सहगवन भईं जब जाई। बादसाह गढ़ छेंका आई
तौ लगि सो अवसर होइ बीता। भए अलोप राम औ सीता
आइ साह जौ सुना अखारा। होइगा राति दिवस उजियारा
छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्हि उड़ाइ पिरथिमी झूठी
जौहर भईं सब इस्तिरी पुरुष भए संग्राम।
बादसाह गढ़ चूरा चितउर भा इसलाम॥ ४४॥

मुहमद कवि यह जोरि सुनावा। सुना सो पीर प्रेम कर पावा
जोरी लाइ रकत कै लेई। गाढ़ि प्रीति नयनन्ह जल भेई
औ मैं जानि गीत अस कीन्हा। मकु यह रहै जगत महँ चीन्हा
कहाँ सो रतनसेन अब राजा? कहाँ सुआ अस बुधि उपराजा?
कहाँ अलाउदीन सुलतानू? कहँ राघव जेइ कीन्ह बखानू?
कहँ सुरूप पदमावति रानी? कोइ न रहा, जग रही कहानी
धनि सोइ जस कीरति जासू? फूल मरै, पै मरै न बासू
केइ न जगत जस बेंचा केइ न लीन्ह जस मोल?
जो यह पढ़ै कहानी हम्ह सँवरै दुइ बोल॥ ४५॥

टिप्पणी

(१) पदमावती खंड

दोहा १ जोति परकासू = मुसलमानी धर्म में यह माना जाता है कि ईश्वर ने अपनी ज्योति से सबसे पहले मुहम्मद को उत्पन्न किया। तेइ (तेन) = उसी ने। खेहा, खेह = धूल। उरेहा (उल्लेख) = चित्रकारी। धरती = पृथ्वी। दिनअर (दिनकर) = सूर्य्य। तराइन-पाँती = तारागण की पंक्ति। सीउ = शीत। बीजु (विद्युत्) = बिजली। दूसर छाज न काहि = दूसरे किसी को जो शोभा नहीं देता।

दो० २ चाँटा = च्यूँटी। भुगुति = भोजन। ताकर...... उपराहीं = उसकी दृष्टि जो सबके ऊपर रहती है। उपाई (उत्पद्) = उत्पन्न की, उपजाई। जियना = जीवन। आस हर (आशधर) = आशा रखनेवाले।

दो० ३ अछत (अछत्र) = छत्र रहित। छवा = छाना, छत्र धारण कराना। सरवरि = बराबरी, समता। चाँटहि = चाँटा को, च्यूँटी को, 'हि' अवधि की विभक्ति है। सारा = किया। अहथिर = स्थिर। भाँजै = नष्ट करे।

दो० ४ अबरन (अवर्ण) = वर्ण रहित। बरता (विरक्त) = अलग। सरब-बिआपी = सर्वव्यापी। जना = उत्पन्न किया। सिरजना = रचना, सृष्टि। हुत = था। बाउर = पागल। अनेग = अनेक।

दो० ५ निरमरा = निर्मल। पूनोकरा = पूर्णिमा के समान कलावाला, ज्योतिमान। सिहिटि = सृष्टि। लेसि = जला-

कर। दुसरे......लिखे = मुसलमानों के कलमा-शरीफ में ईश्वर के नाम के पश्चात् मुहम्मद का नाम आता है। (देखो—'लाइलाह इल लिल्लाह मुहम्मद रसूलिल्लाह') पाढ़त = पाठ, शिक्षा, कलमा जो कुरान में लिखा है। बसीठ = दूत, पैगंबर, ईश्वर का दूत। विधि = ईश्वर। लेख और जोख = लेखा जोखा, हिसाब-किताब। बिनउब = विनय करेगा। मोख (मोक्ष) = मुक्ति।

दो० ६ छात औ पाटा = छत्र और पाट (सिंहासन)। खाँड़े सूर = तलवार चलाने में वीर। वई = उसने। दुनी = दुनिया। नई = झुकी। करि = करके, द्वारा। इसकंदर जुलकरन। सिकंदर जुलकरनैना जुलकरन) = एक पदवी जो सिकंदर को दी गई थी। सुलेमाँ = सुलेमान, एक यहूदी राजा; कहते हैं कि इसके पास एक अँगूठी थी जिसके कारण ज्यों ज्यों यह दान देता था त्यों त्यों इसका धन बढ़ता जाता था; यह राजा बड़ा दानी था। मुहताज = मुख देखनेवाला, मुखापेक्षी, याचक।

दो० ७ असरफ = सैयद अशरफ जहाँगीर चिश्ती। दीया = दीपक। हीया = हृदय। बोहित = नाव, जहाज, बेड़ा। कै = करके। बूड़त कै = डूबते समय। अहा = था। कंधा(कर्णधार) = नाविक, रास्ता दिखानेवाला, गुरु। दस्तगीर = बाँह पकड़नेवाला, रक्षा करनेवाला। अवगाह = अगाध। हाथी = हाथ। निहकलंक = निष्कलंक। मखदूम = मालिक। बाँद = बंदा, गुलाम, दास।

दो० ८ देइ कहँ = देने के लिये, दिखाने के लिये। मेरु = पर्वत। खिखिंद = किंकिंध पर्वत। उपराहीं = ऊपर, बढ़कर। ताईं = लिये। मुरसिद = सीधा मार्ग बतलानेवाला। पीर = गुरु। खेवक = खेनेवाला।

दो० ९ मेहदी = सैयद मुहीउद्दीन, जायसी के मंत्र-गुरु। उताइल = वेग से। खेवा = नाव का बोझ। रोसन = उज्ज्वल,

प्रज्वलित, विख्यात। सुरखुरू = सुर्खरू, तेजमान, जिसका मुख तेज-युक्त हो। लखाए = दिखाया, लक्षित कराया। मेरई = मिला लिया। हौं (अहं) = मैं। केर = का। हुत = द्वारा (प्रा० हिंतो)।

दो० १० एक नयन = कहते हैं कि जायसी बाईं आँख के अंधे थे। दे० "मोहि का हँससि कि कोहरहि।" कवि = कविता। बिधि औतारा = ईश्वर ने पैदा किया। सूक = शुक्र ग्रह। नखतन्ह = नक्षत्रों। माहाँ = में। अंबहि = आम्र में। डाभ = मंजरी, बौर। लाग = तक। घरी = घरिया, स्वर्ण गलाने का पात्र। जोहहिं = देखें, प्रतीक्षा करें।

दो० ११ मिताई = मित्रता। सरि = बराबरी। उभै = उठती है। बरियारू = बलवान्। खेत-रन = रणक्षेत्र। जुझारू (युद्ध) = योद्धा। चतुरदसा = चतुर्दश, चौदह। बिरिछ = वृक्ष। बेदु = बेंत। कित्त (सं० कुत्र) = क्यों, कहाँ।

दो० १२ पछलागा = पीछे लगनेवाला, अनुयायी। डगा = डुग्गी बजाने की लकड़ी। भँडार = भंडार (सं० भाण्डागार)। तारू = तालू। कूँजी = कुंजी। घाया = घाव, जखम। तपा = तपस्वी। छपा = छिपा।

दो० १३ सन नव सै सैंतालिस = सन् ९४७ हिजरी अर्थात् सं० १५९७। आछै (आस्ते) = है। नियर = समीप। कबि बिआस......आछै पास = कवि व्यास के समान हो और काव्य रस से पूर्ण हो पर यह आवश्यक नहीं है कि वह उस रस को पाकर उसका संचार कर सके; क्योंकि ऐसा देखने में आता है कि संसार में कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं जो दूर रहने पर निकट ही होती हैं जैसे गुड़ और च्यूँटा, भ्रमर और कमल और कुछ ऐसी भी हैं जो निकट रहने पर भी दूर हैं जैसे फूल और काँटा, दादुर और

कमल -गंध। इसलिये यह आवश्यकता नहीं है कि मैं बड़ा कवि होकर अपनी कथा को रसपूर्ण कर सकूँ, परंतु जो कुछ कथा है उसे कहता हूँ।

दो० १४ चाहि = बढ़कर (मिलाओ—कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि।—तुलसी)। नावै = नवावै। चक्कवै = चक्रवर्ती। यहाँ चक्कवै क्रिया है; अर्थात् चक्रवर्ती के समान राज करता है।

दो० १५ अमराउ = अमराइ, आम्र का बाग। हरियर = हरा, नीला। पुराने कवि हरे, नीले, काले में भेद नहीं मानते थे। पथिक...धूपा = अज्ञात (परमात्मा) की ओर संकेत है। पारौं = सकौं। पारना = सकना (मिला० बँगला का 'पारबे')।

दो० १६ चुहचुही = पक्षि-विशेष, फूलसुँघनी। सारा = सारिका, मैना। परेवा = कबूतर। करबरहीं = कलबल करते हैं। गडुरी = पक्षि-विशेष। भिंगराज = एक पक्षी। महरि = पक्षि-विशेष। हारा = हाल अथवा लाचारी, दीनता। कुराहर = कोलाहल। भाखा = भाषा, बोली।

दो० १७ पैग = पग। बावरी (वापी) = बावली। पाँवरी = सीढ़ी। भईं = घूमी हैं। गरेरी = चक्करदार, घुमौवा। राता = लाल। पखुरिन = पँखड़ी। पाल – बाँध।

दो० १८ अपूर (आपूर्ण) = भरपूर। कैलास = स्वर्ग। पोते = पुता हुआ, लीपा हुआ। मेद = एक सुगंधित वस्तु, कस्तूरी। गौरा = गोरोचन। ग्याता = ज्ञाता, ज्ञानी। संसकिरित = संस्कृत।

दो० १९ तरहि करिन्ह = नीचे हाथियों (दिग्गजों)। खोह = खाईं, खंदक। सपत-पतारहिं = सप्त पाताल। अरे = जटित, जड़े। फेर = घेरा, चक्कर।

दो० २० बाजि-रथ = रथ और घोड़े। चूरू = चूर। पाजी (पदातिक) = पैदल। कोतवार = कोतवाल। चपत = दबाते हुए, रखते हुए। काढ़े = खुदे हुए, बने हुए। नाहर = सिंह। गुंजरि = गरजकर। ताईं = तक। केवार = केवाड़। बसेरा = डेरा।

दो० २१ घरियार = घड़ियाल, घंटा। घरियारी = घंटा बजानेवाला। डाँड़ = डंडा। डाँड़ा = डाँटा। भाँड़ा (सं०भाण्ड) = बर्तन, पात्र, पुतला। बटाऊ। (बटुक) = बटोही, मुसाफिर। गजर = (पहर पहर पर) घंटा बजने का शब्द। बजर = वज्र। रहँट = पानी भरने का एक यन्त्र।

दो० २२ झारि = केवल। असुपति = अश्वपति। परस-पखान (स्पर्शपाषाण) = पारस पत्थर। चौपारी = चौपाल, बैठक। सारी = चौपड़। कीरति = कीर्ति।

दो० २३ बारा = द्वार। पहारा = पहाड़। धूम = धूमिल रंग के। रज-बार = राजद्वार। समुद = समुद्र। रिस लोह चबाहों = क्रोध से लोहे की लगाम चबाते हैं। तुखार = तुषार देश के अश्व। रथवाह = रथ के वहन करनेवाले, घोड़े।

दो० २४ दर निसान = दल (सेना) का डंका। माँझ = मध्य, बीच में। तवै = तपै। बिगसइ (विकसित) = विकसित होता है।

दो० २५ उहै = वही। अछरीन्ह = अप्सराएँ। पाट-परधानी = पटरानी। जेती = जितनी। बारह-बानी (द्वादशवर्णी) = सूर्य्य के समान ज्योतिवाली। बतीसो लच्छनी = बत्तीसों लक्षण वाली। स्त्रियों के ३२ लक्षण ये हैं—

(१) नख—रक्तवर्ण। (२) पादपृष्ठ—कछुए की पीठ जैसा। (३) गुल्फ—गोल। (४) पैर की अँगुली—अविरल। (५) पैर का तलवा—लाल, शुभ चिह्नयुक्त।

(६) जंघा—गोल, चढ़ाव-उतारवाला। (७) जानु—बराबर, सुडौल। (८) ऊरु—अविरल। (९) भग—पीपर-पत्र सी। (१०) भग का मध्य भाग—गुप्त। (११) पेड़ू—कूर्मपृष्ठवत् (१२) नितंब—मांसल, मांस-युक्त। (१३) नाभि—गभीर। (१४) नाभिका ऊपरी भाग—त्रिवली-युक्त। (१५) स्तन—सम, गोल, कठोर। (१६) पेट—मृदु, लोभ-रहित। (१७) ग्रीवा—कंबु-वत्। (१८) ओष्ठ—लाल। (१९) दाँत—कुंदवत्। (२०) वाणी—मधुर। (२१) नासिका—सीधी, ऊँची। (२२) नेत्र—कंजवत्। (२३) भौंह—धनुषवत्। (२४) ललाट—अर्द्धचंद्रवत्। (२५) कान—कोमल। (२६) केश—काले, सटकारे, सुकुमार। (२७) शीश—सुडौल। (२८) कलाई—गोल, कोमल। (२९) हथेली—रक्तवर्ण, शुभ लक्षणयुक्त। (३०) बाहु—सुडौल। (३१) मणिबंध—नीचे को दबा हुआ। (३२) हाथ की अँगुली—पतली, सुडौल।

दो० २६ सलोनी = सुंदर। बरा = प्रदीप्त हुआ, जला। घट = हृदय। ओदर = उर, गर्भ। अवधान = गर्भ। उपना = उत्पन्न हुआ।

दो० २७ हुति (हुंतो) = से। घाटि = कम। छीन = क्षीण। निरमई (निर्मितः) = निर्माण किया।

दो० २८ छठि राति = छठी की रात। बिहानि = समाप्त हुई। बिहान (विभात) = प्रभात, सबेरा। अरथाए = अर्थ किया। बैसारी = बैठाया। ओनाहीं = आवें, झुकें। बरोक = बरेखी, बररक्षा, विवाह।

दो० २९ सहयोग मयानी = विवाह के योग्य। कोईं = कुमुदिनी। सोहागहिं = सोहागा में। सासतर = शास्त्र।

दो० ३० उनंत = ओनंत, यौवनभार से झुकी। बेधा = विद्ध हुआ, फैला। दूइज = द्वितीया का चंद्रमा। कनक-जँभीरा = सोनहला नीबू।

दो० ३१ तइँ = तं, से। मोहिं = मेरे लिये। आँखि लगावहिं = आँख लगाना किसी की ओर देखना, किसी पर अनुग्रह करना। अनंगा = मदन। अग्या = आज्ञा। निवारि = रोककर।

दो० ३२ ऊआ = उगा। मँजारी (माजारी) = बिल्ली। सुजान = सज्ञान, बुद्धिमान्। दारिउँ = दाड़िम, अनार। दाख = द्राक्षा, अंगूर।

दो० ३३ उतर = उत्तर। उबारा = उद्धार। माया = प्रेम। परेवा = पक्षी। धोख न लाग = धोखा नहीं लगा, चूक नहीं हुई। आखौं = चाहौं। हिये घालि = हृदय में डालकर। केइ = किसने। खुरुक = खुटका। करिया = कर्णधार, केवट।

दो० ३४ सारी = साड़ी, वस्त्र। बाद मेलि = बाद लगाकर, बाजी लगाकर। हूँ‌ढ़ै = ढूँढ़ने।

दो० ३५ परसे = स्पर्श किया। ओप = कांति। भा = हुआ।

दो० ३६ ताकि = देखकर। बन-ढाँखा = पलाश का वन। भुकदाता = भोजन देनेवाला। तुइँ = तूने। सोग = शोक। बिछोह = वियोग। बिसरन = विस्मरण। सुमिरना = स्मरण।

दो० ३७ पहँ = पास। छूँछा = खाली। गहनै गही = ग्रहण लगा। पाल = बाँध। आँसु = अश्रु। उए = उगे। चिहुर (चिकुर) = बाल, केश। सँकेत = सँकरा, संकीर्ण। सुअटा = शुक, सुआ। बासु = स्थल। दहुँ = (संदेहवाचक अव्यय) न जाने।

दो० ३८ पँखी = पक्षी (शुक)। लहि = लौं, तक। बंदि = कैद। उड़ान-फर = उड़ने का फल। केतन =

कितनों को। यह धरती......ढोला = इस धरती ने ऐसे कितनों को निगल लिया, इसका पेट इतना गहरा है कि एक बार जिसे निगल लिया उसे फिर न छोड़ा। गाढ़ = कठिन, तंग।

दो० ३९ कल = चैन। बियाध = व्याध। टाटी = टट्टी, आड़। डेली = डलिया, टोकरी। खरभरहीं = खड़बड़ करते हैं। चारा = दाना, भोजन। चिरिहार = चिड़ीमार। लासा = गोंद, जिससे पक्षी फँसाते हैं। बिख = विष। बाझा = विद्ध हुआ, फँसा।

दो० ४० जिउलेवा = जीव लेनेवाला। तिसना (तृष्णा) = लोभ, लालच। खाधू = खाद्य। अपाना = अपना। मस्ट = मौन।

---

(२) रतनसेन खंड

दो० १ बारा = बालक, पुत्र। ओहि लागि = उसके लिये। पारखी = परखनेवाले, जौहरी।

दो० २ बैपारी = व्यापारी। रिन = ऋण। मकु = शायद। बेसाहना (व्यवसाय) = खरीद-फरोख्त। साँठि = पूजी, धन।

दो० ३ भूरै = निष्फल, व्यर्थ। बनिज = वाणिज्य। कुबानी (कु+ वाणिज्य) = बुरा व्यापार। मूर = मूलधन, पूँजी।

दो० ४ मँजूसा = मंजूषा, पेटारी। परावा = पराया। पर-मँस = पराये का मांस। खाधू = खानेवाले।

दो० ५ सब साजा = चिता पर शव सजाकर रखा अर्थात् मृतक-कर्म किया। काँठा = कंठा, गले में लाल लकीर। डहन = डैने, पंख।

दो० ६ रजाइ = राजाज्ञा। निरारा = अलग। जोहारा = प्रणाम किया, आदर किया। मेरवौं = मिलाऊँ।

दो० ७ चीन्हा = पहचाना। परोवा = पिरोया हुआ, गुथा हुआ। अगाहु = अगाध, गंभीर।

दो० ८ नाहाँ = नाथ को। ओपनवारी = चमकनेवाली, सुंदर। बानि कसि = कसौटी पर कसकर। आन = कसम, शपथ।

दो० ९ आगरि = बढ़-चढ़कर। बिलोनि = लावण्य-रहित। लोनी = सुंदर। पूजै = बराबरी कर सके। पुहुप = पुष्प सोंधे = सुगंध।

दो० १० अँकूरू = अंकुर। मुर्गा कहीं पदमावती-रूपी प्रभात की सूचना न दे दे कि राजा उठ, दिन की ओर देख! पाला = पाला हुआ, पोसा हुआ। तमचूरू (ताम्रचूड़) = मुर्गा। साखी = साक्षी, गवाह। सूर और कँवल से क्रमशः रत्नसेन और पदमावती की ओर संकेत है। नाग (सर्प) का शत्रु मोर होता है अतएव नागमती शुक को अपने लिये मयूर सदृश बतलाती है।

दो० ११ बिसरामी = विश्राम देनेवाला, मनोरंजन करनेवाला। खंडित-बैरागू = वैराग्य में चूक गया इसी से शुक का जन्म पाया है। तुरय......जाए = घोड़े का रोग बंदर के सिर मढ़ना। कहते हैं कि यदि अस्तबल में बंदर रखा जाय तो घोड़ों का रोग बंदर के सिर जाता है और वे नीरोग रहते हैं। सेइ = वेही।

दो० १२ कूट = विष। कूटे = भरा हुआ। हतियार = हत्यारा।

दो० १३ विक्रम पछिताना = कथा है कि राजा विक्रम के यहाँ एक शुक था, उसने उन्हें एक दिन एक फल दिया जिसके खाने से वृद्ध युवा हो जाता था। राजा ने वह फल रखवा दिया। किसी साँप ने आकर उसमें अपना मुँह लगा दिया। दूसरे दिन राजा ने वह फल खाने के लिये मँगवाया। मंत्रियों ने सलाह दी कि बिना परीक्षा किए इसे खाना ठीक नहीं। फल का

एक टुकड़ा एक जानवर को खिलाया गया। वह मर गया। राजा ने क्रुद्ध होकर तोते को मरवा डाला। पीछे वह फल फेंक दिया गया। कुछ दिन बाद उसके बीज से एक पेड़ तैयार हुआ और उसमें फल लगने लगा। एक दिन एक बूढ़े आदमी ने मरने की इच्छा से उसके फल को विषैला समझकर खा लिया। मरने के बदले वह युवा हो गया। राजा को यह बात मालूम हुई। वह अपनी गलती से तोते के मारे जाने पर पछताने लगा। कहते हैं कि इस तोते का नाम भी 'हीरामन' था। मती = नागमती। गहन = ग्रहण। दोहाग (दुर्भाग्य) = अभाग्य। परहेली = अवहेलना की गई। नाहँ = नाथ।

दो० १४ रिस (इर्ष्या) = क्रोध। मरम = मर्म, भेद। मैं जानेउँ......खोज = परमात्मा की ओर संकेत है।

दो० १५ सेँवर (शाल्मली) = सेमल। भूआ = भूई। सँवाता = समूह। दुआदस (द्वादश) = बारह। कंठा फूट = जब तोते के गले के चारों ओर रक्तवर्ण की चूड़ी सी लकीर पड़ जाती है तब लोग कहते हैं कि वे अच्छी तरह से बोलते हैं। गला खुलना। सवँरौं = स्मरण करूँ। हरियर = हरा।

दो० १६ भा......कर्ली = अभी ब्याही है कि कुआँरी।

दो० १७ राता (रक्त) = लाल, प्रेम-पूर्ण। पेम = प्रेम। फाँद = फंदा। मेरवै = मिलावे।

दो० १८ बिसहर = विषधर। लुरे = झुके हुए। अरधानी (आघ्राण) = सुवास, सुगंध। कोंवर = कोमल। लहरन्हि = लहरों से। भुऐँग = भुजंग, सर्प। सँकरैं (शृंखला) = सीकर, जंजीर। फँदवार = फंदवाले। गिउ (ग्रीव) = गला। कुरी = कुल। अष्ट = कुल नाग ये हैं—वासुकि, तक्षक, कुलक, कर्कोटक, पद्म, शंखचूड़, महापद्म और धनंजय।

दो० १९ परगसी = परगटी, प्रकट हुई। रुहिर = रुधिर। करवत (करपत्र) = आरा। बेनी = त्रिवेणी। पूरि = पिरोकर। सोती = सोना, धार। करवत तपा लेहिं = योगी लोग तीर्थ स्थानों पर आरे से अपने को चिरवा डालते थे। काशी में भी लोग इस तरह 'करवट' लेते थे। यहाँ पर "काशी करवट" नाम का एक स्थान अब तक है। गाँग = गंगा।

दो० २० जोती = ज्योति। ओती = उतनी। गहासा = ग्रास किया। धुव = ध्रुव तारा। अत्र = अस्त्र। चक = चक्र, आँख। हए = मारा। "खरग, धनुक, चक, बान दुइ" से क्रमशः नासिका, भौंह, आँख और दोनों नेत्रों के कटाक्षों की ओर संकेत समझना चाहिए।

दो० २१ सहुँ = आगे, सामने। उलथहिं = उछलते हैं। भवाँ = भ्रमा। अपसवाँ (अपसर्पण) = भागना। अडार = तिरछे। पल = पलक।

दो० २२ अनी = सेना। सूक = शुक्र तारा। बेसरि = (१) बिना समता का। (२) एक आभूषण। हिरकाई = लगा। बिंब = बिंबाफल। रम = रमा है।

दो० २३ अबहिं......चाखे = अभी अविवाहित है। चौक = आगे के चार (दो ऊपर के, दो नीचे के) दाँत। रँग स्याम = मिस्सी लगाने के कारण। बतीसी = दाँत। निरमई = निरमित हुई। छरकि = छटक। दरकि = तड़ककर।

दो० २५ कौंधा = बिजली। लौकहिं = दिखाई पड़ते हैं। कंबु = शंख। रीसी = ईर्ष्या करनेवाले, प्रतिद्वंद्वी; अथवा कै रीसी (प्रा० केरिसी) = कैसी, समान। कुंदै फेरि = खराद पर

चढ़ाकर। पुछार (पुच्छ) = पूँछवाली, मोरनी। सकारे = सबेरे। कंठसिरी (कंठश्री) = एक प्रकार का गले का आभूषण।

दो० २६ भाई (भ्रमित) = फेरी हुई, घुमाई हुई। गाभ (गर्भ) = नरम कल्ला। लारू = लड्डू। कचोर = कचोल, कटोरी। जँभीर = एक प्रकार का नीबू। बारी—कन्या, फुलवारी, बाटिका। मरोरत = मलते हुए।

दो० २७ कुहुँकुहुँ = कुमकुम, रोली। माती = मतवाली। काछे = बनी ठनी, विभूषित। कारी = काली। ओहार = ओढ़नी।

दो० २८ पहुमि = पृथ्वी। बसा = भिड़, बर्रो। झीनी (क्षीण) = पतली। परिहँस = ईर्ष्या, डाह! भँवै = घूमता है। तीवइ = स्त्री की। समुद लहरि चीरू = लहरिया कपड़ा, एक प्रकार का वस्त्र।

दो० २९ बिसँभारा (बि + सँभारा = बेसुध। खिनहिं = क्षण में। दसवँ अवस्था = मृत्यु। तरासहिं = त्रास देते हैं।

दो०—३० जावत = बहुत से, जितने। गारुड़ी = सर्प का विष उतारनेवाले। बाउर (वातुल) = पागल। अहुठ (अध्युष्ठ) = साढ़े तीन।

दो० ३१ सेंति = से। गोपीता = गोपियाँ। जेईं = भोजन किया। पाईं = पकाई हुई। कोईं = कुमुदिनी। साधन्ह = साध से, इच्छा से। कलप्प = काट डाले।

दो० ३२ हेराइ = खो जाय। कंथा = साधुओं की गुदड़ी। दस पंथा = दस मार्ग अर्थात् दस इंद्रियाँ। लेइ सुलगाइ = प्रज्वलित कर ले। फनिग = फतिंगा, पतंग। भृंग = एक प्रकार का कीड़ा जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि वह और फतिंगों को अपने रूप का कर लेता है। केत = घर।

दो० ३३ किँगरी = एक बाजा, छोटी सारंगी। लटा = शिथिल। उदपान = कमंडलु। बघछाला = व्याघ्रचर्म।

दो० ३४ गनक (गणक) = ज्योतिषी। सरेखा = चतुर, सज्ञान। सैंतै = सँभालती या सहेजती है।

दो० ३५ साँटिया = डौंडी पीटनेवाला। कटकाई = सेना की तैयारी। माया = माता। लच्छि (लक्ष्मी) = स्त्री। दर = दल। परिगह (परिग्रह) = नौकर-चाकर।

दो० ३६ निआन = निदान, अंत में। पोखि (पोषण) = पालकर। पिरीता = प्यारे। अहिबात (सं० अविधवात्व) = सोहाग, सौभाग्य।

दो० ३७ मतै = राय में। लेखा = समान। करहिं खरिहाना = ढेर लगाती हैं। गिउ-अभरन = ग्रीवाभरण, गले का आभूषण। नाच = नाट्य-प्रदर्शन।

दो० ३८ पूरी = बजाकर। मेलिकै = लगाकर। गाँव = ग्राम। मढ़ = मठ। सगुनियै = सगुन विचारनेवाले। माछ = मछली। रूप = रूपा, चाँदी। टाँका = बर्तन, पात्र। गोहराई (गोहरण) = पुकारा।

दो० ३९ मिलान = टिकान, ठहरने का स्थान। पौरी = पाँवरी खड़ाऊँ। अँकरौरी = अँकरौड़, कंकड़ी। दंडाकरन = दंडाकारण्य। बीझ (विजन) = निजन।

दो० ४० मासेक = एक मास, एक महीना। गजपती = कलिंग के राजाओं की प्राचीन उपाधि जो अब तक विजयानगरम् (ईजानगर) के राजाओं के नाग के साथ देख जाती है। बार = द्वार।

दो० ४१ सीस पर माँगा = आपकी आज्ञा सिर पर है। खाँगा = कमी। सकती-सीऊ = शक्ति की सीमा, अनंत

शक्तिवाला। सत बेरा=सौ बार। फिरै नहिँ फेरा=लौटाए नहीं लौटता। कोड़िया=पक्षि-विशेष, कौडिला (King fisher)।

दो० ४२ दत्त=दान। सँती (प्रा० सुंतो)=से। भरम=भ्रम। पेले=तेजी से चले। ठाटी=समूह। उपराहीं=बढ़कर, अधिक वेग से। सरग=आकाश। घाल=घलुआ। न घाल गनै=पसंगे बराबर भी नहीं गिनता।

दो० ४३ सायर=सागर, समुद्र। कुरी=समूह। काँधा=कंधे पर। बेहर=अलग।

दो० ४४ साधा=सहता है। झार (ज्वाल)=लपट। लेइ=से। लहि=तक। गै औसान=होश उड़ गए। लीलै=निगले।

दो० ४५ नाहिँ निबाहू=निवाह नहीं हो सकता, जा नहीं सकते। साँकर=कठिन। असि=ऐसी। निनारा=निराली (न्यारी)। कान=कर्ण, पतवार।

दो० ४६ तुखारू=तुखारी घोड़ा जिसकी चाल बड़ी तीव्र होती है। गरियारू=सुस्त, आलसी। हरुआ=हल्का। झोला=झकोरा। अगमन=आगे। खेवा=नाव, बेड़ा।

दो० ४७ जुड़ान–शीतल हुआ।

दो० ४८ रामा=स्त्री। सिरी-पंचमी=श्रीपंचमी, वसंत-पंचमी।

---

(३) प्रेम खंड

दो० १ सयांग=प्रभाव। केवाँच (कपिकच्छु)=एक प्रकार की बेल जिसकी फलियों के रोओं के छू जाने से शरीर में खुजली होती है। ससि-बाहन=मृग। धनि=स्त्री। उरेहै लागै=

चित्र बनाने लगती। घिरिनि परेवा = गिरहबाज कबूतर। भिरिंग (भृंग) = भौंरा।

दो० २ हेहीं = देखी। पियर (पीत) = पीला। भौंर-दीठि—भौंरे सी पुतलियाँ। राता (रक्त) = अनुरक्त। भोरा = भ्रम। कस = कैसी, समान। तुइँ = तूने।

दो० ३ मैमंतू = मतवाला। सयानी = भीर। साधु = साधो, साधना करो। सेवाति = स्वाती।

दो० ४ दाधा = दाह, ज्वाला। असँभारा (अ + सँभारा) = बेसुध, न सँभालने योग्य। भौंर = आवर्त, पानी की भँवर। पौन = प्राण वायु। सेव = सेवा।

दो० ५ रोई = रो चुकी। बिछोई = बिछुड़ा हुआ। बिछूना = बिछुड़ा हुआ। सुहेला = साहिल नामक तारा। यह नक्षत्र अरब देश में बरसात के पहले दिखाई पड़ता है।

दो० ६ पंखि जौं डहना = पत्नी को जब डैने निकल आवें। बनोवास = बनवास। खेला = उजड़हुआ। नर = नरसल जिसमें लासा लगाकर बहेलिए चिड़िया फँसाते हैं, लग्गी। मीचु = मृत्यु। चित्र = विचित्र। लीन्ह सब साज = मुर्दे का साज लिया, मर गया।

दो० ७ मनियारा (मणि) = सोहावना। हींछा (इच्छा) = कामना। रतनागर = रत्नाकर, समुद्र। फेर = बहाना।

दो० ८ चिनगी = चिनगारी। कंचन-करी = स्वर्ण-कली। ओप = चमक, ताप। पतार = पाताल। प्रिथिमी = पृथ्वी।

दो० ९ बजागि = बज्राग्नि। कया = काया, शरीर। मयन (मदन) = काम। बानू = वर्ण, चमक। छाला = मृगछाला। मिस = बहाने।

दो० १० पावा पान = बिदा होने का बीड़ा पाया। राधा = पूजित होकर। मारग नैन = मार्ग में लगे हुए नैन।

आदि = प्रेम का मूलमंत्र। भिंग = भृंगी। फनिग = फतिंगा। रितू = ऋतु। समापत = समाप्त।

दो० ११ गवाई = व्यतीत किया। हँकारी = बुलाया। बारी = स्त्रियाँ। परासहिं = पलाश को। बिगसि = विकसित होकर। उपने = उत्पन्न हुए। गोहने = साथ में।

दो० १२ आन = आज्ञा। तारामंडल = एक प्रकार का वस्त्र। चोला = वस्त्र, बागे। गीली = सिक्त, भगी हुई।

दो० १३ कुरि = कुल। धमारी = क्रीड़ा। मनोरा झूमक = एक गीत, जिसमें स्त्रियाँ झुंड बाँधकर गाती हैं। सैंतब = संचय करेंगी। झोरी = झोली।

दो० १४ बिरह अति झारा = विरह की ज्वाला से झुलसी सी। बीनहिं = चुनती हैं। मादर = एक प्रकार का बाजा, मृदंग। तूर = तूरही। बुका = अबीर। चाँचरि = होली में एक स्वाँग। राते = रक्तवर्ण हुए, लाल हुए।

दो० १५ तुलानी = पहुँची। पैसारा = पैठारा, प्रवेश।

दो० १६ तंत = तत्त्व। दसएँ लछन = योगियों के ३२ लक्षणों में से दसवाँ लक्षण 'सत्य' है। पिंगला = पिंगला नाड़ी सिद्ध करने के लिए अथवा पिंगला नाम की अपनी रानी के कारण। कजरी-आरन = कदली-वन। मुद्रा = लक्षण। अवधूत = साधू। पूत = पुत्र।

दो० १७ सहुँ = सम्मुख। किंकरी (किंकरी) = एक प्रकार का बाजा।

दो० १८ सीर = शीतल, ठंढा। कूरा = समूह। कहाँ...... भीउँ = बलि और भीम कहलानेवाला जीव कहाँ है ? बाज (सं० वर्ज्य) = बिना।

दो० १९ बिहारी = विहार या सैर की। छेका = घेर लिया। निखेधा – निषिद्ध है। हनुवँ = हनुमान्।

दो० २० बारू = द्वार। परसन = प्रसन्न। पुरबिला = पूर्व का, पूर्व-जन्म का। सँयोग = फल।

दो० २१ सिरावा = ठंढा करे। दुहेला = दुखी। आँक = अक्षर। परजरे = प्रज्वलित हुए।

दो० २२ बिसवासी = अविश्वासी। सुफल लागि = अच्छे फल के लिये। जनम......भींजा = जन्म भर यदि भीगे तो भी पानी उसके अन्दर न जाय। तरेंदा = तैरनेवाला, तैराक।

दो० २३ हता = था। सर = चिता।

दो० २४ कुस्टि = कोढ़ी। धनि = धन्या, स्त्री, नारी। जेहि लागी = जिसके लिये।

दो० २५ बिलमाँवा = विलंब किया, भरमाया। निस्तर = निस्तार, छुट्टी। गइ सो पूजि = वह (पदमावती) पूजा करके चली गई। डाढ़े पर दाधा = जले पर जलाया। अधजर = आधा जला।

दो० २६ आँचर = अंचल। तोका = तुमको। तो पहँ = तुम्हारे पास। अछरी = अप्सरा।

दो २७ निहचै = निश्चय। डभकहिं = डबडबाते हैं, जल-पूर्ण होते हैं। परगट = प्रकट करते हैं। दुवौ = दोनों, बदन और नयन। सूत = सूत्र।

दो० २८ मयारू = दयालु। ईसर = ऐश्वर्य। ओका = उसको। सिवलोका = शिवलोक, स्वर्ग। बाँक = बाँका, सुंदर। कोतवारा = कोतवाल, रक्षक। पाँच कोतवारा = पंच-वायु। दसवँ दुवार = ब्रह्मांड। मरजिया = जीविकिया, वह मनुष्य जो समुद्र में गोता लगाकर मोती आदि निकालता है।

दो० २९ ताल कै लेखा = ताड़ के समान ऊँचा। गुटेका = गुटिका, गोली। परी हूल = शोर हुआ, हल्ला मचा। खेला = विचरता हुआ आया। बसीठ = दूत।

दो० ३० बनिजारे = व्यापारी। जुगुति (युक्ति) = अवसर, ढंग। भुगुति = भिक्षा, भोजन। आनु = ले आ। भूजा = भोग। बार = द्वार, रास्ता। ओरा = ओर से, तरफ से। साखि = साक्ष। निहोरा = लिये, वास्ते।

दो० ३१ रीसा (ईर्ष्या) = क्रोध। जोग = उचित। धरती··· चाट = पृथ्वी पर रहकर आसमान चाटना। मिलाओ —रहै भूइ औ चाटै बादर। अस्ति नास्ति = बनाना-बिगाड़ना, सृष्टि और प्रलय। बारा = देर। छारा = धूल। नए = झुके, नम्र हुए। कोह = क्रोध। तंत = तत्त्व।

दो० ३२ बसिठन्ह = दूत। ठाँव = स्थान। माखे (अमर्ष) = अमर्ष हुआ, क्रुद्ध हुए। सँजोऊ = युद्ध की तैयारी। पति = प्रतिष्ठा। मोखू = मोक्ष। दोखू = दोष। जोगी...... खेले = बिना विचरण किए योगी (एक स्थान पर) कहाँ रहते हैं? आछै = रहने। भख = भक्षण।

दो० ३३ लाए = लगाए। चाहा = खबर, सूचना। माझी (मध्य) = बीच में पड़नेवाला, केवट, रास्ता दिखाने-वाला। राती = रक्त, लाल। नाठा = नष्ट। मसि = स्याही।

दो० ३४ राती = अनुरक्त। बसंदर (वैश्वानर) = अग्नि।

दो० ३६ ताती = तप्त, जलती हुई। पवारी = फेक।

दो० ३७ हौं = मैं। थिर = स्थिर, निश्चल।

दो० ३८ आँगी = चोली। भोरी = भोली। घाला = डाला।

दो० ३९ तहुँ = तू भी। निबाहै आँटा = निबाह सकता है। केत = केतकी। लेसि = लो। महुँ = मैं भी। ओर = अंत में। राहु = रोहू मछली।

दो० ४० झूरा = दुःखित हुआ। कूरा = ढेर। केवा = केतकी। सामि = स्वामी।

दो० ४१ पाति = पत्र। बेहराना = अलग हुआ। सँभारा (स्मृ) = स्मरण किया। सेंधि (संधि) = नकब।

दो० ४२ सबद = व्यवस्था। जोगि...भेदी = योगी भौंरे के समान मालती का पता ले लेते हैं। राँध = परिपक्व बुद्धि में परिपक्व। अपसवहिं (अपसरण) = जायँ। पारा = पारद (mercury)। छरहिं = छलें, छल करें। छर = छल। बसाइ = बस।

दो० ४३ गुदर = दरबार की हाजिरी। कटक = सेना। जूझा = युद्ध। गाढ़ = कष्ट। सौंह = सामने। भारत = महाभारत के युद्ध के समान। बाचा = वाणी।

दो० ४४ बिसमौ = विस्मय, दुःख। नामी = नष्ट हुई।

दो० ४५ इतराहीं = इतराते हैं। तरौं = तर जाऊँ। करवत (करपत्र) = आरा।

दो० ४६ बिहानी = सबेरा हुआ, व्यतीत हुई।

दो० ४७ गरासी = ग्रसित हुई। निसँस = निःश्वास लेकर। गहेली = हठीली। हारि करति है = निराश होती है। निछोहा = निष्ठुर।

दो० ४८ भौंर.....बासा = काली पुतलियाँ खुलीं। उघेली = उघाड़ी। दवैं = दबाता है। झाँपा = ढपा हुआ। चख = नेत्र। जिउ न पियार = जब प्यारा ही नहीं जीता है। सँकेत = संकीर्णता, कष्ट।

दो० ४९ बैद = वैद्य। धनि = स्त्री। झारा = ज्वाला।

दो० ५० दुहेली = दुःखित। दमनहिं = दमयंती को।

दो० ५१ पौरि = पौल, दरवाजा। भोरू = प्रभात। सूरी = वह स्थान जहाँ मृत्युदंड दिया जाता है, सूली। रूप... ...फेरि = तुम्हारे रूप (शरीर) में अपने जीव को करके (पर-काय-

प्रवेश करके, जैसा योगी लोग प्राय: किया करते हैं) मानो उसने दूसरा शरीर प्राप्त किया।

दो० ५२ गगनेहा = स्वर्ग में। परसेद (प्रस्वेद) = पसीना। तुम्ह जिउ कहँ = तुम्हारे जी को।

---

(४) भेंट खंड

दो० १ सिघलपूरी = सिंघलपुरवाले। आना = लाए। तूरू = तुरही। मंसूरू = एक मुसलमान फकीर जो 'अनलहक' अर्थात् 'ब्रह्मास्मि' कहा करता था। इसी कारण काफिर बतलाकर लोगों ने उसे सूली पर चढ़ा दिया था। मसूर ने प्रसन्नतापूर्वक यह दंड स्वीकार किया था। भाव = कारण, उद्देश से।

दो० २ निबेरा = निपटारा, उद्धार। पुहुमी = पृथ्वी।

दो० ३ गाढ़ = कष्ट। साजू = समान, तैयारी। गुपुत = छिपकर। कटक = सेना।

दो० ४ बिपति = विपत्ति। दसौंधी = भाटों की एक जाति। भए जिउ पर = जी देने पर तुल गए।

दो० ५ औंधी = उलटी, नीची। बरम्हाऊ = आशीर्वाद। असाइ = अताई, बेढंगा।

दो० ६ अभाऊ = अशिष्ट। खरि = खरा।

दो० ७ भाँट करा = भाँट की भाँति। तोका = तुझे।

दो० ८ ओहठ = ओट, दूर, आँख के सामने से दूर। जा सहुँ हेरौं = जिसकी ओर देखता हूँ। चालौं = चलाऊँ। ठाट = झुंड, समूह।

दो० ९ दर=दल । ईसर=महादेव, ईश्वर । सो......
साजा=उसी ने बैर साधा है । बारि=बाला, कन्या ।

दो० १० जग पूजा=संसार से पूजित । हुतें=से । सहस्रक
=सहस्रों, हजारों । चढ़ाएहु=चढ़ा लाए हो ।

दो० ११ रसना=जिह्वा, जीभ । करमहिं=कर्म में ।
पति=मालिक, स्वामी । बाजा=प्रसिद्ध हुआ ।

दो० १२ बरोक=बरच्छा, वर-दक्षिणा, फलदान । ओनाहँ
=उलटे आए ।

दो० १३ सगरौं (सकल)=सब । लाए=लगे हुए, युक्त
दर=दल, पक्ष । गोहने=साथ में । नइ=नमित होकर,
सिर झुकाकर । मसियर=मशाल । ताईं=तक, पास ।

दो० १४ चित्तर-सारी=चित्रसारी । माँझ=बीच में ।
बैसारा=बैठाया । पसारा=फैलाए थे । पनवार=पत्ताल,
पुरइन के पत्तो की पत्तल । खँड़वानी (खाँड़=पानी) शरबत,
रस । अरगजा=चंदन । कुँहकुँह=कुंकुम, केसर ।

दो० १५ बारा=बाला, कन्याएँ, स्त्रियाँ । तरइन्ह=
ताराओं । हार......पाई=हार क्या पाया मानो चंद्रमा के
साथ तारों को भी पाया । सत भाँवरि=विवाह के अवसर पर दी
हुई सात भाँवरें । घुटै कै=दृढ़ करके ।

दो० १६ छार छुड़ाई=धूल में से निकाला अर्थात् मैं
राख लपेटकर योगी बना था, अब आपने मुझे राजा बनाया ।

दो० १७ अथवै=अस्त होता है । सँवारै=शृंगार को ।
पत्रावलि=पत्रभंग, केशविन्यास की एक विधि । मानहुँ
......देखाव=मानो आकाश-रूपी दर्पण में जो चंद्रमा और तारे
दिखाई पड़ते हैं वे इसी पदमावती के प्रतिबिंब हैं ।

दो० १८ सदूरू = शादू ल, सिंह । पहुँचा = कलाइ । पौनारी = पद्मनाल । होइ बारी = बगीचे में जाकर । गरब-गहेली = गर्व धारण करनेवाली । लाजि = लजाकर ।

दो० १९ बाचा = प्रतिज्ञा । सारी = गोटी । पैंत लाएउ = दाँव लगाया । पाकि = पक्की गोटी ।

दो० २० तुम्ह हुँत = तुम्हारे लिए । पुहुप = पुष्प । दाधा = दग्ध हुआ, अनुरक्त हुआ ।

दो० २१ हेम = सोना । तयऊ = तपा । उदोती = प्रकाश ।

दो० २२ चरचिउँ = परीक्षा की, चर्चा की, भाँप लिया । ओनाई = अवनत की, नवाई । बानू = वर्ण । औटि = औटकर ।

दो० २३ दीन्हीं हाथी = हाथ मिलाया । अँतरपट साजा = आँख की ओट हो गए । सेराने (शीत) = ठंढे हुए ।

दो० २४ अहक = लालसा । खाँगी = घटी, कम हुई । कापर = कपड़े ।

दो० २५ नए चार = नई चाल से । कूई = कोई, कोका-बेली, कुमुदिनी । ऊई = उगीं । नाहू = नाथ । जेहि = जिसकी बदौलत ।

दो० २६ बेवानू = विमान, पालकी । चौडोला = एक प्रकार का बाजा । सोंधे = सुगंध । खरी = खड़ी । घिरित (घृत) = घी । बंदन = सिंदूर ।

---

(५) नागमती-खंड

दो० १ नागर = नायक, रतनसेन । नरायन बावँन करा = वामन-कला के रूप में ईश्वर । करन = राजा कर्ण । छंदू =

छल । झिलमिल = कवच । अपसवा = चल दिया । पींजर = पंजर, ठठरी ।

दो० २ रामा = नारी । नारी = नाड़ी । चोला = शरीर । पहर......बोला = एक प्रहर में मुख से निकली हुई बात समझ पड़ती है । पयान = प्रयाण, जाना । आहि = आह । हंस = हंस, जीव ।

दो० ३ पाठ-महादेइ (पट्टमहादेवी) = पटरानी । हारू = हार । मेरावा = मिलाप, मेल । टेकु = रोक । थीती (स्थिति) = स्थिरता । बारी = (१) स्त्री, (२) बगीचा । साजन = प्रिय । अंकम = अंक, अँकवार । पलुहंत = पल्लवित होते हैं ।

दो० ४ धूम = धूमिल । साम (श्याम) = काला । धौरे = धवल, श्वेत । ओनई = अवनत हुई, झुकी, घेर ली । लागि भुइँ लेई = खेतों में लेवा लगा, खेत पानी से भर गए । गारौ = गौरव । बाहिरै = (१) बाहर, (२) बिना ।

दो० ५ मेह = मेघ । भरनि परी = पानी भर गया । सरेखा = चतुर, श्रेष्ठ । भँभोरी = एक पतिंगा । ताकी = देखी । थाकी = थकी ।

दो० ६ दूभर (दुर्वह) = कठिन । भरौं = काटूँ, बिताऊँ । अनतै (अन्यत्र) = अलग, दूसरी जगह । तरासा = त्रास देता है । ओरी = ओलती, छाजन का किनारा । धनि = (१) स्त्री, (२) धान । पुरबा = पूर्वा नक्षत्र ।

दो० ७ लटा = निर्बल हुआ । पलुहै = पल्लवित होती है । उतरी चित्त = मैं तुम्हारे चित्त से उतर गई हूँ अर्थात् तू मुझे भूल गया है । तुरय = तुरंग, घोड़े । पलानि = कसकर । साले (शल्य) = दुःख दे । बाजहु = लड़ा । गाजहु (गर्ज) = गर्जन करो । सदूर = शार्दूल, सिंह ।

दो० ८ चौदह करा = मुसलमान चंद्रमा की चौदह कलाएं मानते हैं क्योंकि वह एक पक्ष में केवल चौदह दिन दिखाई देता है। अगिदाहू = अग्नि के समान दाह, ताप। झूमक = मनोरा झूमक नाम का एक गीत। तिउहार = त्योहार। देवारी = दिवाली।

दो० ९ बहुरा = लौटा। बिछोई = छोड़ करके, बिछोह करके। सुलुगि = सुलगकर, जलकर। सँदेसड़ा = संदेश।

दो० १० लंका दिसि = दक्षिण की ओर। चाँपा जाई = दबाकर पहुँचा। हियरे = हृदय में। सौर = चद्दर। सचान = बाज, श्येन। बिरह-सचान......जाड़ा = विरह-रूपी बाज इस जाड़े में शरीर-रूपी पक्षी को खा जाना चाहता है। गरा = गल गया। ररि = रटकर।

दो० ११ पहल......झाँपै—जहाँ तक रूई की तहों से शरीर ढका जाता है। माहा = माघ में। महवट = मघवट, माघ की झड़ी। सर-चीरू = बाण का घाव। झोला मारना = वात के प्रकोप से अंग का सूना हो जाना। पटोरा = रेशमी वस्त्र। डोरा = क्षीण होकर डोरे के समान पतली। तिनउर = तिनका। झोल = राख, भस्म।

दो० १२ चाँचरि जोरी = सब झुंड बाँधकर फाग खेलती हैं। लगौं निहोर तोरे = तुम्हारे काम आऊँ।

दो० १३ उजारी = उजाड़ दिया। पंचम = कोकिल का स्वर। मजीठ (सं० मंजिष्ठ) = लाल रंग का एक फल। बौरे = बौरना। परु टूटि = टूट पड़ा। नारि = (१) स्त्री, (२) नाड़ी। छूटि = मुक्ति, उद्धार।

दो० १४ चोत्रा = एक सुगंधित द्रव्य। हिवंचल ताका = उत्तरायण हुआ। भारू = भाड़। भड़भूजों के भाड़ की

आग जो बड़ी तेजी से जलती है। बिहरत = विदीर्ण होता हुआ। दवँगरा = वर्षा के आरंभ की झड़ी।

दो० १५ लुवारा = लू। गाजि = गर्जन करके। पलंका = पर्यंक, पलँग; अथवा लंका के और आगे का स्थान। मंदी = धीरे धीरे जलानेवाली। अधजर = आधी जली। हाड़न्ह = हड्डियों में। सराहिए = सराहना कीजिए! लागि = लिये।

दो० १६ छाजनि = छाजो, छप्पर, छत,। गाढ़ी = कठिन। तिनउर = तिनका। झूरौं = सूखती हूँ। बंध = ठाट बाँधने के लिये रस्सी। कंध = कर्णधार, सहायक। साँठि नाठि = पूँजी नष्ट हो गइ। मूँज तनु छूछा = मूँज के समान खोखला शरीर। दुहेलो = दुखी। टेक—आधार। बिहूनी = बिना। थाँभ = स्तंभ। थूनी = लकड़ी की टेक। छपर छपर = सराबोर, पानी से लथपथ। कोरौं = काँड़ी, बाँस या लकड़ी जो छप्पर में लगती है। नव कै = नए सिरे से।

दो० १७ सहस सहस......साँसा = एक एक साँस अर्थात् पल सहस्रों दुःखों से भरा था (फिर बारह महीने कितने दुःखों से भरे बीते होंगे?)। तिल तिल......जाई = तिल भर समय एक वर्ष के इतना पड़ जाता है। सेराई = व्यतीत हुआ। सुनारी = नागमती। झुरि = सूखकर। गरा = गला। नेह = स्नेह। जुड़ावहु = शीतल करो। झंखि = दुःखित होकर। बूझि = पूछकर। पंखि = पक्षी।

दो० १८ पुछार = (१) पूछनेवाली, (२) मयूर, मोर। चिलवासू = फंदा, चिड़िया फँसाने का फंदा। खर = तीक्ष्ण। हारिल = (१) थकी हुई, (२) एक पक्षी। रोख = रोष। बया = एक पक्षी। गौरवा = चरक पक्षी। तिलोरी = देसी मैना। कटनंसा = काटने तथा नाश करनेवाला, कटनासै या नीलकंठ। निअर = समीप।

दो० १९ करमुखी = कलमुँही, काले मुखवाली। सेराव = ठंढा करे। ताती = तप्त। रासी = ढेर, समूह। परास = पलाश। देसरा = देश। हेवंत = हेमंत ऋतु।

दो० २० न लावसि आँखी = आँख न लगना, नींद न आना। कारन कै = करुणा करके, दुःख से। कंत-बिछोही = जिसका कंत से वियोग हो, विरहिणी। सेवाति कहँ = स्वाती के लिये। नाहू = पति, स्वामी। तब हुँत = तब से। टेक = ऊपर लेता है।

दो० २१ बीरा = भाई। भिउँ = भीम। अँगवै = सह। चाहा = खबर। किँगरी = किंकरी, चेरी। पाँवरी = जूती। खप्पर = पात्र, जिसे कापालिक लोग लिए रहते हैं। किँगरी = चिकारा, एक बाजा।

दो० २२ बरता = व्रत। रावट = रावटी, महल। रावट लंक = जलती हुई लंका। बारी = बाला। चाहनहारी = देखने वाली।

दो० २३ बराहीं = जलते हैं। सरवन = श्रवणकुमार। (श्रवण-कुमार की कथा उत्तर भारत में प्रचलित है। यह कथा वाल्मीकीय रामायण में मरने से पहले दशरथ ने कौशल्या से कही है। कहते हैं कि श्रवण अपने अंधे माता पिता को बहँगी पर लिए हुए फिरता था और उनकी सेवा करता था। राजा दशरथ ने अनजान में उसे मार डाला। तब श्रवण के बूढ़े माता-पिता के शाप से उन्हें पुत्र-वियोग के कारण मरना पड़ा। थोड़े परिवर्त्तन के साथ यह कथा बौद्धजातकों में मिलती है और एक प्रकार के साधु इसे गाते फिरते हैं।)

दो० २४ उतंग = ऊँचा। गँभीर = गहन, घनी। तुरय (तुरग) = घोड़ा। पंखिन्ह = पक्षियों की। सामा = श्यामा। मासक दुइ = दो मास के लगभग। दाढ़े = दग्ध हुए।

दो० २५ निसरा = निकला। धुँध = अंधकार। बाजा = छाया। कोइल-बानी = कोकिल के से वर्णवाली, काली। झारा = ज्वाला। बेसा = भेस। महूँ = मैं भी। भरौं = गिनता हूँ, बिताता हूँ।

दो० २६ घमोई = सत्यानाशी नामक वनस्पति, भँड़भाँड़। बँधा = बाँधकर। काँवार = बहँगी, जिसे कंधे पर रखते हैं। इसके दोनों छोरों पर दो छींके लगे रहते हैं। पाँजर = पंजर, कंकाल, ठटरी। जरी = जड़ी, ओषधि।

दो० २७ सगरौं = सब। गोहरावा = पुकारा। अलोप = लुप्त। साँखा = शंका। बिसँभर = बेसुध। बारा = द्वार पर।

दो० २८ काँच = शीशा। पाती = पत्र। हम्ह = मेरी। आउ = आयु।

दो० २९ सबारी = सब। बिरवा = विपट। भावा = अच्छा लगता है। दिवस देहु = दिन नियत कीजिए। सिधावहिं = सिधारें। गवने कर = गमन का, चलने का।

दो० ३० नेवारी = जूही की जाति का एक फूल। नागसेर = (१) नागमती, (२) एक प्रकार का फूल। बोल = एक प्रकार की झाड़ी जो अरब की ओर होती है। मदबगग = गेंदा। उठा धसकि = दहल उठा। निछोह = स्नेह-रहित।

दो० ३१ गरब = गर्व। किरोध = क्रोध। तूरैं = तोड़े।

दो० ३२ टेक = रोक। गुरेरा = साक्षात्, देखादेखी। देइ पारै = दे सकता।

दो० ३३ बाउ = वायु। उलथाना = उमड़ा। ताके = देखते हुए।

दो० ३४ पाटा = पटरा, तख्ता। लच्छि = लक्ष्मी। सेंती = साथ। तीवइ = स्त्री का।

दो० ३५ कागर = कागज। पतरा = पतला। छीजा = कम हुआ। कोरै (क्रोड़) = गोद में। बोलि कै = बुलाकर

दो० ३६ पसारि = फैलाकर। चेती = चेत करके, होश करके। बही = बहती हुई। आथि = सार, पूँजी। निआथि = निर्धनता। आथि निआथि = धन और निर्धनता दोनों में।

दो० ३७ भहर भहर = भर भर करता हुआ, आग जलने का शब्द। बरा = बला, जला। माँग = माँगती थी। पाहुन··· कोई = अतिथि समझकर सब पानी देती हैं और हवा करती हैं। खीन = क्षीण। बर = बल, सहारे। खरी = खड़ी। आरंभ = नाद, कूक। सो = वह।

दो० ३८ लागि बुझावै = समझाने-बुझाने लगी। खटवाट = खटपाटी। स्त्रियाँ प्रायः रूठकर खाट पर जा पड़ती हैं। सेसा = शेष। चालि = चलाई।

दो० ३९ मेरवसि = मिलता है। आउ = आयु। बिछोहा = वियोग।

दो० ४० गीउ = गला, ग्रीवा। बैसाखी = लाठी। अपघाता = आत्मघात। परिहँस = ईर्ष्या।

दो० ४१ भाँड़े = शरीर में। निरमर = निर्मल। हुती = थी। बहल = बहली, गाड़ी। दुहेल = दुःख।

दो० ४२ बेरा = बेड़ा। तहूँ = तू भी। अनु = हाँ। मोकाँ = मुझे, मुझको। सिवलोक = स्वर्ग। बाउर = बावला। भा बाट = रास्ता पकड़ा।

दो० ४३ निछोई = स्नेह-रहित।

दो० ४४ परसा = स्पर्श किया। रजु = धूल। अचरज = आश्चर्य। रज मेट = आँसू से पैरों की धूलि धो डाली।

दो० ४७ सरवन (श्रवण)—कान। बंसू = वंश। सावक = शावक। सादूर, (शार्दूल) = सिंह। परस = स्पर्श-मणि, पारस पत्थर। मूरू = मूल। कटक = सोना। पयान = प्रयाण। सकान = डर गए।

दो० ४७ अँदोरा = आंदोलन, हलचल। तुचा = त्वचा। सुचा = सूचना, सुध। सहेलरी = सहेली। उवा = उगा।

दो० ४८ सीअर = शीतल। नए चार = नए सिर से। खन = क्षण। दर = दल। ओनए = घेरे। अठारह गंडा = अवध में जनसाधारण के बीच यह बात प्रसिद्ध है कि समुद्र में ७२ नदियाँ मिलती हैं।

दो० ४९ बेवान् = विमान, पालकी, सवारी। आनू = दूसरा ही कुछ (भाव)। झार = ज्वाला, जलन। हेम सेत = सफेद हिम, पाला। उघरि गा = खुल गया।

दो० ५० निधनी = निर्धन। वोहागा = बटोग। मँगतन्ह = मंगनों को। डाँग = डौड़ी।

दो० ५१ दाही = अग्नि। पोढ़ = कड़े, पुष्ट। पलुहाई = पल्लवित की। ठावँ = स्थान।

दो० ५२ डफारा = दाढ़ मारती है। नखतन्ह-मारा = नक्षत्रों की माला। निसाँसी = निःश्वास। रहँट = रहट, जलयंत्र। घरी = घड़ा। पंक = कीचड़।

दो० ५३ नागिनी = (१) नागिन, (२) नागमती। हिरकै = पास जाय। करिया = काला।

दो० ५४ गहगहे = प्रसन्नतापूर्वक। सारिउँ = सारिका। रहसत = केलि करते हुए। खूसट = उल्लू, मनहूस।

---

(६) राघव चेतन खंड

दो० १ चेतन = चेतना-युक्त, पंडित। आऊ सरि = आयु पर्य्यंत। बाउर = वातुल, पागल। सरेखा = होशियार, सचेत, चतुर। जाखिनी = यक्षिणी।

दो० २ कौन अगस्त...सोखा = इतनी प्रत्यक्ष बात को कौन पी जा सकती है? दिस्टिबंध = कौतुक, इंद्रजाल। कलिह = कल। चेटक = कलाबाजी, माया। चमारिनि लोना = कामरूप की प्रसिद्ध जादूगरनी लोना चमारी। काँवरू = कामरूप। एक दिन... लावै = (१) जब चाहे, चन्द्र ग्रहण कर दे, (२) पद्मावती के कारण बादसाह की चढ़ाई का संकेत भी मिलता है। छला = छल किया।

दो० ३ बानि = वर्ण, रंग। निसारा = निकाला।

दो० ४ निहकलंक (निष्कलंक) = कलंक रहित। मारा = माला कंकन = कंगन। कोरी = कोटि, करोड़। पवारा = फेंका।

दो० ५ दोखा = दोष। परेतू = प्रेत। सनिपातू = सन्निपात रोग। मिरगी (मृगी) = एक प्रकार का रोग। बातू = वायु। धूत = धूर्त।

दो० ६ सँकेता = सकट। पराइ = दूसरे की। लाई ठगौरी = मोह लिया; बेसुध कर दिया। बौरी = पागलपन की। बटपारा = हरजन, रास्ते में लूट-मार करनेवाले। बरज = रोके। गोहारी = मदद को दौड़े। बटपारी = लूट। ठगलाडू = वे लड्डू जिन्हें खिलाकर ठग पथिकों को बेसुध कर देते हैं। और उनका धन लूट लेते हैं। अलक = बाल।

दो० ७ दच्छिना (दक्षिणा) = दान। हँकारी = पुकारकर, बुलाकर।

दो० ८ एता = यहाँ। संसौ = संशय। रहनि = रहना। सबेरा = शीघ्र। एत = इतना। खाँगौं = मुझे कमी हो। ढरै = ढले। टकसारा = टकसाल, जहाँ मुद्रा बनाई जाती है। बारह बानी = द्वादश वर्ण का, खरा सोना। दिनारा = दीनार नामक स्वर्ण-मुद्रा।

दो० १० मया = मेहरबानी की। हँकारी = बुलाकर। पूजा = बराबरी कर सका। मनि = मणि। अछरी = अप्सरा।

दो० ११ परगसा = प्रकाशित हुआ। जोग = योग्य। नावँ भिखारि......बाँची = भिखारी समझकर अभी तक तेरी जीभ खींच नहीं ली गई। सँभारि = स्मरण कर, होश कर। जोरे = एकत्र किया। देखि लोन...बिलासी = लावण्य को देखकर लवण की भाँति तू गल जायगा। चक्कवै = चक्रवर्ती राज करता हूँ।

दो० १२ अनु = यह ठीक है। कहवावा = कहलाया। चितेर = चित्रकार। चित्र कै = चित्र बनाकर।

दो० १३ बेकरारा = बेकरार, विकल। डासहिं = बिछाती हैं। सौंर = चद्दर। जो जो......देखी अपने रनिवास की जिन जिन रानियों को उसने पद्मिनी समझा था वे पद्मिनी का वृत्तांत सुनने पर कोई सी जान पड़ने लगीं। कै चूरू = चूर करके। मलिन = हतोत्साह।

दो० १४ पाहाँ = से। पदारथ = उत्तम। परस = पारस। रोभ = घोड़रोच, नीलगाय। लागना = लगनेवाला, शिकार करनेवाला। सचान = बाज पक्षी। सायर = सागर।

दो० १५ पहिरावा = वस्त्र पहनाया। जोरा = जोड़ी। कोरी = कोटि, करोड़। दिनार = दीनार नामक स्वर्णमुद्रा। जेंवा = दक्षिणा में। सरजा = दूत का नाम। ताजन = कोड़ा। करा = कला। अनेग = अनेक।

दो० १६ दैउ = दैव, आकाश। बोलू = वचन।

दो० १७ घरनि = घरनी, स्त्री। सक-बंधी = साका चलानेवाला। रोहू = मछली। सैरंधी (सैरिंध्री) = द्रौपदी। ताका = देखा, दृष्टि डाली। मोछा = मूँछ।

दो० १८ आपु जनाई = अपने को जनाकर, अपनी बड़ाई करके। छिताई = स्त्री-विशेष। बारा = देर। माख = अमर्ष, रोष, वैर। अगमना = आगम, भविष्य में होनेवाली घटना।

दो० १९ बूझा (बुद्ध) = बोधित हो। बर खाँचा = हट दिखाता है। दुंद = दुंदुभी, डंका। सकाना = शंकित हुआ। बारिगह = डेरा, खेमा। बेसरा = खच्चर। लीन्ह पलानै = घोड़े कसे। सरह = शलभ, टिड्डी।

दो० २० पैगह = परिग्रह। बाँक = बाँके, तीखे। कनकार्ना = एक प्रकार के घोड़े। लोहसार = लोहे का सार, फौलाद। बानै = बाना, पहनावा। पारा = सकता है। जँबुर = एक प्रकार की तोप। खदंगी = खदंग, बाण, तीर। बेहर बेहर = अलग-अलग। पयान = प्रयाण, यात्रा।

दो० २१ दर = दल। दौराई = दौड़ाया, शीघ्र भेजा। मेंड़ = बाँध, रोक। पार छँड़ाई = छुड़ा सकता है। बारि = पानी।

दो० २२ परेवा = दूत। एकमते = एकमत। नाता = संबंध। जौहर = राजपूतों में प्रथा थी कि उनके हारने पर उनकी स्त्रियाँ आग में कूदकर जल मरती थीं। इसे जौहर कहते थे। लेखा = नाईं, दशा।

दो० २३ खाँग = कमी। बाँके चाहि बाँक = विकट से विकट। धानुक = धनुषवाले। आँटी = पर्य्याप्त हुई। अँगुरन = अंगुल। ठारे = खड़े। लेखे लाव = गिनती में आवे।

दो० २४ जूहा = यूथ, समूह। रूहा (आरूढ़) = चढ़ा। को धनि......राजा = या राजा रत्नसेन तू धन्य है। बैरख = झंडे। छार = धूल। जेवनार = लोगों की रसोई में।

दो० २५ सँजोऊ = तैयारी। अकूत = अगणित। असु = अश्व। धुजा = ध्वजा, पताका। अनी = सेना।

दो० २६ सेन = सेना। अवाई = आगमन। लोहे = हथियार। अगाऊ = सामने। सकति...पोखि = शक्ति भर सब

पोषण करते थे। ओछ...जानब = ओछा पूरा (भली भाँति) उसे समझो। थिर = स्थिर। आवत जोखि = समझता है।

दो० २७ अथवा = अस्त हुआ। भा बासा = डरा हुआ। नखत = नक्षत्र।

दो० २८ गरेरा = घेरा, धावा। छेंका = छेंक लिया, घेर लिया। गरगज = बुज जिस पर तोप रखी जाती है। दारू = बारूद। ओदरहिं = विदीर्ण होते हैं, ढह जाते हैं। रावटी = महल।

दो० २९ राजगीर = थवई, मेमार। थवई = मेमार। गाजा = बिजली, वज्र। परलै = प्रलय। जूझ = युद्ध। सौंह = सामने। घन-तारा = बड़ा झाँझ।

दो० ३० गूँजा = गरजा। मिरिग = मृगनयनी। चाँद = चंद्र-मुखी। भूजा = भोगेगा। साँचा = शरीर। उड़सा = भंग हो गया। तारा = ताली।

दो० ३१ अरदासैं = पत्र। हरेव = देश-विशेष। थाने = चौकियाँ। परावा = दूसरे का। जिन्ह......बबूर = जिन रास्तों में इतनी सफाई थी कि तिनका भी नहीं जमता था वहाँ बेर, बबूर उगे हैं।

दो० ३२ आन = दूसरी। गढ़ सौं...छूटै = गढ़ से जब उलझ गए तब या तो सन्धि होने पर या किला टूटने पर ही छूट सकते हैं। भेऊ = भेद। सेऊ = सेवा। चूरा कीन्ह = तोड़ा हुआ। अग्या = आज्ञा। छाजा = सोहता है, उचित है।

दो० ३३ ऐगुन = अवगुण। भँडारा = भांडार, धन। इसकदर = सिकंदर। दारा = फारस का राजा जिस पर सिकंदर ने चढ़ाई की थी। इसकंदर...दारा = अर्थात् यदि मैं बादशाह की चढ़ाई से बच जाऊँ। बाचा-परवाना = वचन-प्रमाण। नाव = नवाए।

नाव...ग्रीवा=जो भार सिर पर रखकर गर्दन हिलाता है अर्थात् जो उत्तरदायित्व लेकर हिचकता है। सरजै=सरजा नामक दूत।

दो० ३४ हुत=से सोनहार=समुद्र का पक्षी। डाँड़ा=पालकी। रूपे कै=चाँदी की। काँड़ी=पींजरा। जौरे धनुक...बानू=जो अब वह किले में जाने पर किसी प्रकार की कुटिलता करेगा तो उसके सामने फिर बाण होगा (धनुष टेढ़ा होता है और बाण सीधा) कोहू=क्रोध। रसोइ=भोजन।

दो० ३५ जत=जितने। कहँ=के लिये। जेवाँ=भोजन किया। विवान=विमान। पँवार=दरवाजा। उरेह=चित्र। जिन्ह ते नवहिं करोरि=जिनके सामने करोड़ों आदमी आवें तो डर जायँ।

दो० ३६ केवारा=किवाड़। भँवरी=चक्कर, घेरा। छहराने=छितराए हुए। ओनाहिं=आकर्षित होते हैं।

दो० ३७ अगोरे=रखवाली करें।

दो० ३८ गुन=गुण, तागा। खाँच=खींचता है।

दो० ३९ रावत=सामंत। मेरू=मेल। सिह मँजूसा=कथा है कि एक ब्राह्मण ने एक सिंह को पिँजड़े से निकाल दिया था। वह उसे खाने दौड़ा। दोनों में वाद-विवाद होने लगा। एक श्रगाल पंच हुआ उसने कहा—पहले सिंह पिँजड़े में चला जाय तो हम न्याय करें। सिंह पिंजड़े में चला गया। ब्राह्मण ने द्वार बंद कर दिया और अपना रास्ता लिया। सिंह अपने किए का फल पा गया। सिह छान अब गोन=सिंह अब गोन (रस्सी) से बँधा चाहता है।

दो० ४० निसरीं=निकलीं। रायमुनी=लाल पक्षी। सारँग=धनुष।

दो० ४१ कहँ केतकी...बासी=वह केतकी यहाँ कहाँ है (अर्थात् नहीं है) जिस पर भौंरे बसते हैं। पदारथ=

रत्न। हना ··परछाहीं = अर्जुन ने तेल में मछली की छाया देखकर रोहू मछली को बाण से मारा था और द्रौपदी से ब्याह किया था। सँधान = अचार। बूकहि बूक = मुट्ठी भर भर कर।

दो० ४२ खँडवानी = शरबत, रस। अरगजा = चन्दन। कुहँ, कुहँ = कुमकुम, केसर। थारहि = थाली में। घालि··· पागा = गले में पगड़ी डालकर, नम्रता तथा विनय-सूचक चेष्टा है। सीउ = शीतल, शांत। सुदिस्टि = कृपादृष्टि। माँड़ौ = एक प्रांत।

दो० ४३ भीति = दीवाल। लावा = लगाया। तरई = तारागण। परगासी = प्रकट किया, कहा। कित··· आव = चित्तौर में कहाँ आता है। जेहि = जिससे।

दो० ४४ सरेखी = चतुर। परस भा लोना = पारस का स्पर्श सा हो गया। रुख = शतरंज का रुख। रूख = सामना। भा शह मात = (१) शतरंज की बाजी हार गया, (२) पद्मिनी को देखकर बेसुध हो गया अथवा अपना हृदय हार गया। झाँपा = ढाँपा, छिपा। लागि सोपारी = सुपाड़ी लगी। कभी कभी सुपाड़ी खाने से अधिक गर्मी होती है और मनुष्य बेसुध हो जाता है। इसे सुपाड़ी लगना कहते हैं। पौढ़ावहिं = सुलाते हैं।

दो० ४५ बिसमयऊ = विस्मय हुआ। अँतरपट = पर्दा। पानि न होई = हाथों में नहीं आता था। करन्ह अहा = हाथों में था। लौकि गई = दिखाई पड़ गई। पतीजु = पतियाओ, विश्वास करो।

दो० ४६ चित कै चित्र = चित्त में अपना चित्र पैठाकर। जोरू = जोड़ा। आँकुस = अंकुश। नाग = साँप (बाल की लटें)। महाउत = हाथीवान। मिरिग = मृग, यहाँ नयनों से तात्पर्य्य है। गवन फिरि किया = फिरकर चली गई। ससि भा

नाग=जब लौटकर चली तब शशि (मुख) के स्थान पर नाग (वेणी) मेरे सम्मुख हो गया। सूर भा दिया=उस नाग (वेणी) को देखते ही सूर्य्य (बादशाह) दीपक के समान तेजहीन हो गया (ऐसा कहा जाता है कि साँप के सामने दीपक की लौ झिलमिलाने लगती है)। उचका=कूदा, ऊपर उठा। हेरत=ढूँढ़ते हुए, देखते ही। आछत=है, अस्तित्व है। असाध=असाध्य। यह तन··· सकै न=यह शरीर पंख लगाकर क्यों नहीं उड़ जाता।

दो० ४७ निसचै=निश्चय। बेधिया=अंकुश। दिया चित भयऊ=उस नागिन के सामने तुम्हारा चित्त दिए के समान तेजहीन हो गया। अब सोई मति कीज=अब वही विचार कीजिए। रस लीज=रस लीजिए।

दो० ४८ मीत पै=मित्र से। अगाह=आगे, पहले से। अगूठी=घेरा। माछू=मत्स्य। काछू=कच्छप। चीत=चेतता है, विचारता है। दोह=द्रोह। चीत सामि कै दोह=जिसके चित्त में स्वामी का द्रोह होता है।

दो० ४९ साँकर श्रृंखला। मँजूषा=पिंजड़ा, कैदखाना। ऐस··दुहेला–शत्रु को भी ऐसा दुःख न हो (जैसा दुःख राजा को हुआ)। बखाना=चर्चा, हाल। खूँदा=कूदा। मूँदा=बंद किया। मीन=मत्स्यावतार। पंडव=पांडव। अथवा=अस्त हुआ।

दो० ५० निचिंत=निश्चिंत। छाए=रहे। निबहुर=वह स्थान जहाँ जाकर कोई न लौटे। लेजुरि (रज्जु)= रस्सी। ढारै=ढालै, गिरावे।

दो० ५१ नागा=नागमति। पलुहै=पल्लवित हो। तचा= तप्त, दुखी। नाह=नाथ।

(७) गोरा बादल खंड

दो० १ हिय-साल्लू = हृदय में सालनेवाला, खटकनेवाला। छर = छल। नेवरै = निपटे, पूरी हो। जोई = जोय, स्त्री। बिरिध = वृद्ध, बूढ़ी। बर = बल। कर बर छर = कल बल छल।

दो० २ खेरौरा = एक प्रकार की मिठाई। डाल = डला या बड़ा थाल। पैज = प्रतिज्ञा। बैस = बयस। बेवसाई = व्यवसाव, काम। हेरान = खो गया।

दो० ३ जोहन मोहन = देखते ही मोहनेवाला (मंत्र)। बरोठा = बैठक। लीन्हें = गोद में लेकर। सीपा = सीप से।

दो० ४ गोई = गोत्री, गोत्रवाली, संबंधी। गीउ तूरि = गला मरोड़कर। कंत = पति। कुहुकि = कूकभरकर।

दो० ५ सुठि = अच्छी तरह। रूप-डार = चाँदी का थाल। करमुखी = कलमुँही। जिसका मुख काला हो। आन (अन्य) = दूसरा। बैन = वचन, बकवाद, बक-बक।

दो० ६ खभारू = खँभार, शोक। कस = कैसे। सँकेती = समेटकर। और...सँकेती = उस हाथ से और वस्तु नहीं छुऊँगी जिस हाथ को एक बार समेट चुकी हूँ। ओहि...... दीठी = उस रत्नसेन-रूपी रत्न के स्पर्श से मेरा हाथ लाल हो गया है। जब हाथ पर मोती लेती हूँ, तब आँखों के तिल की छाया पड़ने पर वह मोती, जो हाथ के स्पर्श से लाल हो गया है, काले दागवाला हो जाता है और गुंजा के समान दिखाई पड़ता है। पारे = सके। करुवा = कड़ुवा। रूख = रूखा। सवाद = स्वाद।

दो० ७ रहसि = रहती है (तू)। कोवँर = कोमल। बैस = वयस। पौनारी = पद्मनाल। तमोरा = तांबूल। सँभार = चित्त को ठिकाने करना। बार = देरी।

दो० ८ उजार = उजाड़ । माढ़ी = मंच, मचिया । जामी = लगी ।

दो० ९ काहँाइ = क्रोध करता है । भँवर...परगटा = भंवर के हटने पर (वर्षा बीतने पर) हंस आते हैं । अर्थात् काले बालों के बाद सफेद बाल दिखाई देते है) छपान = छिपा । बिरासी = विलासी । परासी = भागेगी । बिरिध = वृद्धावस्था । बान = बाण । धनुक = टेढ़ा कमर ।

दो० १० खेरा = घर, बस्ती, स्थान । थर = स्थल, स्थान । सेवा = सेवा करते समय । पाछितासि = पछताएगा । लोना = सुंदर । कोप = कोंपल ।

दो० ११ रँग = भिखारी । राँचा = आसक्त हुआ । बाटा = रास्ता । दिढ़ = दृढ़ । सोहाग = सौभाग्य । सँवरा = स्मरण किया । हेरा = ढूँढ़ा ।

दो० १२ रसोई = भोजन । जेहि...होई = जिसमें दूसरा प्रकार न हो, जो एक ही प्रकार की हो । भरै न हीया = जो नहीं भरता, संतोष नहीं होता ।

दो० १३ मसि चढ़ावसि = कालिख पोतती है । कापर = कपड़ा । माखी = मक्खी । बिलाइ = विलीन हो, नष्ट हो ।

दो० १४ मसि = दुष्ट, बुरा । मुद्रा = मोहर । भँवाहीं = भ्रमते हैं । केसहि = केश में । उरेही = उल्लिखित । मसि बिनु...देही = बिना मिस्सी के दाँत मुख में अच्छे नहीं लगते । पिंड = शरीर । बिसरि गा = विस्मृत हो जायगा ।

दो० १५ पंकज......फेरी = कमलनयनी ने भौंहें टेढ़ी कीं । दुःख भरा...केसा = शरीर में जितने रोएँ या बाल नहीं हैं उससे अधिक शरीर में दुःख भरा है । बेसा = वेश्या । हरुवा =

हलका। सोन नदी...हरुवा = महाभारत में शिला नाम की एक ऐसी नदी का उल्लेख है जिसमें कोई हलकी चीज डाल दी जाय तो डूब जाती है और पत्थर हो जाती है। फेरत नैन = इशारा करते ही। भइ...कूटीं = कुटनी को खूब पीटा।

दो० १६ छाला = फफोले। सोनवानी = स्वर्ण के वर्णवाली। बार = द्वार।

दो० १७ पारथ = अर्जुन। बेहरा = फटा, विदीर्ण हुआ। मुकरावौं = मुक्त कराऊँ। गवनब = जाऊँगी।

दो० १८ पसीजे (प्रस्वेद) = दयार्द्र हुए। रुहिर = रुधिर। कोहाने = क्रोधित हुए। निआन = निदान, अंत में। पलानि = जीन। अँकूरू = अंकुर। ससहर (शशधर) = चंद्रमा।

दो० १९ भुवारा = भुवाल, राजा। आँके = गिने जाते हो। भ्रम = प्रतिष्ठा।

दो० २० बीरा लीन्हा = बीड़ा उठाया, प्रण किया। बर = बल मसि = अंधकार। जसोवै = यशोदा। पाया = पैर। बारा = पुत्र। जुझारा = युद्ध।

दो० २१ आदि = केवल, सिर्फ। सिंघेला = सिंह का बच्चा। सँकरे = सँकीर्ण अवस्था में। ढार = ढाल। भारा = भाला छोरौं = छुड़ाऊँ।

दो० २२ गवन = गौना। फेंट = फेंटा, कमर में बँधा डुपट्टा।

दो० २३ पेलौं = ठेल दूँ, लात मार दूँ। पुरुष...काछू = जिस प्रकार हाथी का निकला दाँत भीतर नहीं पैठ सकता उसी प्रकार पुरुष का वचन लौट नहीं सकता, पुरुष का वचन कछुए का गला नहीं है कि जो क्षण क्षण बाहर भीतर होता रहे।

दो० २४ करुवाने = कड़ुवाने। जिउ काँधा = जी को कंधे पर रखकर अर्थात् प्राणों को हथेली पर रखकर। मतैं =

सलाह करते हैं। छर = छल। वर = बल। आँट = आँटे, पार पा सके।

दो० २५ चंडोल = पालकी। संजोइल = सजाकर। बैठ लोहार...भानू = इसे सूर्य्य भी नहीं जानता था कि उसके भीतर लोहार बैठा था। ओल = जमानत। तुरी = तुरंग, घोड़े।

दो० २६ सौंपना = देखरेख में, निरीक्षण में। अगमना = आगे। अँकोरा = घूस, रिशवत। किल्ली = कुंजी। स्यो = साथ।

दो० २८ जाइ एक घरी = एक घड़ी के लिए जाय। छूँछी... भरी = जो घड़ा खाली था उसे ईश्वर ने फिर से भरा अर्थात् अच्छी घड़ी आई। छूँछि = खाली। खाँड़ै = खड्ग। तीख = तेज। गगन सिर लगा = आकाश तक कूदा। जो...सँभारा = जो जान पर खेलकर तलवार उठाता है। छर कै...जाहिं = जिनसे छल किया गया था वे उलटे छलकर जा रहे हैं।

दो० २९ गोइ लेउ जाऊ = चौगान (पोलो) के खेल में बल्ले से गेंद निकाल ले जाना। गोइ = गेंद।

दो० ३० परति...कारी = अंधकार होता जाता है।

दो० ३१ हाँका = ललकारा। सोहिल = एक तारा जिसे अगस्त्य कहते हैं। यह वर्षा के अंत में उगता है। डुंगवै (दुर्ग) = किला, धुस्सा। जमकातर = यवन-समूह, राक्षस। मेंड़ = बाँध। टेकौं = रोकूँ। बेंड़ा = आड़ा, तीखा, टेढ़ा।

दो० ३२ बान = बाण। बादी = दुश्मन, शत्रु। हरद्वानी = स्थान-विशेष की बनी (तलवार)। उठौनी = धावा। स्यों = सहित। बखतर = कवच। कूँड़ = टोप।

दो० ३३ बगमेल = हाथों हाथ की लड़ाई। भारत = युद्ध।

दो० ३४ ठटा = समूह। करवारू = करवाल, तलवार। लावा = लगाया। धूका = ढुका, मुका।

दो० ३५ छेका = घेर लिया। गाजा = गर्जा। बाजा = लड़ा। खसी = गिरी।

दो० ३६ निहाऊ = निहाई।

दो० ३७ झूरी = उदास। आरति = भेंट।

दो० ३८ परसि = छूकर। तुरय...दाब = बादल के घोड़े के पैर सहलाये।

दो० ३९ साल्ह = दुःख। पेखा = देखा। नेवरै = निपटै।

दो० ४० एकौझा = अकेले, एकाएकी। भारा = भाला। मँझवार = रास्ते में।

दो० ४१ साँटी = कोड़ा, छड़ी। नेगी = नेग पानेवाले।

दो० ४२ पटोरी = वस्त्र। छहरावौं = छितराऊँ, बिखराउँ।

दो० ४३ अगूता = आगे, सामने। चाहहिं सूता = सोना चाहती हैं।

दो० ४४ सर = चिता। पौढ़ीं = लेटीं। सहगवन = सती। अखारा = सभा में। पिरथिमा = पृथ्वी, संसार। जौहर भईं = सती हो गईं, जल गईं। भए संग्राम = लड़ाई में मरे। चूरा = चूर्ण किया। भा इसलाम = मुसलमानी राज्य हुआ।

दो० ४५ जोरी = जोड़ी। लेई = वह पदार्थ जिससे जोड़ा जाता है, लासा। भेइ = भिगोई। हम्ह = मुझे। सँवरै = याद करेगा। दुइ बोल = दो बार, दो शब्द।